सत्यसुकृत, आदि अदली, अजर, अचिन्त पुरुष, मुनीन्द्र, करुणामय, कबीर, सुरति योग, संतायन, धनी धर्मदास, चूरामणिनाम, सुदर्शन नाम, कुलपति नाम, प्रबोध गुरुबालापीर, केवल नाम, अमोल नाम, सुरतिसनेही नाम, हक्क नाम, पाकनाम, प्रकट नाम, धीरज नाम, उग्रनाम, दया नाम की वंश व्यालीसकी दया

★

अथ श्रीबोधसागरे

श्वासगुञ्जार प्रारम्भः

★

द्वात्रिंशस्तरंगः

चौपाई

कहै कबीर सत्य प्रकाशा । श्रोता सुरति धनी धर्मदासा ॥
सत्य सार सुकृत गुण गायो । अविचल बाह अछै पद पायो ॥
संशय रहित सदा सो गाऊँ । शीलरूप सब हिमकर नाऊँ ॥
करै कुलाहल हंस उजागर । मोह रहित सब सुखके सागर ॥

तेहि पुर जरा मरण भ्रम नाहीं। मन विकार इंद्री नहिं ताहीं ॥
सत्य लोक हंसन सुख होई। सो सुख यहां न जाने कोई ॥
जाने सो जो उहां रहाई। ईहां आय कहै समुझाई ॥
आवत जात बार नहिं लावे। उहांकी चाल सोई यहां लावे ॥
जो समझे सोइ उतरे पारा। बिन समझे सब यमके चारा ॥

समय–अमरलोककी महिमा, सत्य शब्द उपदेश।
हंस हेतु सो वरनो, छूटे यमकर देश ॥

चौपाई

अमरलोककी अबिगति बानी। धरमदास मैं कहूँ बखानी ॥
जो समझे सो उतरे पारा। बिन समझे सब यमके चारा ॥
प्रथम शरण सतगुरु गुण गाऊं। अक्षरभेद सकल सुधि पाऊं ॥
सत्यलोक कर भाव अपारा। सो भवसागर करे पसारा ॥
भाषों अग्र अग्रकी बानी। भाषौं द्वीप जहां लगि खानी ॥
भाषों पुरुष पुरुषकी काया। भाषों अभी अमान अमाया ॥
भाषों पुरुष लोककी बानी। भाषों सबै सहज सहिदानी ॥
जो काया प्रभु आप सँवारा। सो समुझाइ कहो व्यवहारा ॥
अमर तार अखण्डित बानी। श्वासा धार सार सहिदानी ॥
जबही क्या प्रभु आप सुधारा। कहौं विचारि तासु व्यवहारा ॥
जेतिक श्वासा पुरुषकी देहा। तार तार कर कहों सनेहा ॥
जेतिक वचन पुरुष उच्चारा। तेइ तेइ वचन नाम अधिकारा ॥
श्वास पारस आदि निरबाना। सोरह सुतकी नाल बखाना ॥

समय-पांच अमीकी देह धरि, प्रकटी ज्योति अपार।
सुरति संग निहतत्त्व पुर, पुरुष होत श्वास गुंजार ॥

धर्मदास वचन–चौपाई

हाथ जोरिके टेकेउ पाऊं। साहब कहौ तहँवाके भाऊ ॥

कहौ लोक कर प्रकट बिचारा। जहाँलौं दीपहिं कर विस्तारा॥
बरनौं द्वीप गुप्त अनुसारा। बरनौं जहाँ लगि सकल पसारा॥
वरनौं सोरह सुतकर भाऊ। तीन शक्ति कैसे निरमाऊ॥
पुरुष श्वाँस जेता अनुसारा। ताकर कहौं सकल विस्तारा॥
केहि विधि सोरह सुत प्रकाशा। केहि केहि कहां रही बासा॥
कहां विस्तारि सकल अस्थाना। सत्यलोक और यमके थाना॥
कैसे आदि अन्त प्रभु कीन्हा। कैसे रचा देहकर चीन्हा॥
कैसे भये निरंजन राया। कैसे तीन लोक निरमाया॥
कैसे उपजन विनशन कीन्हा। काह जानि बाजीयम दीन्हा॥
कैसे इन्द्री देह बनाई। कैसे जीव परा वसि आई॥
कैसे जीव अपनपौ दरसे। कैसे जीव पुरुष पग परसे॥

समय–काया मध्ये श्वास है, श्वासा मध्ये सार।
सार शब्द विचारिके, साहब कहो सुधार॥

सतगुरु वचन चौपाई

धर्मदास जो पूछेउ आई। आदि अन्त सब कहौं बुझाई॥
कहौं लोक लोककी बानी। कहौं पुरुष सुतकी उतपानी॥
कहौं संदेश दया करि तोही। मुक्ति जान जो पूछेउ मोही॥
सुनहुँ सन्देश आदि निरबाना। जाके सुनत काल छे माना॥
सुमिरहु आदिपुरुष दरबारा। सुमिरत आप हंस होय पारा॥

समय–तीनलोकके भीतरे, रोकि रह्यो यमद्वार।
वेद शास्त्र अगुवा कियो, मोह्यो सब संसार॥

चौपाई

धर्मदास चित चेतहु जानी। कहौं बुझाय अगरकी बानी॥
पुरुष अजावन रहा जो देहा। तत्त्व बिहीन सुरति सनेहा॥

१–कही बुझाइ भेद समुझाई।

चारि करी सिंहासन जोरी । पाँचयें अचिंत आप अंजोरी ॥
चारि करी चारिउ परवाना । शक्ती भीतर वह अकुलाना ॥
समय–करि करि महा परिमल, बाससुवासकी खानि ।
तेज करी जो प्रगट भइ, तामहँ आइ समानि ॥

चौपाई

पुरुष अचिंत चिन्ता जब कीन्हा । उपज्यो सुरति शब्दको चीन्हा ॥
रहे गुप्त प्रकट भई काया । श्वासा सारशब्द निरमाया ॥
शब्दहिते है पुरुष अस्थूला । शब्दहि मय है सबको मूला ॥
शब्दहिते बहु शब्द उचारा । शब्दै शब्द भया उजियारा ॥
शब्दहिते भव सकल पसारा । सोइ शब्द जिवके रखवारा ॥
प्रथमशब्द भया अनुसारा । नीहतत्त्व एक कमल सुधारा ॥
नीहतत्त्वपर आसन कीन्हा । रचना रची सकल तब लीन्हाँ ॥
रच्यौ पुहुप द्वीप मनिभारी । सहस अठासी द्वीप सुधारी ॥
अक्षै वृक्ष एक राशि बनाई । अग्रबास तहाँ रही समाई ॥
समय–पेड़ पात निज फूल महँ, प्रगटी बास अनूप ।
पारस निहतत्त्वहि पुरुष, सुरति हंसको रूप ॥

चौपाई

जब पारस सुरति भये स्थाना । अगर प्रताप निमिष उरआना ॥
पुरुष प्रसन्न नाम उच्चारा । श्वासापर सब रचनि सुधारा ॥
श्वासा सार शब्द गुञ्जारा । पांच अमीको भयो विस्तारा ॥
पांच अमीको जो विस्तारा । ताहि अमी सब लोक सुधारा ॥
श्वासा पुहुप अगरकी खानी । सोरह सुतु भये उतपानी ॥
पांच अमी साहबके अंगा । पांच तत्त्व समरत्थ प्रसङ्गा ॥
श्वासा स्नेह सबै उपजाया । बानी बानी वरन बनाया ॥
सत्यलोक सबही को मूला । भयऊ सत्य सो सब अस्थूला ॥

श्वासासार सत्य कर भाऊँ । अभी आदि उपजी तेहि नाऊँ)॥
(सत्यसार श्वासा संभारी । अमी आदि पारस तहँ धारी ॥
श्वासा आदि सुरङ्ग बखाना । रंग अमीकर भा बंधाना ॥
श्वासा अजर नाम अनुमाना । प्रकटी अमी अजर सुजना ॥
अदल नाम श्वासा परकाशा । उपजी अमी अमान सुवासा ॥
स्वासा निरनै भ्या अनुसारा । अधर अमीका भा विस्तारा ॥
श्वासा पांच प्रकटि विस्तारा । पांच अमीकर भया पसारा ॥
पांच अमी पाँचों अधिकारा । पांचतत्व तेहि संग सुधारा ॥
पांच अमी सब लोक सुधारा । पांच तत्त्व धै गुणनुसारा ॥

समय–पांच अमीते पांच भए, पांच नाम अधिकार ।
सैन स्नेह उत्पन्न भई, अमी तत्त्व विस्तार ॥

चौपाई

सोरह श्वासा सार सहाया । सोरह सुतकी प्रकटी काया ॥
सोरह सुतकी सोरह नाला । एकते एक अमान रिसाला ॥
पुहुप नाम श्वासा अनुसारी । उपजे सुरति हंस पति भारी ॥
सुरति समानी प्रभुकी देहा । बाहर भीतर एक सनेहा ॥
पांच अमीकी प्रकटी देहा । सुरति कीन्ह तेहि मांहि सनेहा॥
जेतिक पुरुष स्वान निर्मांया । पांच अमीते सबकी काया ॥
पांचों अमी साहबके अंगा । नाल सात उपजी तेहि सङ्गा ॥
सात नालकर एके भाऊ । सातौं रहै पुरुषके ठाऊँ ॥
पुरुष सुरति कहँ अगुवा कीन्हा । सातौं नाल सौंपत तेहि दीना ॥
सातों नाल सुरति जब पाई । ताहि नेहमों रहे समाई ॥
क्षण बाहर क्षण भीतर आवै । देह विदेह दोऊ दरसावै ॥
अमरतार निःअक्षर कियेऊ । सोऊ पुरुष सुरति कह देऊ ॥

समय–अमर निरक्षर सङ्ग लिय, अर्ध ध्वजा फहराय ॥
पलटि समानि सुरति पुरुष, देहमें अक्षय छिपाय ॥

चौपाई

(सोलह सुतकी उत्पत्ति प्रकार)

सुरति नेह प्रभु इच्छा कीन्हाँ । सोरह सुत उपजावे लीन्हाँ ॥
सत्यनाम श्वासा अनुमाना । सुकृत अंश भये अगुआना ॥
दूजी श्वासा बाहेर आई । उपजे सहंत शून्य तिन्ह पाई ॥
तिसरी श्वासा पुहुप सनेही । तेहिते भई इमारी देही ॥
चौथी श्वासा तेज सनेहा । तेहिते भई धर्मकी देहा ॥
पांचइ श्वासा नाम खुमारी । उपजी कन्यां आदि कुमारी ॥
शील नाम स्वासा निरमयऊ । छठयें अंश सुजन जन भयऊ ॥
सतयें स्वासा नाम अनंगा । उपजे अंश भृगीमुनि संगा ॥
अठयें स्वासा नाम सुहेली । उपजे कूर्म शीस उर मेली ॥
नवयें स्वासा नाम सोहंगी । नाम ते उपजे सुत सरवंगी ॥
दसयें स्वासा नाम रसीला । जाते उपजी सरवन लीला ॥
ग्यरहें श्वासा नाम सुरंगा । सुत स्वाभावं उपजे तेहि संगा ॥
बरहें स्वासा नाम सुमाहां । भाँव नाम सुत उपजं ताहां ॥
तेरहें स्वासा अछय सुभाऊ । उपजे सुत विवेकं तेहि नाऊ ॥
चौदह स्वासा अमर बखाना । उपजे सुत संतोषं सुजाना ॥
पंद्रहे स्वासा प्रेम सनेहा । उपजी कदल ब्रह्मकी देहा ॥
*षोडशेस्वासा नामजलरङ्गी । उपजी दया पालन सङ्गी ॥
षोडश स्वासा षोडश बानी । उपजे भोग संतायन ज्ञानी ॥
सोलह स्वासा नाम बखाना । उपजे सोलह सुत निरवाना ॥
सोरह सुत कर एकै मूला । भिन्न भिन्न प्रगटी अस्थूला ॥
एके पिता एक व्यवहारा । सब जो रहिहैं पुरुष दरबारा ॥

---

* कई एक प्रतियोंमें इस चौपाईको ऐसा लिखा है की," सतरहे श्वासा अदत सुबानी" परन्तु षोडश, सुतकी उत्पत्ति वर्णन करते हुये सतरहवें की उत्पत्ति वर्णन असङ्गत जानकर यही शुद्ध जान पड़ा ।

एक पाँवते सेवा करहीं। पुरुष वचन शीशपर धरहीं ॥
सेवा करति रही लौलीना। पुरुषलोकते होहि ना मीना ॥

समय-सोरह सुतकी एक मूला, एकते एक अधीन।
कर जोर सेवा करैं, प्रेमभक्त लौलीन ॥

चौपाई

सेवा करत बहु दिन गयऊ। पुरुष अवाज अधरधुनि भयऊ॥
अर्ध अवाज भई जब बानी। निकसी अगर बासकी खानी ॥
सबतर लोक द्वीप रहि छाई। बिमलवास भरपूरि रहाई ॥
अगर वास सब हंसन पाई। निर्मलबास सदा सुखदाई ॥
पीअत अमृत सब अघाने। आपु आपु पुर सबैं सिधाने ॥
धर्मराय सेवा अधिकाने। सो सब तोहि कहौं सहिदाने ॥
छलके बचनपुरुष सो लीन्हाँ। पाछे दूंद लोक महँ कीन्हाँ ॥

समय-और सबै सुत बैठे, अपने अपने स्थान।
धरमरोष सबते कियो, ठाँम ठाँम बिगरान ॥

धर्मदास वचन-चौपाई

धर्मदास बिनवैं करजोरी। साहब मेटेहु संशय मोरी ॥
और सब सुत अछप छिपाने। धर्मराय कैसे बिगराने ॥
कैसे और सब सुत सब भारी। धर्मराय कैसे भये बिकारी ॥

सतगुरु वचन

धर्मदास सुनहूँ चितलाई। कहों सँदेश आदि समझाई ॥
जब प्रकटे प्रभु अमर तारा। निकसी अधर निरक्षर धारा ॥
भई अवाज अधरसे बानी। निकसी अगर बासकी खानी ॥
पारस परिमल महक बसाई। सोई परिमल सुरति दुराई ॥

अगर छिपाय आप महराखा । सुरति स्नेह मुख प्रकटी भाखा ॥
प्रथम पुरुष मुख भाषा आई । भाषा अग्र पारस निरमाई ॥
भाषा बचन भया अधिकारा । भाषहिते भा सकल विस्तारा ॥
भाषा वचन पुरुष उच्चारा । सो सब सत्यलोक व्यवहारा ॥
भाषा बोल पुरुष उच्चारा । सेवहु सत्यलोकके द्वारा ॥
श्वासा सार तार जोरि आना । अधर अमान ध्वजा फहराना ॥
भाषा स्वर बानी अनुमाना । श्वास सार तार जुरि आना ॥
निमिष माहिं अनेक संचारा । बचन समान श्वास गुञ्जारा ॥
नाव स्नेह शब्द मँझारा । (बचन समान श्वास गुञ्जारा)॥
श्वासा नेह देह भई जबहीं । भाषा सहज बचन भा तबहीं ॥

आगेकी उत्पत्ति प्रकार

प्रथम श्वासकी निकसी खानी । उपजे सुत सुकृत सम आनी ॥
निमिषनेह प्रसन्न सुधारे । नाममूल टकसार उचारे ॥
भो बिस्तार निमेश एक गयऊ । " " " ॥
मूलगुप्त मस्तक नहिं देखा । आदि नाम अमरघर लेखा ॥
पेडके गहे मूल धनु गाजा । सोई मूल फूल फल लागा ॥
पेड़हिं गये मूल औ शाखा । मूल मिले तबहि रचि शाखा ॥
गुप्त मूलते प्रकटी शाखा । पल्लव मूल पड़े गहि राखा ॥
पेड़ देखि पल्लव फैलावै । पल्लव फैले अन्त नहिं पावै ॥
पल्लव चढ़े पेड़ चित राखा । मिले मूल तब फलरस चाखा ॥
आदि अन्त दुइ पेड़ समाना । आपहि राखा आप पहिचान ॥
जागि सुरति पुनि पेड़ निहारा । फलरसि चाखी बीजगहि डारा ॥
बीजाते सोई फल होई । फल रस लेइ मूल तजि छाई ॥
जागि सुरति सपन मिटगयेऊ । दुई चितमेटि एकचित भयेऊ ॥

दूजी श्वासा प्रभुकी देहा। उपजे सहज सुख नेहा ॥
तिसरी श्वासा फूल सनेही। जाते भई हमारी देही ॥
देह माँहि द्वै रहे विदेही। देह मन भये ज्ञान रस देही ॥
कायामें काया रही वासा। सब चौथी श्वासा परकाशा ॥
काया अविहर अविहर वासा। ,, ,, ,,
चौथी श्वासा निकरे चाहा। तब चिंता उपजी मनमाहा ॥
चिंता प्रकट भई दिल जबहीं। आपते आप भुलाने तबहीं ॥
आपु शरीर आपु तब झाका। बिमलप्रकाश उदित तन ताका॥
कायारूप भई उजियारी। निर्मलदेह बिमल तन भारी ॥
बिमल प्रकाश कीर्ती जब देखा। बर्णत बनै न ताकर लेखा ॥
बिमल प्रकाश किरणजब देखा। ,, ,, ,,
कला अनंत अंत नहीं पावै। बरणत जिह्वा लक्षण आवै ॥
देखत रूप लीला अधिकारा। आप आपनपौ कीन्ह बिचारा॥
कमलकरि महँ भा उजियारा। देखा आदि अंत विस्तारा ॥
आपु बरन सब देखा जबहीं। दुबिधा रूप झांई भइ तबहीं ॥
कमल झांकी प्रभु देखा जबहीं। हमरे रूपको दो सर अबहीं ॥
इतना कहत बार नहीं लाये। निकसि कमलते बाहर आये॥
छाँडी कमल प्रभु भये निनारा। तबहीं कमल भया अंधियारा॥
कमल झाँकि देख्यो सब न्यारा। भये तिमिर तनतेज अपारा ॥
अँधकार प्रभु देखा जबहीं। काया ज्योति मलिन भइ तबहीं॥
निमिषि एकमें संशय आवै। निमिषि एक आनंद जनावै ॥
विस्मय हर्ष दोउ एक ठाऊँ। एक पुरुषकर दोउ सुभाऊँ ॥
आपुते आय भया अतिचारा। तेहि अवसर प्रभु वचन उचारा ॥
उठि अब जो शब्द सतभाऊ। कमलमध्य कस शून्य रहाऊ ॥
घटही वचन पुरुष संधाना। तब चौथी श्वासा बंधाना ॥

तेज पुँज भौ गर्भ शरीरा । फूंकी नालदेखा बल वीरा ॥
कमल नाल धरि फूंका जबही । चौथी श्वासा निकसी तबही ॥
फूंका कमल तेजके नेहा । चला प्रसेव पुरुषकी देहा ॥
फूंकत कमल बार नहिं लागा । भय उजियार तिमिर सब भागा ॥
कारण काल पट यहँ धोका । दुई चित मूल तेजमह रोका ॥
चौथी श्वासा विषयी सनेही । मोह विकार धर्मकी देही ॥
मोह विकार तिमिर अधिकारा । ता सँग भयउ धर्म औतारा ॥
तिसरी श्वासा गुप्तहि राखा । तासो जोर निरञ्जन भाखा ॥
फूँकत कमल तेज गरि गयऊ । तेहिते काल ज्योति धरि भयऊ ॥
महा बलि देह धरिके बैठा । जानो धर्महीं हौं जेठा ॥
तेज लगन श्वासा अनुसारा । ताते धर्मराय बरियारा ॥
तेजतिमिर संग शून्य निवासा । सबतर भयो काल परकाशा ॥

समय–आसा धरे बहुत दिन बीते, प्रेम भक्ति लौलीन ।
आश धरे बहुतयुग गये, भक्तिभाव आधीन ॥

(ज्योति तहाँ लगिज्वालतेभाखा । तेहि ते नाम निरञ्जन राखा) ॥
निराकार आकार धराये । जोति काल बहुनाम कहाये ॥
चौदह द्वार काल जो भाखे । सुनि सो सबै नाम मन राखे ॥
सांक्रित अण्ड भयो प्रचंडा । फूटत अण्ड भयो बहु खण्डा ॥
चौदह बुन्द अमि ढरि गयऊ । चौदह अंश ताहिते भयऊ ॥
चौदह पौरिया ढरि बैठारा । इन चौदह बहु ज्ञानपसारा ॥
आपसमान सबै रचि राखे । चौदह कोटि ज्ञान तिन भाखे ॥
चौदह अंस धरम तहँ पाये । ते चौदह विद्या तहँ पाये ॥
वही चौदह अगम अपारा । तापर काल धरम बटपारा ॥
धरम समाधि चितही यमधारा । चौदह मोह को तनवारा ॥

ताकी कला कहै को पारा। जेहिके सुतकोटिन उजियारा ॥
कोटिन कला करै बहु भारी। आपहि पुरुष आपही नारी ॥
आपहि वेद आपही बानी। आपहि कोटिन ज्ञानबखानी ॥
आप अजर आवै गाइ कहावै। मूल नाम गहि धोख लगावै ॥
नाना ज्ञान कथे बहु बानी। प्रकटचोआदि आपगुणजानी ॥
कहँ लगि कहो ज्ञानके भाऊ। बहुत काल बहु नाम धराऊ ॥
सुरति सरोतर जागे नाहीं। मनपथ पवन चञ्चला ताहीं ॥

एक पाव सन्मुख खडे, कर जोरे लौलीन।
एक पाव सन्मुख खडे, कर जोरे आधीन ॥

धर्मदास वचन—चौपाई

धर्मदास विनवै चितलाई। समरथ मोहि कहो समुझाई ॥
(धरमदास विनवहि कर जोरी। दया करो प्रभु बन्दी छोरी ॥
धर्मराइ उत्पति जस पाई। ,, ,, ,, ॥
ऊपजै तस भये कसाई। उपज्यो चित चंचल दुखदाई ॥
पुरुष तेज सम शून्य संचारा। ता संग भया धर्म औतारा ॥
शील विकार सहित तन पाई। प्रथमें भक्ति दूजे अन्याई ॥
भक्ति कियसिजब रहा अकेला। अघके संग भया अपेला ॥
सो अघ उन कैसे पाई। केहि विधिपुरुषताहिनिरमाई ॥
साहब कहौ भेद समुझाई। कैसे कन्या पुरुष बनाई ॥
कैसे धर्मराय तेहि पाई। तीन भेद तुम कहो गुसांई ॥
कहौ बिचारि दोऊ कर भाऊ। दुइ कर जोरिके वन्दो पाऊ ॥

सतगुरु वचन

धर्मदास मैं तुम्हे लखावो। आदि अन्त सब भेदबताओ ॥
चौथी श्वासा संग अधिकारी। शून्यते जग भये उजियारी ॥
पुरुष कमलपर बैठे आई। गई गर्म उपजी शितलाई ॥

पुरुष कमलपर बैठे जबहीं । परिमल उदित भयातन तबही॥
शीतल पवन सोहावन खानी । मूल कमलपर आसन ठानी ॥
सिंहासनपर सत्य विराजे । पार सनेह देह महँ गाजे ॥
पारस तेज भया तन माही । पँचई श्वासा उपजी ताही ॥
उपजन श्वासा देह निहारा । तन पसेव भइ मैल निनारा ॥
काया मैल पुरुष जब जाना । मीजी मैल अबला बलठाना ॥
गएउ तेज भा अबल शरीरा । पाछे भई स्वास गंभीरा ॥
तेहि स्वासा सँग पारस भारी । कायाते मथि मैल निकारी ॥
तनते मैल काढि प्रभु लीन्हा । सोई मैल रचि पुत्री कीन्हा ॥
करी पुत्री कर ऊपर लीन्हा । उपज्यो प्रेम सहजको चीन्हा ॥
भई पुत्री प्रभु देखा जबहीं । सुरति कीन्ह पारसके तबहीं ॥
निर्मल पारस श्वासा पाँचा । रहा सँभारा मैलकी बाँचा ॥
आप मैलते श्वासा कीन्हाँ । ता ऊपर बहुरंग जो दीन्हाँ ॥
देके रंग बरन सब फेरा । भीतर मैल मोह मद घेरा ॥
ऊपर शोभा रंग बनावा । भीतर लाल रंग तेहि छावा ॥
पांच अमीकर पांच सुभाऊ । पाँचतत्त्व तेहि संग बनाऊ ॥
पांच अमीते पुरुष शरीरा । ताते पांच तत्त्व भए धीरा ॥
पांच अमी ते तत्त्व बनावा । पांच अमी तेहिसंगनिरमावा ॥
पांच तत्त्व पांचो व्यवहारा । तेहिते भयउ सकल विस्तारा ॥
पुरुष मेलते पुत्री कीन्हाँ । पांच तत्त्व तेहि भीतर दीन्हाँ ॥
आप सुरती ते पुत्री कीन्हां । ,, ,, ,, ॥
भीतर बाहर तत्त्व पसारा । पांचों तत्त्व रंग अधिकारा ॥
पांच रंग तत्त्वकी धारा । चौथ तत्त्व रंग बहु धारा ॥
पांच तत्त्व पांचों रंग भारी । पांचों रंगते कला पसारी ॥
तत्त्व रंगते लीला धारी । पांच तत्त्व पांचों रंग धारी ॥

तत्व रंग बहु लीला धारी। पुत्री बहुत विचित्र संवारी॥
तासु कला अनंत पसारी। ताते बहुत भई विस्तारी॥
वरणि न जाय रूप उजियारी। सुन धर्मनि मैं कहौं विचारी॥
काल अनंत प्रभु पुत्री कीन्हा। पारस सार ताहि मैं दीन्हा॥
उत्पति पारस पुत्री पावा। प्रकटी कला अनंत सुभावा॥
नखशिख देहसुधा प्रभु कीन्हां। पँचई श्वासा भीतर दीन्हां॥
जब श्वासा काया महँ आई। प्रकटी ज्योति जगामग झाई॥
अजब अङ्ग बना बहु रंगा। पारस सार ताहि के संगा॥
निर्मल उदित ताहि सो दंता। चमकै बिजुली कला अनंता॥
तत्त्व रंगकी उठै तरंगा। शोभा विशद मनोहर संगा॥
पँचई श्वास जब बाहर कीन्हां। उत्पन पारस ता संग दीन्हां॥
श्वासा परस मिलि भये एका। शोभा वरन रूप रस ठेका॥
उपजी कन्या कला अपारा। रूप अनूप भया उजियारा॥
जब कन्याप्रभु उत्पन कीन्हाँ। पाँचो श्वासा तासङ्ग दीन्हाँ॥
ता श्वासामह पारस भारी। पांचतत्त्व सङ्ग देह सँवारी॥
उपजी कन्या अगम स्वभावा। अर्द्धांगी कहि पुरुष बुलावा॥
आठों अङ्ग बना निरवाना। शोभा सुरति रूप सुख साना॥
जब कन्या प्रभु देखा हेरी। कला अनंत रूपकी ढेरी॥
देखि रूप चितहर्षित कीन्हा। उत्पति पारस ता संग दीन्हा॥
जाने शब्द मूल रहि वासा। सुरतिनिरतिकीन्हांतहांपासा॥
पुरुष रचा जब आपु शरीरा। उपजी सुरति निरति गंभीरा॥
कायाके दलके व्यवहारा। जो चाही सो सबही सुधारा॥
दहिने अंग तेज कर दाऊ। बाये शीतल सबै सुधाऊ॥
मध्यम पुरुष सुरति अंकूरा। ताहि सुरति संग पारस पूरा॥
ताही दिन तीनों गुण ठयऊ। इंगलापिंगलासुखमनकियऊ॥

तीनों घर कर तीन सुभाऊ । शीतल तेज सत्यकर भाऊ ॥
अमी अग्रभा तेज शरीरा । उपजे चंद्र सूर दोऊ वीरा ॥
अग्रतेज औ सत्य सुरंगा । तीन शक्ति उपजी तेहि संगा ॥
कला अनंता शक्तिके पासा । लीला बहुत विचित्र प्रकाशा ॥
तिनहु संग अहै द्वौ वीरा । इक शीतल इक तेज शरीरा ॥
तीनो शक्ति अंग दोउ वीरा । काया मथिकथि कहै कबीरा ॥
अभयहि शक्ति है चन्द्र सनेहा । इँगला नारी संग उरेहा ॥
उलँगनी शक्ति रहै सुख मरना । चैतन शक्ती सूर्य प्रमाना ॥
सबसे मध्य जहाँ सुरति तरंगा । सुरति निरति कायाके संगा ॥
नख शिख ज्योति विराजे अंगा । शोभा विशद मनोहर सँगा ॥
पांचतत्व तिया शक्ती राजै । ताहि सङ्ग दोय वीर विराजै ॥
तत्त्वरँग शक्ती न घर कीन्हां । तेहि महँ उपजनि पारस दीन्हां ॥
उपजनि पारस भा परसंगा । उपजी ज्योति कला बहुरँगा ॥
पँचई श्वासा देह समाई । उपजी रूपकला अधिकाई ॥
जागी देह अखंडित अँगा । शोभित भई कला प्रसँगा ॥
उपजनि अँश पुरुषके संगा । भाखों भेद कला बहु रँगा ॥
जब कायामो आई श्वासा । जागि ज्योति पुहुप प्रकाशा ॥
उपजा रूप अखँडित बानी । बोले बचन पुहुपकी खानी ॥
मधुर बचन और लीला धारी । देखि रूप तब पुरुष दुलारी ॥
हुये मधुर धुनि लीला धारी । वचनरूप लखि आप दुलारी ॥

समय-पांचतत्त्वतिये शक्ती सँग, चन्द्र सूर्य दोउ वीर ।
तीनों घर श्वासा रमें, बाहर भीतर तीर ॥

चौपाई

उपजी रूप रंग की खानी । बोले अमी विरहकी बानी ॥
उपजी कन्या कला अनूपा । पुरुष उत्पन औ पुरुष स्वरूपा ॥

जेहि पारस सब उत्पत्ति कीन्हाँ । सो पारस कन्या कहँ दीन्हा ॥
पारस हाथ महा बल जाना । तब कन्या कहभा अभिमाना ॥
उपजा रंग रोस गंभीरा । बैठी अमी सरोवर तीरा ॥
यहि विधि सोरह सुतनिरमाया । भिन्न भिन्न अस्थान बनाया ॥
जेहिको जेता तन विस्तारा । तेहिको तैसा लोक सुधारा ॥
काहुको लोक सत्ताइस दीन्हाँ । काहूको सात पांचदशचीन्हाँ ॥
काहू चौदह काहू बीशा । काहू सत्रह काहु उनीशा ॥
काहूके बारह पन्द्रह तीसा । काहू इकइस बाइस चौबीसा ॥
काहू छतीस बतीसहि भारी । दीन्हों वास भये अधिकारी ॥
सब कह दीन्हों लोक बनाई । आपु रहे प्रभु अछप छिपाई ॥
उत्पनि पारस पुत्रिहि दीन्हा । सौंपेउ तेज धर्म सों लीना ॥
ताते धर्म भये बली बंडा । बैठो सात द्वीप नौ खंडा ॥
जिहि विधि रचनापुरुष बनाई । तैसी कला धर्म निरमाई ॥
रचना रचि मनमें पछिताई । शून्य शरीर जीव कहँ पाई ॥
जीवन बिना जीव नहिं होई । रचि अस्थल बैठा मुख गोई ॥
जेहिंविधिरचनापुरुषहिकीन्हाँ । तैसहि धर्म रचा सब चीन्हाँ ॥
पुरुष समान रची अस्थाना । बैठि शून्यमें करे अनुमाना ॥
जेहि पारस प्रभु लोक बनाया । सो पारथ प्रभु कहाँ छुपाया ॥
सो पारस अब कहवाँ पाऊँ । जेहि पारसते जिव निरमाऊँ ॥
हेरत पारस आये तहवाँ । बैठि सरोवर कामिनि जहवाँ ॥
कामिनि धर्म भये एक ठाँऊ । अंकमिलाय कीन्हबहु भाऊ ॥
शील रंग रस कीन्ह मिलापा । धर्म रोष हो कीन्ह विलापा ॥
करै विलाप कला बहु भारी । मुख चतुराई हृदय विकारी ॥
कामिनसों कीन्हों व्यवहारा । उपजा रंग रूप रसधारा ॥
धर्म कहैं कामिनिसो बाता । गहे अंग चमकावै गाता ॥

कामिनि देह कामकी खानी । बोले मधुर बिरहकी बानी ॥
उपजा मोह महा मद भारी । कामिनि कामकला अनुसारी ॥
देखि कला अनुसार भुलाना । व्याकुल भये रंग अभिमाना ॥
कामिनि देखि धर्म अकुलाना । उपजा रंग रोष अभिमाना ॥
धर्म कहै कामिनिसों बानी । तोरे है पारस सहिदानी ॥
सो पारस अब तुमरे पासा । जाते पूजे मनकी आसा ॥
सो पारस देहू मोरे हाथा । तुमहू रहो हमारे साथा ॥
धर्मराय जब कही कुवानी । तब कामिनि चितशंकाआनी ॥
कामिनि कहै धर्मसों बानी । काहे धर्म होउ अज्ञानी ॥
हम तुम एक पुरुषकर कीन्हाँ । तुमकहँदीन्हसोहमहुकोदीन्हाँ ॥
हम लहुरे तुम जेठे भाई । हमसों कहा करहु अधिकाई ॥
,, ,, ,, । एके नाल कुमारग वानी ॥
बहनिहिं भाइहि होत कुबानी । आगे चलिहै यहि सहिदानी ॥
जब कामिनि कही असबानी । धर्मराय चित दुबिधा आनी ॥
कामिनि चलहु हमारे देशा । कहा करहु मानहु उपदेशा ॥
छल बल करि अपने पुरलावा । तहाँ आनिकै रारि बढावा ॥
धर्मराय कामिनसों बोला । शोभा सुरति अमीरस डोला ॥
निरखि नैन कामिनिसों बोलै । शक्ति अधीन बैन बहु खोलै ॥
सोलह शशि कला शशि पूरी । तीनों शक्ति कर छूरी ॥
नैन निरखि मूर्ति होय झांके । तत्व निःतत्व आप तनताके ॥
विधि लैलाइवधिकविधि बोले । निरखत अंग २ तनु डोले ॥
अंतरगति विधिविधिहिमनायो । कुमति हाथपरसाजनिआयो ॥
विधि वर दीन्ह बुन्दचुक आई । चितमकार एक रच्यो उपाई ॥
यहि पुर एक अचंभो ठयऊ । पारसको सुप्रताप जनयऊ ॥
इच्छा रूप हर्ष चित जागी । श्वेत सरोवर वार न लागी ॥

भूल्यो धरम चितहि अकुलाना । ऐसो सरवर मैं नहिं जाना ॥
अक्षयअयूनिविधि पारसयामा । कहा अचम्भो आनितुलाना ॥
देखो तेहि पारसको चीन्हाँ । जेहिते मानसरोवर कीन्हाँ ॥
शूर मलीन उदय शशि जोना । बानी बरन अंग तुअलोना ॥
जादिन पुरुष रचा तुअदेहा । तादिन मोहिं तोहिं जुरासनेहा ॥
मोहिं कारण तोहि पुरुषबनावा । तू कुलमोते अंग छिपावा ॥
तोहि कारण मैं रचना कीन्हाँ । रचिकेखानितोहि चित दीन्हाँ ॥
„ „ „ । मोहि कारणतोहिंरचनाकीन्हाँ॥
देहनात हमरे घर नाहीं । हम तुम रहे एक घर माहीं ॥
उत्पति पारस तुमरे पासा । जाते पूजे मनकी आसा ॥
देह सबै हम रचा बनाई । पारस दै तुम लेहु जियाई ॥
हम तुम खानि रची बहु बानी । जाते होय ना एकौ हानी ॥
जैसी रचना पुरुष प्रकाशा । तैसी रची लोक रहिवासा ॥
जीव सीव रचि खानि बनाई । जाते ज्योति ज्ञान फैलाई ॥
(जीव रची सब खानि बनाई । जागे ज्योति ज्ञान फैलाई) ॥
लाज सकुचि औ रची सगाई । बरण बिचारि छूत बिगराई ॥
ठांव ठांव रचि राखी आपा । माता पिता शोक संतापा ॥
श्वशुर भसुर औ भमित भाई । शिवशक्ती रचि पूजा लगाई ॥
„ „ „ । हंसन लाज भाव नात बँधाई ॥
रची अचार कपट विस्तारा । तीरथ व्रत प्रतिमा देवहारा ॥
„ „ „ । तीरथ व्रत औ नेम अचारा) ॥
वेद कितेब धरि फंद सँवारी । रची दीनों वोय पर्वत भाँरी ॥
हुओ दीन हुए राह चलाई । झगर करै रहै अरुझाई ॥
एक एकते रारि बढाई । मुक्तिपंथते रहे भुलाई ॥
दोउ दिन बाँधी मरजादा । रची बाद ममता औ स्वादा ॥

एहि विधि रची सकल दुनियाई । लोभ मोह लालच बरिआई ॥
रचिकै खानि करिय रजधानी । राज पाठ सिंहासन ठानी ॥
तुम आद्या अरु हम अभिमानी । बारह खण्ड छह लोकके बानी ॥
(तुम अंश हमही अविनाशी । बारह खण्ड छः लोकके बासी)॥
पाप पुण्य दोए रची अपारा । जाकहँ सेवै यह संसारा ॥
पाप पुण्य दृढ फन्दा होई । जामहँ अरुझि रहै सब कोई ॥
योग ज्ञान व्रत संयम पूजा । सोलहमहीं और नहिं दूजा ॥
रची क्षुधा मायादि विकारा । पुरुष लोकको मूँदिये द्वारा ॥
रची क्रोध माया विकरारा । पुरुष लोकको मुँद्यो द्वारा ॥
पुरुषलोक इहईं रचि लीजे । इकछत राज हमहि तुम कीजे ॥
तुमरे, संग है पारस सूरा । जाते होय सकल विधि पूरा ॥
जेहि ते लोक पुरुष प्रकाशा । सो पारस है तुमरे पासा ॥
सो पारस अब हमको देहू । रंग हमारा सबै तुम लेहू ॥
कामिनी कहे वचन बुद्धि धीरा । उपजेहु कालरूप बलवीरा ॥
जो जो वचन कहेउ तुम भाई । सो हमरे चित्त एक न आई ॥
पुरुष लोक कस मुदा हुदयारा । लेउ श्राप अपने शिरभारा ॥
जो छल हमते कीन्हहु भाई । तैसो छल तुम्ह भुगतहुं जाई ॥
पारस कामिनी धरा दुराई । हाथ मलै शिर धुनी पछताई ॥
हाथ मिजि छिन छिन पछिताई । कहे कामिनि धर्महि समुझाई ॥
कामिनि कहै कुबुद्धि समझाई । हम तुम चलहुँ पुरुष पहँ जाई ॥
बकसे पुरुष दयाकरि तोही । शीश नवायके लीन्हसि मोही ॥
बिन दीयें बरिआई लेहौं । पुरुष लोक पुनि जाए न पैहौं ॥
कामिनि कहा वचन परवाना । धर्मरायके भयो अभिमाना ॥
कामिनि तोरि बुद्धि है थोरी । अबना जाऊ पुरुषशकी खोरी ॥
पुरुषलोक इहईं रचि राखा । रच्यो बिचारि बुद्धि बलभाखा ॥

अब तौ पुरुषत्रास नहिं मोही । गहौं बांहको राखा तोही ॥
तैं कन्या का डहकसि मोही । रचा पुरुष मम कारण तोही ॥
(तैं कामिनि कठोर निर्मोही ।) „ „ „ ॥
पहिले वचन बिरहते बोली । लागी कठिन कामकी गोली ॥
काम सतावे निश दिन मोही । दे पारसकी लीलहुँ तोही ॥
कामिनि कहै धर्म सुनु बाता । चढि कालिमा तोहरे गाता ॥
हठ निग्रह कामिनि किहु ताही । धर्मराय पकरी तब बाँही ॥
गही बांह कामिनिकी जबही । काम बाण घट व्यापे तबही ॥
धर्मरोष कामिनिपर कीन्हाँ । गहिपगशीसलीलतेहि लीन्हाँ ॥
लीलत कामिनि शब्द उचारा । पुरुष २ करि कीन्ह पुकारा ॥
कामिनि पुरुष नामजब लीन्हाँ । आज्ञा पुरुष अंशही दीन्हाँ ॥
योगजीत आये तेहि वारा । सुर्त बान सो कालहि मारा ॥
पुरुष कोपि ताऊपर कीन्हा । कन्या उगलधर्मतब दीन्हाँ ॥
(उगली कन्या बाहेर आई ।) „ „ „ ॥
हाहाकार रोषके धावा । कामिनि पारस कहां चोरावा ॥
कामिनि कम्प देख विषधारा । पारस मानसरोवर डारा ॥
मानसरोवर झलतै अंगा । गयउ पताल जहाँ जलरंगा ॥
परीक्षा चार पारस परवाना । उपजी चारखान निरवाना ॥
एक परीक्षाते सरबर गयऊ । पारसके सम पारस ठयऊ ॥
दूजो अंश भयो निरबाना । शिला सिंध पर्वत परमाना ॥
रतन शिला ताहिकी धारा । सो पाजी वारे संचारा ॥
तीसर अंश नार प्रगटयऊ । अंशहि अंश चत्रगुन भयऊ ॥
चौथा अंश कामिनि अनुमाना । जाते स्वर्ग नर्क परवाना ॥
अंशहि अंश अंशते मानी । एक प्रती चौगुना उतपानी ॥
चार २ गुण गुणहि समाना । अंशते अंश चत्र परवाना ॥

पारस मानसरोवर माही । पारस बुद्धि आपही आहीं ॥
पारस कामी न बहुत दुरावे । सुर्त सनेह तहां फिर आवे ॥
पारस अंत नाहे ठहराई । बासरूप कामिनिसंग धाई ॥
कामिन कालपुरुष पद परसे । पारसनीर नेत्र मह दरसे ॥
नैन निरख मूरत अनुरागी । धर्म अंश कामिनितन लागी ॥
पारस अंश चितै नहिं डोले । बहुरि २ कामिनसों बोले ॥
पारस अंशघट रह्या छपाई । निकसी कन्या बाहर आई ॥
जेहि कारणकामिनि हठ कीना । पारस संग छान सो लीना ॥
उत्पत्ति पारस धर्म तब पावा । कन्या रही ताहिके ठाँवा ॥
जब लगि कन्या भइ सियानी । तब लगि धर्म रचीसब खानी ॥
खानि वानी रचि कीन पसारा । बेदवाद बहुमत विस्तारा ॥

दोहा-रचना रची लोककी, शशि घर रहा समाय ।
पुरुष नाम जानै नहीं, ताते लोक न जाय ॥
(रचा रची लोककी, नख सिख रहा समाइ ।)
पुरुष नाम जाने विना, सत्य लोक नहिं जाइ ॥)

चौपाई

पुरुष नाम ज्ञानी जो पावे । लोक दीप पलमाँहिं ढहावे ॥
पुरुष नाम जानै नहिं भेदा । रचै खानि चौरासी फन्दा ॥
" " " (चित चंचलऔअन्धअभेदा) ॥
दुख सुख सबै रची बहुभांती । जरा मरण पूजा औ पाती ॥
रचि सब खानिबैठि अभिमानी । तब लगि पुत्री भई सयानी ॥
उपजा जोबन रसको भावा । तब कन्या कहँ विरह सतावा ॥
कामिनी कहे धर्मसो बानी । हमतो तुमरे हाथ बिकानी ॥
सूर्त डोला एके पारस लीन्हा । मदन भुवङ्गमके वसि कीन्हा ॥
जोबन विरह महामद गाजे । बिनु संयोग गर्भ नहिं छाजे ॥

मोह महाझर बरषे लागी । मन समाध कामिनि सों लागी॥
गर्भ किये मा करदी राजा । कामिनि सोह दुहू दिशवाजा ॥
मनसालहर उद मद मन भएउ । काम दहन धन आहुत दयेऊ ॥
उपजा मदन मोह औगाहा । पुत्री पितासों भयउ विवाहा ॥

साखी–बहनीसे बेटी भई, बेटीसों भइ नार ।
नारीसों माता भई, मनसा लहर पसार ॥

चौपाई

बरबस धर्मराय हरलीन्हा । बिन लेखा रजधानी कीन्हा ॥
विषया वेद ब्याह जमनाता । चौदह काल संघ उतपाता ॥
चौदह पारस लोक निसानी । शब्द ब्याह चौदह यमहानी ॥
मनसा ब्याह देव तिषगंधी । हंसना हंस भगत धुगबंधी ॥
सुर्त हंस घट रचो विदानी । धर्म समाध वसाए आनी ॥
उपजा मदन मोह औगाहा । कन्या पिताहितबभयाविवाहा॥
(कन्या ब्याकुल भई तेहि माहा ।) " " " ॥
धर्मराजको उपज्यो भावा । कामिनि हृदय हाथ बतलावा॥
उपजी रंग रोषकी खानी । कामिनि चरण गहो तब जानी॥
मनसा लहरि ताहि तेइ दीन्हा । उपजी तीन लोककर चीन्हा ॥
कामिनि संग करै सुख भारी । उपजा तीनि लोक अधिकारी ॥
तीनहि शक्ति पुरुष संघ दीन्हां । तीनों सुत उपजावे लीन्हां ॥
(पांच तत्त्व तीन गुण चीन्हां ।) " " " ॥
तीनउ सुत उपजे बहुरंगा । पारस रहा धर्मके संगा ॥
(पारस रहा ताके संगा ।)" " " "
तीनहुँ सुत उपजे अधिकारा । धर्मराय तब भया निरारा ॥
तीनौं सुत कहँ दीन्ही भारा । धर्मराय ऊंच भये निरारा ॥
राजपाट कामिनि कहँ दीन्हां । आपन बास शून्यमहँ लीन्हां ॥

कामिनि दर्श सदा लौ लावै । राज पाट सब कीर्ति बनावै ॥
" " " (। तीनों सुतको राज सिखावै)॥
राज नीति सुत चित्तहि धरहीं । मनसा ध्यान पिताको करहीं॥
खोजत खोजत बहु युग गयऊ । पिता पुत्रसों भेंट न भयऊ ॥
ध्यान धरत बहुते युग गयऊ ।) " " "
कामिनि पुरुष एकसंग रहऊ । सुतकी बात पुरुष सों कहऊ॥
वहांकी बात न सुतसों भाखे । करै दुलार सदासँग राखे ॥
इहि विधिबहुतदिवसचलिगयऊ । सुत न खोज पिताकर कियऊ॥
धरत ध्यान बहुते युग गयऊ । पिताको खोज करत तब भयऊ॥
मातासों पूछे सुत बाता । पिता हमार कहाँ गये माता ॥
माता कहै सुतन्हसों बानी । पिता तुम्हार हमहुँ नहिं जानी ॥
रचना सकल हमहीं होई । हमसो दूसरा और न कोई ॥
रचना सब मोहीते होई । दूसर जान परो नहिं कोई ॥
हमही पिता हमही हैं माता । हमही तीनि लोककी दाता ॥
हमहीं छांडि कोइ दूसर नाहीं । तुम जो पूछहुँ सो कहुँ काहीं ॥
तीन लोक महँ दूसर नाहीं । माता कपट करै मन माहीं ॥
तब सुत सोच कीन्ह मनमाहीं । पिताका भेद बतावत नाहीं ॥
आपु आपु कह सुत सब रूठे । माता वचन कहै सब झूठे ॥
तब माता कहै बचन रिसाई । पिताको दरश करहु तुम जाई॥
माता कहै फूल लै धावहु । पिताके शीस परसिके आवहु॥
पुहुप सामाधि वासले धाओ । पिताके शीस परसिके आओ॥
चले पुत्र पिताकी आसा । पिता रहे पुत्रनके पासा ॥
खोजतबहुत दिवस चलिगयऊ । पिताको दर्श कतहुँ नहिंभयऊ॥
तीनों सुत सो दरशन भयऊ । " " " " ॥
पिता निकट सुत दूरि सिधाये । खोजत कतहुँ अन्त नहिं पाये ॥

खोजि थाकि माता पहँ आए। काहु साँच काहु झूंठ सुनाए॥
ब्रह्महि भाषा झूंठ संदेशा। सकुचि वचननहिंकहेवोमहेशा॥
भाषा विष्णु सत्यकी रेखा। खोजि थाकि पिता नहिं देखा॥
माता बिहँसि कही तब बानी। ब्रह्मा झूंठ झूंठ तौ खानी॥
शिव लजाय शिर नीचे राखा। सांच झूँठ एको नहिं भाषा॥
ताते करहु योग तप जाई। जटा बढाय विभूति रमाई॥
(तुम सुत करो योग तप जाई। शीश जटा तन भषम चढाई)॥
लेहु आमण्डल भेषसो कीन्हाँ। शिवको थापि भवनी दीन्हा॥

साखी–जप तप योग समै दृढ़, आगे ध्यान पसार।
माना कह्यो क्रोध करि, चतुरमुख अन्ध अहार॥

मातहि कीन्ह विष्णु पर दाया। मुखहि चूमके कण्ठ लगाया॥
सत्य वचन सुत बोलेउ बानी। तीनहु लोक करहु रजधानी॥
शिव ब्रह्मा करिहैं तोर सेवा। गण गन्धर्व ऋषि मुनि देवा॥
ब्रह्मा मोसों झूँठ लगावा। तेहि कारण विधि झूँठ कहावा॥
ब्रह्मा वेद पढ़े बहु भांति। कुकरम कर दिवस औ राती॥
(विद्या वेद पढ़े बहु भांती। कुकरम करै दिवस औ राती)॥
एहि अवगुण गायत्री गाई। ब्रह्मा दोष शाप तिन पाई॥
मृत्यु लोक गो धरे शरीरा। अघ भुगते चौरासी थीरा॥
गोय होय नारी कल्यारी। अघनिचोए होए पातकभारी॥
जहाँ लग पुहुप खान परकाशा। निरधिन ठारे तुम्हारो बासा॥
झूठी बात वेद में निर्माई। च्यार वर्णमें बड़ी बड़ाई॥
पहिले चारों वरन पुजावै। दक्षिणा कारण गरा कटावै॥
गरा कटाए करावे पूजा। गायलै समै ब्रह्मा नहीं दूजा॥
लए मूँड पडिवो रमाई। ब्राह्मण भए सो काल कसाई॥

खाए अखज चले एडाई । जस मडवाको श्वान अघाई ॥
ब्राह्मणहूको झूठी आसा । हरि नहिं भजे न हरिके दासा ॥
कहके बिर ब्रह्मा करोए । उत्तम जन्म पाय जड खोए ॥
जूठी बात वेद निरमाई । चार वरण आश्रमहिं दृढ़ाई ॥
ऋषि अगसी सहस्र बखानी । ते ब्रह्माके सुत उतपानी ॥
जेते ऋषि तेते मतधारी । अस्तुति करि हसेब तुम्हारी ॥
ब्रह्मादिक मुनि देव गण भारी । अस्तुति करिहैं विष्णु तुम्हारी ॥
निशिदिन ध्यानपिताकोधरिहो । किंचित ध्यान जोतअनुसरिहो ॥

साखी–बिचलि गयउ निजनामको, गहे कुमारग जानि ।
तीनलोकगुण विस्तरेऊ, निरञ्जन आदि भवानि ॥

चौपाई

कहै कबीर सुनौ धर्मदासा । दोऊमिलि यह मत परकाशा ॥
यह सब खेल कामनी कीन्हा । निरञ्जन बास शून्यभौ लीन्हा ॥
ज्योति निरंजन ध्यान लखाई । शिव ब्रह्माको भेद सुनाई ॥
सेवहु विष्णु निरञ्जन ध्याना । हे सुत वचन निश्चय मम जाना ॥
ताते ज्ञान अगम फैलाहो । जाते तामस सिद्ध कहा हो ॥
सिद्ध न कामत होइहै भारी । ज्ञान अगम गुण होहि भिखारी ॥
अंश दहन तन तामस भारी । असुरभाव पशु वासु वतारी ॥
मतपा खंड ठगोरी टोना । षट दरशन पाखंड खिलोना ॥
यंत्र मन्त्र विखया अधिकारी । अन्तर ध्यान भक्त तुव धारी ॥
तव गुण सहस नाम ऊचरिहै । एक अंश चौसठ योगिन होइहै ॥
कर खपरलें मंगल गैहै । यह उपदेश महादेव देहै ॥
(शंकर चिह्न इहै सो पैहें ।) ,, ,, ,, ॥
रजरूचि सतगुन दया समानी । असुरहतन भक्तन रजधानी ॥
आगम कहो संघ मुनि लिन्हेउ । जहां जसभावतहांतस कीन्हेउ ॥

चारि खानि ब्रह्मै निरमाई । चामहि त्वचा लुच्च लौ लाई ॥
शिवको वरन भेद नहिं होई । क्रोधरूप धरि भेष विगोई ॥
मात विष्णुपर दाया कीन्हाँ । पिता दिखाय निकटहि दीन्हाँ॥
(अनुभव दया विष्णु परकीन्हीं ।)
पिताको दर्श विष्णु जब पावा । तब माता कह शीश नवावा ॥
माता पिता एक है गयऊ । विष्णु देखि चित हर्षित भयऊ॥
माता पिता एक मिलि गयऊ । विष्णु समाय जोति महँगयऊ॥
तेहि पाछे जग सिरजे लेऊ । ताको वरण सविस्तर कहेऊ ॥
प्रथमें चारि खानि निरमाई । लक्ष चौरासी योनि बनाई ॥
चारि खानिकी चारिउ बानी । उपजी तीनिलोक सहिदानी ॥
चारि खानि रचि कियो पसारा । चारि वरन पाखण्ड सँवारा ॥
(चौदहभुवन करयो विस्तारा ।)
लक्ष चौरासी योनी कीन्हाँ । चारि खानि महँ एकही चीन्हाँ॥
लक्ष चौरासी बचन बखाना । चारि खानि जीव एकै साना ॥
रचना रची सखा बहु रंगा । सुर नर मुनि गणका मतरंगा ॥
कामदेवकी कला अनंगा । पशु पक्षी सुर नर मुनि संगा ॥
कामकला सबही भरमावै । शिव शक्ती संग काम लगावै॥
उत्पति प्रलय रची अविनाशी । कामिनि काम कालकी फाँशी॥
कनक कामिनी फन्द बनावा । तेहि फन्दे सबही अरुझावा ॥
कनक कामिनी फंदा कीन्हा । चार खानिमें एकै चीन्हा ॥
नर बानर कीट पतंग सँवारी । सबके सँग करै रखवारी ॥
(नर नारि जत खान सँवारी । सब घट काम करै रखवारी ॥
पशु पक्षी जत कीट पतंगा । रक्षक भक्षक सबके सङ्गा ॥
श्वासा सार होय गुञ्जारी । पांचों तत्त्व सँग विस्तारी ॥
पांचों तत्त्व तुरै बल जोरा । तापर चढ़े साहु औ चौरा ॥

चारिउ खानि होय गुञ्जारा । स्वासा चलै अखंडित धारा ॥
देहदशा जस पुरुष सवारा । तैसी देह रची करतारा ॥
पांच तत्त्व तीनों गुण साजा । आठ काठ पिंजरा उपराजा ॥
(अष्टधातु पिंजरा उपराजा) ॥
पिंजरामें सुगना एक रहई । वाकी गति मञ्जारी लहई ॥
(यामध्य सुवना एक रहई । दावपरे मँजारी गहई) ॥
सुगना पढ़े दिवस औ राती । रक्षक पिंजरा ऊपर सँघाती ॥
रक्षक भक्षक सङ्ग रहावै । सदा पढ़ावे घात लगावे ॥
) एक घातक एक सुआ पढ़ावे ॥
जस सुअना पिंजरा महँ गहई । ऐसो देह प्राण दुख सहई ॥
नख सिख रचा काल फुलवारी । फूली वास कुबास सवारी ॥
कनक कामिनी काल बनाई । चारि खानि महँ रहा समाई ॥
कामिनि काम सँवारे जानी । चारिउ बखानि रहा विकशानी ॥
चारि खानि महँ श्याम असाना । काल कुटिल तेहि माहि समाना ॥
काल कलाकी खानि बनाई । शिव शक्ती महँ रहा समाई ॥
(दया क्षमाकी खानि बनाई । नर नारि महँ रहा समाई) ॥
सुरनर मुनि सबही कह डहके । चारिखानि सबके घट महके ॥
चारिखानिकी सब उतपानी । जेतिक तीनि लोक सहिदानी ॥
तीन लोक श्वासा विस्तारा । स्वासाते भा सकल पसारा ॥
श्वासा संग काल अवतारा । विष अमृत दोनों संचारा ॥
श्वासा संगम काल औकाली । श्वास संग भये वनमाली ॥
प्रकृति पचीस सङ्ग जञ्जाली । पञ्च पांचदश माल तमाली ॥
चन्द्र सूर श्वासा संग पूरा । इंगला पिंगला सुष्मनि जोरा ॥

दोहा-श्वासा सँग श्वासा, तेहिसे उपजा बरि आर ।
चन्द्रसूर्य हैं श्वासामध्ये, सकल विधिविस्तार ॥

शिव शक्ति सुखधाम है, जो चितज्ञानसमाय ।
सुखसागर अभिराम है, कालत्रासढरिजाय ॥

चौपाई

चन्द्र सूर जीवन सहिदानी । शक्ति शिवकी उपजे खानी ॥
(संयोग जड़ चित विदानी) ॥
एक संग विष लहरी समानी । एक संग बसे अमृतकी खानी ॥
एक संग मन बसे अपारा । एक संग अमी जीव रखवारा ॥
एक संग काम क्रोध दुखभारी । लोभ मोह पाषंड विकारी ॥
अहंकार लालच औ ममता । घिन्न औछतिलाज प्रतिहता ॥
एते एक वीरके साथी । माया मद जस मैगर हाथी ॥
एक संग शीतल शीलसुभेषी । इक संग छेमा सुबुधि विशेषी ॥
एक संग भक्ति रहे हितकारी । ज्ञान विवेक संतोष सुधारी ॥
दया दीनता निर्भय रमता । धीरज मतीसहज सुधि समता ॥
दुई घर दुवो राव कर वासा । इक घर राहु केतु प्रकाशा ॥
राहु अमावस सूर्यहि ग्रासे । ग्रासे केतु पूरणीमा चंद्रहीं फाँसे ॥
दोउ करै यहि भांति बसेरा । खन बाहर खन भीतर डेरा ॥
(दोउ करै एक नगर बसेरा) ॥
एकहि रथ दोऊ असवारा । बाहर भीतर मध्य दुवारा ॥
पांचों अविचल तुरै तुषवारा । ता ऊपर है जीव असवारा ॥
एक तुरे पियरे पट नेहा । एक नील रंग है देहा ॥
कुबेत एक लाल बहु रंगी । एस सबुज हरियारे अंगी ॥
एक श्याम मुश्की रँग भारी । पांचों एकते एक अधिकारी ॥
एक श्याम बदन रूपचारी । आप आप पांचों अधिकारी) ॥
पांचों बसे एकही संगा । एकही रथ मन जीव सुसंगा ॥
एक तब ले पांचों वासा । दाना घास पानीकी आसा ॥

पांचों पांच घाट जल पीवै । दाना घास खाए सुख जीवै ॥
पांचों तुरै पहली पल धावै । छिनबाँधहि छिन छोरि कुदावै ॥
छिनबाहिर छिनभीतर आवहि । पांचों पांच ढुंड फिरि धावहि ॥
सुसरवर पार सो तवे ले आवे । सकल पराश तवे ले आवे) ॥
इहिं प्रकार जाही ओर आवहि । कोइ नियरे कोई दूर सिधावहि ॥
सुरंग तुरै जोजन भरि जावै । मुसकि योजन डेढ सिधावै ॥
हरियर दुइ योजन पर जावै । योजन तीन पति पहुँचावै ॥
हंसा चारि योजन जो जावै । फिरिके दंडवत बेलै आवै ॥
(श्याम रंग आवै नाहिं जाई) ॥
यहि विधि पांचों आवै जाहीं । अपनि अपनि मंजिलके माहीं ॥
पांच तुरै रथ एक सुधारा । ताऊपर मन जीव असवारा ॥
जीव पराहै मनके हाथा । नाच नचावै राखै साथा ॥
पांचों तुरै होय असवारा । घेरे काल कलीके द्वारा ॥
यहि धोखा गहि जीव भुलाना । सत्य शब्दको भाव न जाना ॥
सत्य लोकके तुरै तुखारा । ताऊ पर सतगुरु असवारा ॥
हाहाकार करै चहुँ भाती । करै शिकार दिवस औ राती ॥
रथ ऊपर चढ़ि तुरो कुदावै । मारि जनावर लै घर आवै ॥
मारै बाण जान पर तानी । नख शिर वेधे घाव न जानी ॥
ताहि जानवरके शिर नाही । रुधिर मांस देह नहिं ताही ॥
देखत देहदृष्टि नहिं आवै । बिन देखे असमाने धावै ॥
(बिन देखे असमानहि धावे । ता धोकेमें जिव डहकावे) ॥
ऐसा देखो जनावर जोरा । बन औ नगर करै घनघोरा ॥
ऐसो विषम जनावर भारी । मारि पारधी लीन्ह संभारी ॥
मारि जनावर नगर बसावै । वाहि ओल देहे बिलमावै ॥
एक नगर दुइ रहै नरेशा । भिन्न २ दोनों कर देशा ॥

ताहि नगर दुइ महल बनाये । दुइ दरवानी तहाँ रहाये ॥
महा विकार दोऊ दरवानी । दोऊ रायकी सेवा ठानी ॥
करै उतपन्न दोऊ रजधानी । धर्म धीर औ आदि भवानी ॥
जो कछु उत्पति शहरमें होई । सो सब बांटि लेहि नृप दोई ॥
बांटि खजाना धरै दुराई । लेखा खरच उठावहि राई ॥
लेखा जानि खरच उठाई । लेखा खरच उठावै आई ॥
एक हवेली दस दरवाजा । अहुठ हाथ गढभीतर राजा ॥
राजा प्रजा सबैहि रहावै । इकछत राज चलै नहिं पावै ॥
दोउ राहुके शहर बताऊँ । बाहर भीतर प्रकट दिखाऊँ ॥
एक घर बसै मोह नृप भारी । ताकी साज विषय अधिकारी ॥
दूसरे घर विवेक बलधारी । ताकी सात सबै हितकारी ॥
इकघर राजा एकघर रानी । विधि संयोग मिलावै आनी ॥
एकघर सूर एक घर चन्दा । एक तेज विष अमृत मन्दा ॥
इकघर शक्ती इकघर शीवा । इकघर मन एकघर जीवा ॥
इकघर पाप एकघर पुन्या । इकघर सांच एकघर शुन्या ॥
इकघर भक्षक बसे अपारा । इकघर रक्षक है रखवारा ॥
इक राजा कर रक्षक नाऊ । रक्षा करै सदा सब ठाऊ ॥
एक राजाकर भक्षक नाऊ । भक्षै सबै न छांड़ै काऊ ॥
दूनौं नृपति एकपुर माहीं । एक रथ चढ़े एक सङ्ग ताही ॥
प्रथमहि भक्षक होइ असवारा । तहां जाय जहां है करतारा ॥
विषम सरोवर पहुँचे जाई । पैठि विषम जल माहिं नहाई ॥
करि असनान तीर्थ परसै । झांई झलकि ज्योति तहँ दरसै ॥
दुइ प्रतिमाको दर्शन पावै । आदि निरंजन ज्योतिदिखावै ॥
काली कालरूप विस्तारा । नाना रंग तरङ्ग अपारा ॥
देखि रूप मन हर्ष समावै । ज्यों पतङ्ग दीपक कहँ धावै ॥

देखत बहुत सुहावन ज्योती । नाना रङ्ग लागे बहु मोती ॥
जब परसे तब तेज अपारा । लागे आंच महा विष झारा ॥
सो विष ले भक्षक घर आवे । आनि जीव कहँ घोरि पियावै ॥
विषपिलाय जिव घात लगावे । रथते उतरि आपु घर आवे ॥
जब विष चढ़े आप बिसरावे । तब रथ चढिके रक्षक धावे ॥
रक्षक दूरि देश कहँ धावे । विषम सरोवर पार सिधावे ॥
विषम सरोवर तजि है पारा । जाइ जहां सतनाम पियारा ॥
अमर चोलना देखे जाई । चरण स्वरूप महँ रहे समाई ॥
परसै सुरति नामके पाया । मिटे जहर भइ निर्मलकाया ॥
दया तुरे चढ़ि उतरे पारा । परसे अमी तत्त्व विस्तारा ॥
अमी तत्त्व तुरे जब परसै । अग्र ज्योति अखंडित दरसे ॥
वरषे अमृत अग्रही धारा । पिवे जीव विष होय निनारा ॥
सुख सागरमें सुधारस पीवै । लै अमृत फिरि घरहि सिधावे ॥
घरमों आइ रहा ठहराई । अग्र अमी घर राख छिपाई ॥
घरी आध घर माहि जुडावे । भक्षक जहर बहुरि लै आवे ॥
फेरि जहर जीवहि पहुँचावे । जीव मुग्ध होइ अमी गँवावे ॥
जब भक्षक विष जीव पिआवे । फिर रक्षक अमृतकह धावे ॥
एहि विधि रक्षक भक्षक धावहि । एक विष एक अमृत लावहि ॥
विषम सरोवर भक्षक जाई । रक्षक सुख सागर पहुँचाई ॥
इहिविधि दोऊ करै रजधानी । इक दारुण इक शीतल बानी ॥
जादिनघर विधिने दुइकीन्हा । तादिन सोंपि खजाना दीन्हा ॥
दोइ नृपतिके दोइ स्वरूपा । राखे दाम चन्द सूर भूपा ॥
इकघर सूर्य एक घर चन्दा । इक दुख दारुण एक अनन्दा ॥
सकल समाज दोऊके हाथा । अविधि समानखजानासाथा ॥
भमर मता दोऊ घर भारी । श्वासा सार सुधारि सुधारी ॥

बाँटिके दाम दोउ घर दीन्हां । अमृतविष विशवासकर कीन्हां ॥
रचि खानी बहु रंग अपारा । देह माँहि बहु देह सुधारा ॥
(रची देह बहु रंग अपारा । विष अमृत बहु रंग अपारा) ॥
अग्र देह एक देह मँझारा । बाहर भीतर मध्य दुआरा ॥
(अष्ट देह यदि देह मँझारा । बाहर भीतर मध्य अखारा) ॥
चारि विमल हैं चारि तरंगा । चारि सुरंग एक बहु रंगा ॥
(चारि विमल हैं फटिक तरंगा । चारि सुरंग श्याम बहुरंगा) ॥
दुइ उज्वल हैं बाहर बासा । दुइ उज्वल जलमध्य प्रकाशा ॥
(दुइ उज्वल दल मध्य प्रकाशा । श्याम सुरंग अधर दुइवासा ॥
श्वासा सुरंग अधर दुइवासा । जरद नील घर माँहि निवासा ॥
बाहर दुइ सफेद बहुरंगा । रूप अनन्त सत शक्ती संगा ॥
पार बसै सत्व सुकृतको डेरा । मध्यमें विषम सरोवर घेरा ॥
निस्तत्त्वकमलसुकृतसत्यवासा । विषम सरोवर काल निवासा ॥
पुहुपदीप साहेबको बासा । सुखसागर ज्ञानी रहि बासा ॥
ताके और काल उछ्वासा । मान सरोवर काम निवासा ॥
ताके और कालकी आसा । विषम सरोवर काम निवासा ॥
सबके डरे निरंजन वासा । धरम दास तुम लखो तमाशा ॥
धर्मराइ मुख पौन उड़ाई । विषकी लहरि ध्वजा फहराई ॥
ज्ञानीके मुख ज्ञान प्रकाशा । अमरसार सुधा रहि वासा ॥
गुप्त झांझरी पुरुष बनाई । अक्षै अमान ध्वजा फहराई ॥
प्रकट झांझरी काल प्रकाशा । तेजपुंज विविधि रहिवासा ॥
जो रचना बाहरकी भाषा । सो रचना भीतर रचि राखा ॥
जो भीतर सो बाहर दरशै । तत्त्वहि तत्त्व तत्त्वतहँ दरशै ॥
तत्त्वकि रथचढ़ि बाहर आई । अमीकी रथ तहां परशै धाई ॥
क्षण बाहेर क्षण भीतर आवै । सतगुरुमिलै औ सहज बुझावै ॥
(निरखि परखि जब हेरे जाई ।)

चारि तीर्थमहँ प्रतिमा भारी । सत्यसुकृत तहाँ पुरुष औ नारी ॥
स्वासा संयम राह सुधारी । देवल चारि देव हैं चारी ॥
घट भीतर घट राह अपारा । चांद सूर्य ताके रखवारा ॥
उतर चँद तीरथ कहँ धावै । परसि तीर्थ अमृत लै आवै ॥
एकजीव दुइ अंग समाना । जन्द्र सूर्यके हाथ बिकाना ॥
दक्षिण स्वर तीरथको धावै । तीरथ परसि जहर लै आवै ॥
शुक्लपक्ष जब पूनो जब आवै । तबही जीव चन्द घर आवै ॥
जलरँग तत्व चँद असवारा । सो परसै धाइअमृत रसधारा ॥
जीव चन्दके साथेहि धावै । योजन चारि पार पहुँचावै ॥
करि असनान पुरुष पग परसै । निर्मल ज्योति अखंडितदरसै ॥
जब फिरि चन्द्र सरोवर आवै । बहुरि जीवसँगहि फिरि धावै ॥
आवत जात बार नहिं लावै । पल पल जीव दरस तहां पावै ॥
कृष्णपक्ष अमावस जब आवै । तब फिरि जिव सूर्यघर आवै ॥
सूर्य तेजपर होइ असवारा । बरसै अग्नि अखण्डित धारा ॥
जाय निकसि योजन परवाना । विषय सरोवर करै अस्नाना ॥
परसै देव निरंजन पाई । लागे झार जीव कुँभिलाई ॥
जीव सूर्य फिरि कमल समावै । पल बाहर पल भीतर आवै ॥
सूर्यसंग विष पीवै अघाई । मूर्च्छित होय चन्द्रघर जाई ॥
जाय अमावस परिवा आवै । चढि रथ ऊपर चन्द्र सिधावै ॥
वायु तत्वपर होय सवारा । चले चंद दुइ योजन पारा ॥
विषम सरोवर पार सिधावै । मान सरोवर पारस पावै ॥
नागिनि एक सरोवर माहीं । पीय अमृत विषछांडे ताहीं ॥
सो विष खाय चन्द्रघर आवै । अमृतकी कछु खबर न पावै ॥
पल पल करै तीर्थ अस्नाना । भीतर बाहर एक समाना ॥
अमृत रहै भुजंगिनि पासा । भीतर बाहर एक प्रकासा ॥

साइ विष लेय तीर्थको आवै । चंद्र कमल पर जाय समावै ॥
एहिविधि चंद्रपक्ष चलि जाई । पाछे जीव सूर्य घर जाई ॥
पूनिमा बीते परिवा आवै । तब रथ चढिके सूर्य सिधावै ॥
सुरंग तुरै पर होय असवारा । योजन तीनि जाय चढिपारा ॥
सुखसागरमें पैठि नहाई । परसै योग सँताय न पाई ॥
अमृत मानसरोवर माहीं । कामिनि दूरि धरै बोले ताहीं ॥
सो अमान सुखसागर माहीं । सूर्यके संग पीवे जिव ताहीं ॥
पिये अमी जिव सूर्यके संगा । मिटै तपत होय शीतलअंगा ॥
पल भीतर पल बाहर आवै । पीवै अमी रस तेज समावै ॥
जबही सूर्य अमीरस पावै । चंद्रहि पकरि आपुघर लावै ॥
जब चंदा आवै रवि द्वारा । होइ संक्रमण तेज अपारा ॥
तेज किरण पूरण जब होई । दरशहि काल तपै रबि सोई ॥
तपै तेज बारहको धावै । सुखसागरमें पइठि नहावै ॥
सुखसागरसों कर अस्नाना । उदितकमलहोइ द्वादश भाना॥
सूर्यपर चंद होय जब जोरा । तब घर काल करै घनघोरा ॥
चन्द्र सूर्य कह राहु जो फाँसे । पल चन्दा पल सूर्यहि ग्रासे ॥
इहि विधि देइ दुइनको बाजी । पूनम धरिहि अमावससाजी ॥
चन्द्र सूर्य लै जाय अकाशा । सुखमुनिके घरदोउकर फाँसा ॥
मुसकि तुरौपर होइ असवारा । घेरे शशि सूर्य अकाशके द्वारा ॥
जंबूद्वीप काल अस्थाना । सहज शून्य कह करै पयाना ॥
सहज शून्यमहँ पहुँचे जाई । सहज रहावै संग लगाई ॥
योजन डेढ सहजकर बासा । तहवाँ करै काल रहवासा ॥
सहज कालसों अंतर नाहीं । जीवहि छलै सहजकी बाहीं ॥
पलमें जंबूद्वीपहि आवै । पलमहँ सहज शून्यकहँ धावै ॥
एहिविधि चंद्र सूर्य दोइ फाँसै । काल सहज होय जीव गरासै ॥

चंद्र सूर्य दोउ अमृत पावै। काल सहज संग बाए लगावै ॥
बाए लगाय क्षुधा लेइ छीनी। जहर देइ चित बुद्धि मलीनी ॥
जीवहि सदा कालकी आसा। तजि अमृत विष करही ग्रासा ॥
कालहि राहु केतु होइ आवै। कालहि चंद्रहि सूर्य सतावै ॥
कालहि अमृत जीवसों लेही। कालहि जल थल बाजी देही॥
कालहि ग्रहण ग्रसत है जाई। देह विष अमृत लेइ छुडाई ॥
कालहि आगे पाछे धावै। कालहि रचै काल बिगडावै ॥
कालहि चारि खानि रचि राखा। कालहि सब घट बोलै भाखा ॥
घट २ काल करै रखवारी। एक देह दुइ अंग सँवारी ॥
एकअंग चंद एक अंग सूर। श्वासा पारस हाल हजूर ॥
इकइस हजार छःसै श्वासा। इतने एक घरी परकाशा ॥
निशिवासर बीते युग चारी। देओं अंग श्वासा संचारी ॥
दश हजार आठसै भारी। श्वासा चंद्र स्नेह सुधारी ॥
जेतिक श्वासा चंद्र सनेहा। तेतिक चलै सूर्य सँग नेहा ॥
दशहजार तीनिसै घाटी। चलै चन्द्र अरु सूर्यकी बाटी ॥
दुइ हजार दुइसै अधिकारा। ताको भेद एक विस्तारा ॥
मध्यद्वार सहजके जाई। ता सुन्नह मों रहै ठहराई ॥
बाईस हजार चारिसै ऊने। जाप जपे जिव आप विहूने ॥
एकजीव तीनों घर संगा। राहु केतु शशि सूर्य अनंगा ॥
जाप जपै और तीर्थ नहाई। परसै देवल देय सहाई ॥
जब जिव सत्य सुकृत पग परशै। तब निज ज्योति अखंडित दरशै ॥
जब जीव आदि निरञ्जन दरशै। हीरामें ज्योति तत्व जस परशै ॥
तासु भेद मैं कहों बनाई। ग्रसिले गगनरु क्षुधा छुडाई ॥
जब परिवा पूनमकी साधी। तब चंद्रहि ले आवहि बाँधी ॥
राहुकाल होइ जाय समाई। अमृत छोडि पीवै दुखदाई ॥

चन्दके सुगममें जीवहि ग्रासे । ग्रहण लगाय शून्यमहँ फांसे ॥
राहु काल जिव चन्द्र समाई । विष तजि मृत होइ छुड़ाई ॥
इहि विधि राहु चन्द्र कह घेरे । गहन गरासि ज्ञान कह फेरे ॥
अमृत छोड़ि विष सङ्ग लगावे । ज्ञान गर्मी उपजे नहिं पावै ॥
इहि विधि सूर्यहि केतु गरासे । अमृत हरि विष तेज तरासे ॥
इहि विधि दोउ सतावै काला । ता सँग जीवहि करे बिहाला ॥
जब चन्दा कह राहु गरासै । करमकाल व्याल होय फासै ॥
उग्र होत है श्वास विवेखे । शशि और सूर्य दोऊ घर देखै ॥
छांड़े केतु आप घर आवै । अपने घरमहँ सूर्य समावै ॥
सुरंग तुरेपर बाहर जाई । सुखसागर महँ पैठि नहाई ॥
योग सन्ताइनके पग परशे । निर्मलज्योति अखण्डित दरशे ॥
अमृत पीवे तेज बल पावै । पल पल पीवे बहुरिघर आवै ॥
आपुहि मह विष अछप छिपावै । बहु विधि अमी सुधारस पावै ॥
पल भीतर पल बाहर जाई । जीवका मूल परसि सुखदाई ॥
पुनि जो चले सूर्यकी श्वासा । पूरण तत्व तेज परकासा ॥
कबहूँ सूर्य चन्द्र घर जाई । चन्द्रहि लाभ सूर्य पछिताई ॥
ज्यों लगि रहै चन्द्रघर सूरा । तब लगि अमी अमान हजूरा ॥
इहि विधि तत्व छानि जब आवै । विद्वत्पुरुष हो अधिक पढ़ावै ॥
चन्द्र सनेह जीव तब पावै । पावे जानि भव बहुरि न आवै ॥
शशि और सूर्यग्रहण जब होई । तब देखै तन भेद बिलोई ॥
ग्रहण ग्रासि छांड़े जब कूरा । तब घर आवै शशि और सूरा ॥
अपने अपने घर जब आवै । तब नहिं कोई तत्व गवावै ॥
एकके घर एक जब आवै । कोई जीते कोई तत्व गवावै ॥
ग्रहण ग्रास होत जब जानै । तो शशि घरही सुरलै आनै ॥
शशि घर आवै शशि घरजाई । अग्रबास बासै लौलाई ॥

पुहुपबास तिल राखे छाई । तबके बासना बाहर जाई ॥
पुहुपके भीतर बास रहाई । सोई बास बाहर महकाई ॥
बाहरते भीतर ले आवे । ताके भीतर आनि समावे ॥
ताते वासन बाहर जाई । तिलके भीतर है ठहराई ॥
तिलते बासन बाहर आवे । बाहरते जो भीतर समावे ॥
भीतर वेधि एक जब होई । बास तेलमो रहै समोई ॥
समय–तौ लगि वास बहुत विधि, ज्यों लगि परैना तेल ।
तेल लाज छाड़िके डारैं, दुइ मिलि होय फुलेल ॥

चौपाई

बास तेल महँ रहे समाई । तेल काढ़ि नहिं बाहर जाई ॥
तेलके सँग बास महकाई । बासके संग तेल रहु छाई ॥
समय–लहा बास जहां तेल रहु जहाँ तेल तहाँ बास ।
एकै संग दूनों बसौ, महकै वास सुवास ॥

चौपाई

इहि विधि रहै दोऊ इक ठाऊँ । एकै बासना एक सुभाऊ ॥
बाहर कहि जब अंग लगावे । दुहे प्रतिमाको रूप दिखावे ॥
सुरति फूल मन तिलकी खानी । नाम बास जीव तेल बसानी ॥
बाहर फूल भीतर फुलवारी । रवि शशि करै दोय रखवारी ॥
तिल फूले बिखियाकी खानी । दिनफूले निशि गिरतनजानी ॥
ऐसो फूल कृत्रिम उपराजा । तत्त्व तैल सबमध्य विराजा ॥
सोई तत्त्व मो अम्र सनेहा । तत्त्वहि तत्त्व मिलै तिल देहा ॥
तिल औ फूल एक सम कियऊ । तेहि पाछे पुनि प्राण बसियऊ ॥
दुख दीयते निकसेउ तेला । फुल देह तजि भयऊ फुलेला ॥
यहि विधि गुरू शिष्य जो होई । मुक्ति पंथ पावै पुनि सोई ॥
धर्मदास यह अद्भुत बानी । कही विचारि सुकृत सहिदानी ॥

उत्पतिकी गति सब हम पाई । परलैकी गति कहौ बुझाई ॥
रक्षक भक्षक एकहि सङ्गा । कहौ विचारि दोऊको अङ्गा ॥
जब साहब शिवशक्ति बनाई । सो तो गम्य सबै हम पाई ॥
सो शिवशक्तिकालरचिराखा । दोनों अङ्गधरि प्रकटी भाखा ॥
कामरूप विष बाण बनाया । कला अनन्तधरि प्रकटी काया ॥
घर घर शिवशक्तीसुत नारी । बिरह वियोगसोगसुख भारी ॥
नाना रूप रंग उपराजा । उपजनिविनसनिसुखदुखसाजा ॥
कुल व्यवहार सकुचऔ लाजा । नात गोत रस लीला साजा ॥
चारि खानि बानिधरि गाजा । चारि वर्ण औ शर्म उपराजा ॥
लाज वरन कूरी कुल काजू । योग्य यज्ञ व्रत दान समाजू ॥
संपति बिपति रंक औ राजा । अन्न वस्त्र माया उपराजा ॥
सब ऊपर मन आप विराजा । मनबसि होय सैर सब काजा ॥
मन इन्द्री महँ भोग संयोगा । मनै स्वाद औ स्वाद वियोगा ॥
मनहरता मन करता सोगा । मने रोग औ दुखसुख भोगा ॥
मनते कोई और न दूजा । मनसाहब मन सेवक पूजा ॥
मन देवल मन प्रतिमा साजा । मनपूजा मन तीर्थ विराजा ॥
मन शिवभक्ती बिरह अपारा । रुधिरबिन्दु मनसिरजनहारा ॥
मनै जियावन मरने हारा । मनहिअशुभशुभ कर्मव्योहारा ॥
कर्मा कर्म मनहिते होई । भोग करै भुगतावै सोई ॥
मन भर्मित मन चेतन हारा । चारि खानि मनखेल पसारा ॥
मनशीतल मन तेज अपारा । मनश्वासा मन बोलनि हारा ॥

समय–चन्द्र सूर्य संग मन वसै, शुभ अशुभ मन आहि ।
श्वासा श्वासा मन बसै, कहि बरण गुण ताहि ॥

चौपाई

खानि खानिमनहोयअसवारा । फैलि रहा मन अगम अपारा ॥

चारि खानि मन रहा समाई । चारि चक्र चढ़ि बोले आई ॥
रोम रोम मन रहा समाई । आपहि मारै आपहि खाई ॥
आपहि भिक्षुक आपहि दाता । आपहि ईश्वर आपु विधाता ॥
आपहि चोर आप रखवारा । आपहि रचै आप संहारा ॥
आपहि सीखै आप बिसरावै । आपहि मेटै आप बनावै ॥
आपहि अन्ध आपडिठिहारा । आपहिज्योतिआपउजियारा ॥
आपहि तिमिर आप अँधियारा । आपहि मासपक्ष व्यवहारा ॥
आप निरक्षर अक्षर होई । गुप्त प्रकट होय बोलै सोई ॥
नानारङ्ग ज्योति दिखलावै । आदि अन्त मनमनहिसमावै ॥
मनही नाद शून्य महँ बोलै । मनहीं ज्योति शून्यमहँ डोलै ॥
मनही कह सब ध्यान लगावै । मनको अन्त न कोई पावै ॥
मनही शास्त्र वेद है चारी । तीनलोक मन कथा पसारी ॥
निर्गुण सगुण मनहीकी वाजी । कवी पुराण कोकमन साजी ॥
ब्रह्मज्ञान कथि मनहि सुनावै । आपु छिपाय दूसर दिखलावै ॥

समय-आदिअन्तमन कर्ता, चारि खानि मनबास ।
बन्द छोरि करी मोपै, कहु मन्त्र प्रकाश ॥

चौपाई

सुनहुँ सँदेश हंसपति आगर । पुरुष पुराग्र हंसपति सागर ॥
सुरति पुरुष हंसनके नायक । ज्ञान अनूप सुनी चितलायक ॥
कहो अग्र आग्रकी खानी । कहो ज्ञान विज्ञान बखानी ॥
चार खानिके श्वासा जेती । कहो बिचारि चलै दम तेती ॥
अचल खानिप्रथमहि विस्तारा । तेहि पाछे पिंडज अनुसारा ॥
तिसरे अण्डज खानि सचारा । चौथे ऊषमज रचा अपारा ॥
चारि खानिको रचना भारी । चारि खानि संगहि अनुसारी ॥
प्रथम खानि सतसुकृत कीन्हा । रचना रचे निरञ्जन लीन्हा ॥

प्रथम अक्षय वृक्ष प्रभु कीन्हां । अक्षय बट है ताकर छीन्हां ॥
आदि अन्त पिंडज अनुसारा । जाते जग शिवशक्ति सुधारा ॥
तिसरे अंडज अर्ध निवासा । जाते जग पंछी परकासा ॥
चौथी खानि अमीरज कीन्हा । तेहि संयम उषमजकर चीन्हा ॥
चारि खानिकी चारिऊ बानी । श्वासा नेह देह सहिदानी ॥
चारि खानि मह एकै श्वासा । कहुँ खंडित कहुँ पूर प्रकाशा ॥
अचल खानिकी श्वासा भारी । चालि तीस पांच अधिकारी ॥
गिनती सौ हजार औ लाखा । श्वासा अचल खानि महराखा ॥
चारि पहर चारिऊ जग भारी । तीनी पहर श्वासा अधिकारी ॥
एक पहर वह उनमुनि रहै । ताते काल न आतुर गहै ॥
तीन तत्त्वकी रचना भारी । अचल खानकी देह सुधारी ॥
धरती तत्त्व भास अस्थूला । जल औ तेज ताहि कर मूला ॥
बांए आकाश नहिं रहिवासा । ताते जड अचल खानि परगासा ॥
तत्त्व विहून देह अनुसारा । ताते जड नहिं वचन उचारा ॥
गहन भास होत नहिं ताही । ताते बहु विधि बाढत जाही ॥
जाको गहन गारसे काला । सौ नहिं बाढे बेलि बेहाला ॥
अचलखानि बहुभांति सँवारी । नाना रंग रूप अधिकारी ॥
कतहूँ छोट कतहुँ बड भारी । कतहूँ साय सरवन सुधारी ॥
एक सुक्षम है एक अस्थूला । एक अमृत एक विषकर मूला ॥
एक खात पलमह मरि जाई । एक खातकछु अवधि बढाई ॥
इक खट्टा इक कडुवा होई । एक मधुररस खावै सोई ॥
एक विसाँइध विषके रूपा । नामशब्द गुण भेद अनूपा ॥
पांच सदा औ पांचौ रोगा । पांचौ औषध पांचौं भोगा ॥
पांच वास और पांच कुबासा । पांच पचीस रंग परकासा ॥
पांच पानि पाचौ रहि बासा । पांच शुभ और पांच विश्वासा ॥

पांच पांच सकल पसारा । पांच रंग श्वासा अनुसारा ॥
तीनि तत्त्व अस्थूल निवासा । तीनि मध्य हुई बाहर वासा ॥
पांच तत्त्व सब इनके पासा ।जहांलगिआप लखनि परकासा॥
पांच तत्त्व तीन गुण साजा । नारि एक तामध्य विराजा ॥
अचल खानिमह कीन्हे वासा । तामध्ये श्वासा रहि वासा ॥
चन्द्र सूर्य बिन श्वासाहीनी । ताते खानि जड भई मसीनी ॥
अचल खानि ताते जड होई । सूर्य चन्द्र नहिं मध्य समोई ॥
नारी एक श्वासा संग ताहां । जहलै अचलखानि जगमाहां ॥
नारिसुषुमण अचल घटबासा । ताहि संग श्वासा रहि वासा ॥
ता घट दोई नारी नहीं होई । ताते चन्द्र सूर्य नहिं दोई ॥
इंगला पिंगला नाहिन बासा । ताते रवि शशि नाहि निवासा॥
चन्द्र सूर्य घटके रखवारा । एहि डोलै एहि बोलन हारा ॥
चन्द्र सूर्य बिन जागै नाहीं । ताते अचल खानि जगमाहीं ॥
दुई दिन कोई मास गलिजाई । कोई छ मास कोई वर्ष रहाई ॥
कोई दश वर्ष माह जग राते । कोई तीस चालिस तन बासे ॥
कोइ पचास साठि रहि वासा । कोइ सत्तरी कोई असी नेवासा॥
वर्ष इकावन कोई तन राखा । कोइ सौ हजार कोइ लाखा ॥
कोइ कोटि कोइ अरब निवासा । कोइ पेड चारों युग बासा ॥
इहिविधि अचलखानिकरभावा । औषधि व्याधिरोग उपजावा ॥
एक सजीवन जड़ी अनूपा । एक जडी विष तेज सरूपा ॥

समय-कोई शीतल कोइ तेज है, कोइ पारसकी खानि ।
फूल विना फल ऊपजे, सब फलफूल समानि ॥

चौपाई

इहिविधि अचलखानिउपजावा । तेहि पाछे अंडज निरमावा ॥
अंडज खानि सजीवक कीन्हा । चन्द्र सूर्य सङ्ग जीवन दीन्हा ॥

नख शिख खचोप उपराजा । श्वासा सहज अर्ध धुनिगाजा ॥
दुइ सूर्य एक सहज घर शुन्या । तिहि घर कर्म पाप नहिं पुन्या ॥
दुई घर इंगला पिंगलाभारी । चांद सूर्य संग जीव संचारी ॥
ताकी श्वासा शक्ति सुधारी । अमृत प्रसन्नसहज सुख भारी ॥
पांच तत्त्व रथ साजी थारा । तापर चंद्र सूर्य असवारा ॥
ताके संग जीव उठि धावै । मन तरंग रूप उपजावै ॥
सुरंग तुरै पर होय असवारा । सूर्य स्नेह जाए चढ़ि पारा ॥
विषम सरोवर पहुँचे जाई । विष धारामें पैठि नहाई ॥
करि असनान ध्यान लौ लावै । धर्मराय कह माथ नवावै ॥
परसे राय निरंजन देवा । पल मल करै ज्योतिकर सेवा ॥
चरण परसि भरमत घर आवै । रविजीवहि विष आनि पिवावै ॥
रवि रथ रहै चन्द्र उठि धावै । तुरै लीला सरवर पहुँचावै ॥
जीवसहित शशि पहुँच्यो जाई । मान सरोवर पइठि नहाई ॥
करि असनान देवपग परशै । कामिनि देह कमलमहँ दरशै ॥
लेके वास चन्द्र घर आवै । घर आवत यम ग्रहण लगावै ॥
पल पल कमल कमल महनावै । अंडज खानि दर्श नहिं पावै ॥
परसै चरण सरोवर दोई । आवत जात न लागे कोई ॥
श्वासा नेह देह व्यवहारा । एक लाख औ सात हजारा ॥
एतिक श्वासा अंडज खानी । करै कुलाहल बोलै बानी ॥
तत्त्व चलै जोजन एक दोई । झाझरि पाटन बसै बिलोई ॥
खाज अखाज विचारै नाहीं । भर्मत फिरै सदा भव माहीं ॥
पल धरती पल फिरै अकासा । जल थल महिमँह फिरै उदासा ॥
कायाके बहु रूप सवारी । नानारंग वरन विष धारी ॥
चञ्चल कुटिल कला मनधरहीं । नाना बानि शब्द उच्चरहीं ॥
करै कल्पना जगमँह भारी । नाचै गावै करै खुमारी ॥

उड़ि अकाश तरुवर फलखाहीं । पानी ऊतरि पीवै जगमाहीं ॥
जो चन्दा घर चन्दा आवै । तो चन्दा सत्यलोक सिधावै ॥
मान सरोवर पैठि नहावै । विष तजि अमृत घर ले आवै ॥
पुष्प द्वीप होय फिरि घर आवै । पुष्प द्वीपमहँ जाय समावै ॥
एहि विधि चन्द्रग्रहणको देखे । चन्द्र अंशकी श्वास बिवेखे ॥
आयु अंश श्वासा महँ पावै । तो चन्दा नहिं मूल गमावै ॥
अंश जो आयु घरहिफिरिआवै । पूरी तत्व सदा सुखपावै ॥
उग्रह होतै सुरघर आवै । तादिन चंदा मूल गमावै ॥
एहि विधि सूर सतावे काला । ग्रहण गरासि करे जंजाला ॥
उग्रह होतै श्वास विवेखे । शशि औ सुर दोऊ घर देखे ॥
जहाँ पीवै पानी सब आवै । तहां दूतलै फंदा लावै ॥
एक तरुवर बनलासा लावहि । एकजल पीत चुगत सँतावहि ॥
एक पींजरा महँ जीव आवहि । रामनाम कह सदा पढावहि ॥
एक अमृत मुकताफल खाही । एकजलाहारफलआनिअघाही॥
एक जीव मारिकै करै अहारा । एक जीव जीवहि कर चारा ॥
एक जोने बल बजाये अधीना । एकउज्वलजल ज्योतिमलीना॥
जीव एकमत बहुत अपारा । एकउज्वलजलज्योतिअपारा ॥
श्वासा तेजी ज्ञानगा देहा । काम कलाते बहुत सनेहा ॥
अंडज देह महाबल भारी । वचन बिचारि करै सब झारी ॥
शुभ औ अशुभ दुही हैं ताहीं । एक मधुर एक तेज सुहाहीं ॥
एक सुहावन वचन सुनावहि । एक अपावन सुनतन भावहि ॥
तीनलोक भरि रहा समाई । ज्ञान गुमान करे सेवकाई ॥
त्रिविध ज्ञान लीए तन डोले । ऋतुऋतु बिरहका लिएँ बोले ॥
तेजहीन नाना दशा कीन्हां । ताकर भेद न काहु चीन्हां ॥

समय-एक अधीन एक दारुण, एकलै एके खाय ।
यह बानी जगमों कहहि, सुनौ भेद चितलाय ॥

चौपाई

अण्डज कला अनन्त सुधारा । तेहि पीछे पिण्डज अनुसारा ॥
कला अपार तत्व बहुरङ्गा । सिरजी पिण्डज भ्रमके सङ्गा ॥
पांचतत्व निश वासर सङ्गा । जाकर पहर ताहिके रङ्गा ॥
पाँचो पाँच तत्वके साथी । गाय भैंस घोडा और हाथी ॥
खर्च ऊंटनी छेरी खारी । चुहि चाही मंजारी पारी ॥
सो नहीं सुवरी कीनरी भाली । माली नौसी गही कङ्काली ॥
कहाँ लगी बरनौ बहुभाँती । मदही ते नरकी उतपाती ॥
पांच तत्व सबहीके संगा । श्वासाके सँग चलै तुरंगा ॥
पांचौं तत्व पाँच पुरजाहीं । प्रीत पाँच हैं छत्रके माहीं ॥
पाँच कुच पांच मोकामा । पांच सरोवर पांचहि धामा ॥
पांचै देवल पांचै देवा । पांचै करहि पांच कर सेवा ॥
पांचों मह सम पांच उदासी । पांचों पांच शून्य अविनाशी ॥
पांचों आवही पांचो जाहीं । पांचौ पांच महँ पांच समाई ॥
पांच शून्य पांच अस्थूला । पांचै पांच पांचकर मूला ॥
पांचहि होयघर एकजो आवै । पांच पांच तबही समुझावै ॥
पांचो सात राइ होइ धावै । तिनहींके घर मंगल गावै ॥
पांच तीनि जब सात समावै । पंद्रह मेटि एक घर आवै ॥
पांचहि तीन सात एक धारा । पांचों नाद बजावन हारा ॥
पांचौका है खेल अपारा । पांचों करही एक विस्तारा ॥
पांचौ दशके मांहि समाई । पांचौ आवहि पांचौ जाई ॥
भौंर गुफा पांचोंकर याना । बाजै ताल मृदंग बँधाना ॥
जब पांचौ दशके घर जाई । तब दश पाँचहि आनि समाई ॥

जब दश पाँच गुफामहँआवहि । मधुरी तान अर्धधुनिगावहि ॥
कोई घंटा कोइ ताल बजावहि ।कोईशंखनादकोईझालरिलावहि॥
कोईकिंकिनिचिंचिनिकिन्नरिवीना। कोईभेरिमृदंगऔढोलसहीना॥
कोई तारी कोई बेन बजावहिं । रहसि रहसि नानागुणगावहिं॥
सारंग जल तरंग धुनिधारी । तबलाचहुँओरनरसिंगाडफारी॥
इहिविधि भोरगुफा धुनि गाजै । नानारंग मधुर धुनि बाजै ॥
बाजे बाजन होइ धुनि गाजा । बिजुली चमकै मोहै राजा ॥
दश औ पाँच पचीस समावै । तब घरनी घरियार बजावै ॥
पांच पचीस दश दशहिसमावै । गुफाके ऊपर मुरली बजावै ॥
बाजै मुरली कला अनन्ता । जागै कमला सो मैं मन्ता ॥
निर्झर झरै गुफाके द्वारा । रवि शशिपांचतत्त्वउजियारा ॥
श्वासा सार सहज घर वासा । रविशशि पांचतत्त्व परकाशा ॥
भौंर गुफामहँ बाजन बाजै । रवि शशि श्वासासंयमगाजै ॥

समय-नाना बाजन बाजहीं, नानारंग अपार ।
मन औ जिव इक संगही, अविनाशीके द्वार ॥

चौपाई

मन नाचै पल लै औ गावै । आप नाचिकेजिवहि नचावै ॥
जीव नचै अविनाशी आगे । मन जिव रहे सदा सँगलागे ॥
आनँदधाम होत दिनराती । दीसे ज्योति दीवा बिनुबाती ॥
मुरली बाजै निर्झर झरै । नाडी सुषम मन्दिर भरै ॥
निर्भय सदा न जाति अजाती । निर्वंश सदा न पूजा पाती ॥
स्वर्ग नर्क औ नदी है ताहां । ज्योति उजागर निर्गुण नाहां ॥
सरगुण निरगुण एके माहा । दीखै ज्योति निरंजन ताहा ॥
सात तीन पाँचों जब एका । दुइ घर वास एक घर ठेका ॥
उतरि गुफासे जब घर आवै । आपु आपु कहचहुँदिश धावै॥

पल घर आवै पल घर जाई। पांचतत्त्व संग सदा सहाई ॥
पांच तत्त्व श्वासा असवारा। फिरहिं शहरवार औ पारा ॥
जहाँ बाहर है शहर देवाला। तहाँ पांचो तुरे फिरै चौफाला॥
ता ऊपर आतम चढि धावै। पल बाहर पल भीतर आवै ॥
पांच तुरै श्वासा चढि धावै। सरवर पांच परसि घर आवै ॥
सरवर पांच पांच तहां घाटा। गली एक पर्वत दुइ बाटा ॥
पांचौ तत्त्व चलै एक साथा। रविशशि श्वासा नाथ अनाथा॥
पाचौ तत्त्व घर बाहर जाई। ता संग कमल हरी उमगाई ॥
जादिन पांच तत्त्व नहिं आवै। एक तत्त्व निश वासर धावै ॥
ता दिन पांच तत्त्व गुणपावै। लखै तुरै जो बाहर धावै ॥
बाहर चाल चलत गहि लेई। श्वास सुभाव बंद तहां देई ॥
एक तत्त्व निश वासर धावै। दुसरी तत्त्व संग नहिं लावै ॥
पांचौं तत्त्व चीन्हि जब पावै। जो बाहर चलै तासु गुणु पावै॥
पाचौ तत्त्व जीव संग आवै। पल बाहर पल भीतर धावै ॥
ताकर पावै पांचों मोकामा। लेइ तत्त्व पांचोंके धामा ॥
पांचों पांच सरोवर जाहीं। अमी अमान बिरह रसखाहीं ॥
दुई पुहुप सुख सागर परशै। अमी अंक सत्य सुकृते दरशै ॥
तहाँ अमीरस पीवत अघाना। रवि शशि संग जीव निर्वाना ॥
उतपति पारस तहवाँ पावै। लै पारस फिरि घरहि सिधावै॥
द्वैमन विष एक मनहै अमाना। परसै आदि अन्त शहिदाना॥
कालि काल जोति उजियारा। तहाँ एक नागिनवसे अपारा ॥
सो नागिन घर भीतर बासा। बाहर भीतर एक निवासा ॥
नख शिख बेधि रहा विष पूरा। श्वासा संयम शशि और सूरा॥
पांचै तत्त्व रहो घट पाँचा। पांचहि साथ जीवकर साँचा ॥
रवि शशि श्वासा संग बसावै। उत्पति प्रलय गहन लगावै ॥

दुइ घर रवि शशि जीव बसावै । इक घर राहु केतु भच्छावै ॥
चारिउ चारि दिशा चलि जाई । फिर चारिऊ एकमाँह समाई ॥
दुइ झंझरी परशि फिरि आवै । दुइ फिरि झँझरी बाहर धावै ॥
घर आवत राखे अटकावै । राहु केतु दोई रहन लगावै ॥
जादिन पांच तत्त्व नहिं धावै । तादिन कालगहन नहिं लावै ॥
दुवो तुरे जा निकसे धाई । फोरी द्वारी बाहर जाई ॥
बाहर अमी अमान अमाया । उत्पति पारस नारी काया ॥
नारी नेह निरञ्जन काया । ताते शिव शक्ती उपजाया ॥
एहि निजबुझहु धरमन भाया । नाना वानी वरन बनाया ॥
शिवकाया पति सूर्य सनेहा । ऊगे चन्द्र शक्तिकी देहा ॥
शिवकी देह सूर्य प्रभु साजा । शक्ती देह चन्द है राजा ॥
रवि शशि पांच तत्त्वदइकाया । एक एक संग उपजे काया ॥
एकतत्व निश वासर धावै । जीवका मूल परोस सुखपावै ॥
जीव मूल पारस परवाना । लेउत्पति पारस जाय ठिकाना ॥
मन जिव तत्व एक चढि धावै । लै पारस अपने घर आवै ॥
पारस आनि जगावे कामा । बिरह बाण मारे संग्रामा ॥
दोई तत्व निर्वाण उजागर । दुइ घटशिवशक्ती मनि आगर ॥
पारस एक दुवोंकी काया । चंद्र सूर्य संगही उपजाया ॥
चंद्र उगै शक्तीकी देहा । चलै तत्त्व जलरंग सनेहा ॥
एक तत्त्व चंद्र घर धारा । सात रोज एकै व्यवहारा ॥
सात वार निश वासर धावै । पल पल बढै घटै नहिं पावै ॥
पारस परसि होइ जिव पूरा । शक्तीशशि घरशिव घरसूरा ॥
एकतत्व संग पारस पावै । राहु केतु नहिं गहन लगावै ॥
तत्त्व तार टूटै नहिं पावै । बिना सिंघनी काल समावै ॥
एकै पेली एक जो धावै । तौ शक्ती नहिं पारस पावै ॥

टूटे तार तत्वकी जबही । काल सन्धि पावै घट तबही ॥
टूटे तत्व होय दुख कूरा । चन्दहि पेली ऊगै घर सूरा ॥
धरि शशि सूर्य काल लै जाई । बांधि अकाश राखै बिरमाई ॥
चन्द्र सूर्य श्वासा सहिदानी । पारस तत्व लेइ अस छानी ॥
पारस टूटत होय मलीना । निशवासर जीव काल अधीना ॥
पारस सङ्गहि लेइ निचोई । छांडि देइ जब जाने सोई ॥
छिन बाहर छिन भीतर धाया । जरामरण व्यापै आ माया ॥
एक तत्व सङ्ग सबै विगोई । एक तत्व उपजे सब कोई ॥
शिव घर सूर्य होय उजियारा । एक तत्व निश वासर धारा ॥
पारस परसि होय विथिपूरा । प्रेम प्रकाश ऊगै घट सूरा ॥
एकतत्व चलै रवि धारा । सूर्य सिंध घट तेज अपारा ॥
शक्ती देह चन्द्र रखवारा । चले तत्व जल रङ्ग अपारा ॥
एकतत्व निशवासर धावै । सातबार टूटे नहिं पावै ॥
एक समाधि रहत अस्थूला । तब शक्ती घट फूले फूला ॥
फूलत फूल तहां अकुलाई । मनबिकार तन रुधिर चलाई ॥
ताहि समै तन खीर समावै । शिव सनेह रचि काम जनावै ॥
ताहि समै शिवशक्ती परशै । रति रुचि अमी गर्भ तेहि दरशै ॥
रहै गर्भ कामिनिकी देहा । उपजे जातक वरन सनेहा ॥
पुरुष देह शशि चलैजो धारा । कन्या उपजै कला अपारा ॥
सूर्य सनेह चलै जो धारा । उपजै कन्या कला अपारा ॥
सूर्य सनेह चलै जो धारा । उपजे सूरति सार कुमारा ॥
रहै गर्भ तब काया साजै । रुधिर मांस तिलतिल उपराजै ॥
पांच तत्व तीनों गुण मूला । तासों रचे गर्भ अस्थूला ॥
शिवके श्वास बांये स्वरूपा । शक्ती गहै जानिके रूपा ॥
शिवके रूप शक्ति गहि लेई । तब सांचा महँ जावन देई ॥

जावन जाभैं सांचा माहीं । थाका होय रुधिरके ताहीं ॥
तेहि थाककी रचना भारी । तीन लोककी विष सँवारी ॥
तीन लोककी जेतिक खानी । सो सब थाका माधि समानी ॥
उपजा थाका थाल सँवारी । गर्भभेद यह कहौ बिचारी ॥
थल थहाए माल निरमाया । महलहिके माहीं जलहि समाया ॥
जलके मध्य महल बनवाया । महलहिके मधि रचना लाया ॥
महलके बार धन वह छाजा । पवरि पगार बना दरवाजा ॥
सांचा अर्ज जरै नहिं कबही । शोच मढिर चाहै सबही ॥
सांचा मांहिलोक दियोरसडारी । नख शिख शोभा सबै सुधारी ॥
तीनहिं लोक रचा पलमाहीं । गढके गढ पति गासौ ताहीं ॥
प्रथमें सायर सात सुधारा । पर्वत अहुट रच्यो अधिकारा ॥
अठारह सहस्र बहतरि नारा । पांचतत्त्व सब साज सुधारा ॥
अठारह गंडा नदी बनाई । सब तरि नीर रहा पुनि छाई ॥
लोहू हान स्तंभ अस्थूला । बढे लिंग सवारे मूला ॥
आगे सवारे दुइ भुज दंडा । सात द्वीप द्वीप पुहमी नौ खंडा ॥
बहुरि सवारे दूनौ खम्भा । मदन महा बहल उपजे रम्भा ॥
नासिका चढाई मस्तक भारा । दुइकर जोरिके निकासी धारा ॥
श्रवने नेत्र रुचि अर्ध बनाई । कीला कीला मधी नवाई ॥
नौमी कूटी दश गुफा बनाई । सात भँवर नौ नाल लगाई ॥
उतर मेरु सिरजा अस्थूला । सरवर माहिं कमल बहु फूला ॥
नाभि माह नखशिख करलाई । फूला फूल बास घट छाई ॥
बाहर बास तन मांह समाई । सोई बास इन्द्री होय धाई ॥
इन्द्री रसना रङ्ग जनाई । लिंग जल हरिसे भूमि बनाई ॥
आठो अङ्ग रचा अस्थूला । शिवशक्ती दोउ सम तूला ॥
सोइ अङ्ग शक्ती सोइ अंग शीवा । शो एक एक सम नीवा ॥

नख शिख अंग एक अनुहारी । देह स्वभाव बचन दुइ मारी ॥
शक्ति देह विरह अधिकारी । शिव आशिष शक्तिको चारी ॥
इहि विधि रचना रची बिलोई । गर्भ सनेह संपूरन सोई ॥
नखशिख रचा गर्भ अस्थाना । सात द्वीप नौखण्ड बखाना ॥
एक द्वीपमें सातों दीपा । सात सुकृत तेहिमाय समीपा ॥
प्रथमै गर्भ द्वीप उपजावा । ता ऊपर रचना बिलमावा ॥
एकद्वीप नौखण्ड बनावा । त्रिकुटी सात तहाँ निरमावा ॥
एक द्वीपमें सातों नाला । सातों कमल अधर दुइमाला ॥
सरवर सात कमल तहां साता । रंग पांच पांचौ उतपाता ॥
पांचके मध्यहि पांच रसीला । त्रिकुटीमध्य एकतहां कीला ॥
ता कीलामहँ कानी लागी । पौन सनेह आतमा जागी ॥
ता कीलामहँ लागी डोरी । खूटा गाडि पवन झकझोरी ॥
ता खूटा महँ डोरि लगाई । मन पवना गहि राखु झुलाई ॥
झुलि मन पवन झुलावे चेरी । इक घर शून्य एक घर फेरी ॥
खूटा होय पवन झकझोरै । इंगला पिंगला सुषुमण जोरै ॥
रवि शशि मनपौना गहि जोरी । खूट न लागि सबनकी डोरी ॥
मेरे दंडपर खूटा गाडा । नदी तीन ता ऊपर बाडा ॥
खूटाकी बांई दिशि है गंगा । विमल शीतल बहे नीर तरंगा ॥
चन्द्र सनेही जिव जल परशै । सुरति स्वरूप धनी दिल दरशै ॥
तासु खूटाके दहिने अंगा । यमुना नदी बहै बहुरंगा ॥
कीर्ति नीर और पीत तुरंगा । लहर लाल तेज विष संगा ॥
तहां बसै सुर जीवके साथा । खल एक बयालिस हाथा ॥
कला अनंत रूप रस नाथा । सबै अर्थ नहिं दीसै माथा ॥
वाढि नदी जो दोउ करारा । शीतल तेज बहै दोउ धारा ॥
तिसरी नदी है गुप्त प्रवाहा । नाजल थाह न होय अथाहा ॥

खूंटा तर होय निकरी धारा । चली सरस्वती फोरि पगारा ॥
मध्य लहरि विषधार सखानी । गंगा यमुना मध्य समानी ॥
त्रिकुटी संगम भयउ मिलावा । मनही पवन लेत बिरमावा ॥
भँवरगुफा माधवकर थाना । बसै त्रिवेणी प्रयाग स्थाना ॥
त्रिवेणी तट बसै प्रयागा । जागत सोवै भाग अभागा ॥
गनि गंधर्व मुनि सबके थाना । सुरनर करै पैठि अस्नाना ॥
तैंतिस कोटि देवगण नारी । किन्नर गुणी कंचनी भारी ॥
यक्ष यक्षनी देव कुमारी । नागसुता अप्सरा सुभारी ॥
चढि विमानसबकरिहैजोहारी । काया मध्य इहअदभुत भारी॥
असुरपिशाचचारिखानिजुलाहल। त्रिवेणी तट करी कुलाहल ॥
यक्ष यक्ष असुर सब देवा । बसे ग्राम करै माधव सेवा ॥
तीन लोक जब जीव निवासा । सो सब करै त्रिवेणी बासा ॥
तेहि त्रिवेणी तट माधो देवा । सब मिलि करै ताहिकी सेवा॥
तब प्रयाग होइ चढि प्रवाहा । गंगासागर संगम जाहा ॥
देश देश गंगा फिरि आई । घाट घाट बहु क्षेत्र बनाई ॥
जहां तहां जप ध्यान लगावै । योग्य यज्ञ व्रत प्रात नहावै ॥
ऋतु बसंत प्रयागहि धावहि । मकर महीना वजार लगावहि॥
अरध उरध बिच लागी हाटा । भीतर बाहर औघट घाटा ॥
गर्भमाहि सब युगति बनावा । तीनि कचहरि तहां बसावा ॥
जहां नदी संगम परवाना । तहँवा रचा एक अस्थाना ॥
संगम बीच गुफाके तीरा । सातहि द्वार गुफामहँ बीरा ॥
एकद्वार होय शब्द सुधारे । एक द्वार होय रूप निहारे ॥
एक द्वार होय बास बसावै । एक द्वार होय अन्न समावै ॥
एक द्वार होय स्वाद संवारे । एक द्वार होय न्याय निवारे ॥
एक द्वार होय नाद उचारे । सत्य सुकृतकी रहनि विचारे ॥

सात नाल चौदह सुरभाऊ। सातों करहै एक सुभाऊ॥
सातों सात शून्य मह वासा। सातों बसै गुफाके पासा॥
गुफाके मध्य कंदरा वासा। तहां सातों मिलि करे निवासा॥
एतिक कुञ्ज द्वीपरी शोभा। आवागमन मोहमद लोभा॥
कुञ्ज भँवरकी रचना भारी। शून्यसहज धुनिसकल सुधारी॥
दुवहु नाल कैसे के सोरी। एक सुखबंकनाल मह जोरी॥
अग्र नील अमरकी डोरी। शोभानालहोय विष रसघोरी॥
कुञ्ज द्वीप रचि सुधर बनावा। नेह अमर पद क्षीर समावा॥
सुधर द्वीप परनाभि सँवारा। नाभी मण्डल पौन किंवारा॥
पौन घोर नाभी रस कीला। मध्य सरोवर जंबू शीला॥
जम्बु द्वीप यम करहि स्थाना। ताहि द्वीपमाहि जीव भुलाना॥
नाभि द्वीप रचि कच्छ बनावा। इंद्री आसनको रंग सुभावा॥
कच्छ कला निज द्वीप सुधारा। ऋतु वसन्त जावन विस्तारा॥
कच्छ द्वीप काशी अस्थाना। नरनारी हि करै अस्नाना॥
वरुणा असी गंगके तीरा। मनि कर्णिका निर्मल नीरा॥
लिंग जलहरी माहिं समाना। नर नारि पूजही धर ध्याना॥
पूजहि कामिनी मंगल गावहि। रहसि रहसि लिंगही न्हवावहि॥
अक्षत चंदन बिल्व चढावहि। धूप दीप दै तत्व लगावहि॥
भामिनी भाव फूलरंग धरही। करि असनान बसन भुइधरही॥
सोइ बसन नर नाटक माँही। काशी तेहि वसनकी छांही॥
सोइ बसनकी वास उडानी। योग भोग छलकी सहिदानी॥
बसन कुसुम दल ध्वजा उडाई। कच्छ द्वीप शिव शिव शरनाई॥
कच्छ द्वीप रचा रस कोपा। लिंग जलहरी घर घर रोपा॥
कच्छद्वीप शिवको अस्थाना। शक्तिमांहि शिव आप समाना॥
शिवशक्ती रंग रूप रसीला। शिवसमान शक्ती गहि लीला॥

गर्भ सनेह रचा जब द्वीपा । लिंग जलहली सदा समीपा ॥
कच्छद्वीप रचि पूरन कीन्हाँ । पाछे पच्छ द्वीप पग दीहाँ ॥
पच्छ द्वीप रचि रंग बढावा । रंग रोस है बिरत स्वभावा ॥
प्लक्षद्वीप रचि पच्छ पसारा । प्लक्षद्वीप रचि गर्भ सुधारा ॥

समय–कच्छद्वीप तट पच्छद्वीप है, कच्छ प्लक्षकर भाव ।
दुनो द्वीप कर एक कला है, रंगरोष कर दाव ॥

प्लक्षद्वीप रचि गर्भ संभारा । पाछे मानद्वीप विस्तारा ॥
प्लक्षद्वीप बाहेर सुधारा । द्वीप ही कच्छप के द्वारा ॥
बारह द्वीप रचि पूरण कीन्हा । पाछे मीनद्वीप पग दीन्हा ॥
मीनद्वीप रस कंज अमाना । करहि कुलाहल द्वीप समाना ॥
मीन द्वीप रचि प्रगटी माया । पूरन भई गर्भ महँ काया ॥
मीनद्वीप तनको व्यवहारा । चमकै चपल ज्योति उजियारा ॥
चली चिकुर चित्र बलवानी । दामिनि दमकै बलके बढानी ॥
मीनद्वीप मन मदन महीपा । सुख दुःख साँराग दीपा ॥
मीनद्वीप रचि पूरण कीन्हाँ । पाछै सुधाद्वीप पग दीन्हाँ ॥
मीनद्वीप सुख अमृत लीन्हाँ । पाछै सुधाद्वीप पग दीन्हाँ ॥
मीनद्वीप सुख अमृत नेहा । चक्र सुदर्शन द्वीप उरेहा ॥
सुदर्शनचक्र द्वीप निर्बाना । सुधा वारि सत्य शुक्तिहि साना ॥
सुदर्शनद्वीप पति गुण आगर । परमानंद परम गुणसागर ॥
सातों द्वीप रचा निर्बाना । काया ब्रह्म भया बंधाना ॥
द्वीप सुधारी कमल परकासा । कमलबास प्रगटी चहुँ पासा ॥
प्रथमहि मकाद्वीप निरमावा । उमराव कमल तेहि माह बनावा ॥
उमर कमल मकरि कस जाना । लाख पंखुरी दलकी अनुपाना ॥
मकर तार डोरी तहां लागी । दरशै सुरति सदा अनुरागी ॥
दूजे पद्म द्वीप निरमावा । कमल कूर्म तेहि माहि बनावा ॥

ताकी डोरी सुतसम देखा । कमलनालके मध्य बिशेखा ॥
तीजे द्वीप लंबनी नेहा । धर्मकमल तेहि मांहि सनेहा ॥
ताकी डोरी अग्र सनेहा । अग्रनाक तेहि मांह उरेहा ॥
चौथे द्वीप झांझरी कीन्हाँ । कूर्म कमल दामिनको चीन्हाँ ॥
ताकी डोरी सहल स्वरूपा । चमके धारा तार अनूपा ॥
पांचए झिलमिल द्वीप संवारा । ताके कमल कुसुम सुखसारा ॥
ताकी डोरी धुआंके नेहा । अन्ध कार अकार उरेहा ॥
पांचौ द्वीप अर्ध रहि वासा । पांचौ कमल ता ऊपर बासा ॥
पांचो कमलमें प्रतिमा पांचा । लागी डोरी अर्ध घर सांचा ॥
कोई लक्ष कोई ऊत बनावे । कोई हजार कोई सब निरमावे ॥
कोई कमल पंखुरी सांचा । डोरी अर्ध पांचहुँके पांचा ॥
ब्रह्माद्वीप घरमांहि निवासा । तेहि महँ ऊर्ध्वकमल परकाशा ॥
प्रथमहि अमी कमल निरमावा । अमी अमान अर्धधुनि छावा ॥
तहवां होइ श्वासगुञ्जारा । बरसै अमी अखण्डित धारा ॥
अमी अमोल अर्ध रहि वासा । श्वासासार पुहुप परकासा ॥
निश वासरको जानै मूला । श्वासासार शब्दसम तूला ॥
निश दिन होय श्वासा गुंजारा । सातसै ग्यारह आठ हजारा ॥
अमी कमल अमान सो नाला । अट्ठाईसदल पंखुरी रिसाला ॥
तेहि महँ चले पवनकी धारा । श्वासा साथ शब्द गुंजारा ॥
निश वासर श्वासा विस्तारा । छः सै अर्ब इकीस हजारा ॥
उनतालिस हजार एकसै आवै । एतिक चिकुरद्वार होय धावै ॥
दुइ दल कमलह्वै श्वासा आवै । इकइस हजार छः सैः धावै ॥
बाइस हजार चारिसै ऊने । जाप जापै जिव आप बिहूने ॥
एतिक श्वास दोइ दलमें आवै । पल बाहर पल भीतर धावै ॥
दूसर कमल झलाझल माँहा । झलकै ज्योति अर्धधुनि ताँहा ॥

सहस्र पंखुरी कमल अनूपा । तहां बसै मनज्योति स्वरूपा ॥
ताहि कमल पर बाजन बाजै । बानी अधर मधुर धुनि गाजै ॥
कूर्म कमल मकरंदी राजा । तहां विराजति शोभित साजा॥
तहां घरनि घरियार बजावै । घनी घनी टंकोर लगावै ॥
दश और पचहत्तर श्वासा । इतना एक घरी परकासा ॥
एतिक श्वासा सहज घर आवै । तहां घरनि घरियार बजावै ॥
छसै पचहत्तर की सहदानी । एक टंकोर टोकावै जानी ॥
इहि विधि चारि टंकोर टोकावै । ताकर भेद सन्त कोई पावै ॥
राहु केतु सँग व्यालिन रोकै । ताको मर्म कोइ जनि अलोकै॥
एक पहर मारै विधि पूरा । गहन गरासै शशि औ शूरा ॥
गहन गरासत निरखै श्वासा । रवि शशि राहु केतुपरकाशा ॥
ताहि संग एक नागिनी रहै । घड़ी घड़ी वह जीवहि गहै ॥
श्वासा सोहंगम गहन गरासै । आगम जानिके जीवहि त्रासै॥
श्वासा सोरह गहन लगावै । छठये मासहि काल सतावै ॥
श्वासा परख घरीकी राखै । दमहि चलै सो आगम भाखै ॥
एहिविधि श्वासचलैपुनिजबही । दुइ हजार सातसै तबही ॥
पुजे घरि पूरण होय जबही । पहरके टोर मारै पुनि तबहीं ॥
एतिक श्वासा प्रहर प्रमाना । घरि चारि गरज बंधाना ॥
आठ घरी दुपहरि जब आवै । टोकै गहर गहन नहिं लावै ॥
चारि घरी चारिउ युग मूला । चारि प्रहर चारिउ समतूला ॥
चारिउ युग एक पहरके माहीं । चारि प्रहर चारि युग ताहीं ॥
प्रथम प्रहर सतयुग परवाना । तापर प्रथम घरी निर्वाना ॥
सतयुगमें युग चारि अपारा । चारिउ युगको नाम निरारा ॥
प्रथमहि सतयुग रोपै थाना । चारों युग तेहि मांहि समाना ॥
सतयुग प्रथम घरी निर्वाना । कीलक युग तेहिमांहि समाना॥

कीलक युगकी श्वास सारा । छहसै सत्रे पाँच सुधारा ॥
एति श्वासा कीलक युग माहीं । परसै जीव अधरकी छांहीं ॥
बीतत घरी गरज घहराई । काल टकोरा मारै धाई ॥
इह युग अन्त कहावै घरी । नागिनि आसे सन्मुख खरी ॥
प्रथम कीलक होय संघारा । पाछे युगका मत विस्तारा ॥
सतयुग घरि दूसर जब आवै । तेहि श्वास कमत युग पावै ॥
कमत युग होइ क्रोधबरियारा । उत्पति थोर बहुत संघारा ॥
कमत युगकी श्वासा जानै । छः सै सत्रह पांच बखानै ॥
एतिक श्वासा कामत युगमाहीं । गुण अवगुण दोउ निरखेहु ताहीं ॥
बीतत कामतक मोद युग आवै । तिसरी घरी बासना धावै ॥
आवा गौन बिचारै कोई । युग कमोद सुख पावै सोई ॥
तिसरी घरी सतयुगके आई । तब कमोद युग होय सहाई ॥
युग कमोद सतयुग महँ आवै । दुखी सुखी नर सब सुख पावै ॥
युग कमोदकी परलै होई । दुखी सुखी जानै सब कोई ॥
तब जो होई सूर्य संचारा । महाविरोध उपजै अधिकारा ॥
चन्द सनेह होय जो हीना । महासुफल तन होय मलीना ॥
श्वासा चलै सातसै भारी । युग कमोदकी कथनी है न्यारी ॥
युग कंकवत कि होय प्रकाशा । अतिही दुर्ज विषयकी त्रासा ॥
चौथी घरी क्रोध बेकारा । महा कठिन होई ताकी धारा ॥
चौथी घरी निकट जब आवै । सतयुग अंत कंकवत पावै ॥
सतयुग अंत होय नहिं पावै । युग कंकवत आय शिरनावै ॥
युत कंकवतकाल बरिआरा । कायाके बहु करै बिकारा ॥
काया कहर गरासै आई । तब न भेद मैं कहौं बुझाई ॥
काया कहर हो परचण्डा । नखशिख व्यापि रहै नौखण्डा ॥

युग कंकवत कालकी बानी । कालकला मति सब दिन जानी ॥
युग कंकवत महाबल योधा । अन्तकाल सतयुग पथ सोधा ॥
सतयुग अन्त कंकवत मांही । अन्त कालकी व्यापै छांही ॥
युग कंकवत मोह की खानी । काम क्रोध ममता लपटानी ॥
अन्तकाल सतयुगकर भयऊ । चारिउ जुग परलैतर गयऊ ॥
समय–एकहि युगके बीते, चारों युग भये नाश ।
एकनद चारिउ युगखाए, सतयुग कीन्ह गरास ॥

चौपाई

कीलक कमोद चंद सनेहा । कमत कंकवत सूर्य सनेहा ॥
भाजुग अन्त एक संग चारी । चारि घरी शब्द एक नाद संचारी ॥
एक नाद एक पहर कहावा । चारि घरी तेहि मांहि समावा ॥
चारि घरी चारिउ युग बीते । शब्दनाद रवि शशि घर जीते ॥
सतयुग अन्त बाजु घरियारा । त्रेतायुग कर भया विस्तारा ॥
दुसरे युग भयो विश्वासा । दूसरे पहर तेज प्रकासा ॥
तेज लगन श्वासा रही बासा । ताते दूसर युग परकासा ॥
त्रेता युगकर भा अनुसारा । त्रेता युगहि ते व्यवहारा ॥
त्रेता युगकी पंखुरी चारी । चारि घरी युग चारि बिचारी ॥
जैसा युग सतयुग महँ देखा । सोई गति त्रेता महँ लेखा ॥
जब जब अन्त होय युग केरा । तब तब नाद काल घन घेरा ॥
त्रेता युग महँ कला अपारा । योग व्रत तीरथ आचारा ॥
प्रथम घरी होय क्रोध अपारा । अहंकार अभिमान पहारा ॥
ताकर नाम चिता युग राखा । चित चञ्चल चकित अभिलाषा ॥
चक्रितयुग अलोप जब भयऊ । ठोकि टकोर नाद तब कियऊ ॥
होत नाद मृतु अंधा धावै । लागत पलकमल नहिं लावै ॥
चकित युग बीती जब गयऊ । तेहि पाछै बुद्धि युग भयऊ ॥

बुद्धी युगकी बुद्धी अपारा । तायुग महाकाल बरियारा ॥
ज्ञान गयँद होइ असवारा । बुद्धि युगभान फोरे महिभारा ॥
बुधिक बधिक बाँधिकरै कमाई । विषे चतुराई कुमति समाई ॥
एही विधि बुधि युगचलि जाई । तेहि पीछे मन बरतैं आई ॥
मन मतंग महामद माता । तेज तपस्या व्यापै गाता ॥
मनयुग ऊंच नीच सतलीला । बरषै झारी विषैको शीला ॥
मन युगकी श्वासा बहुरंगी । ज्यों जलमध्ये उठै तरंगी ॥
मन युगराज बीतिगा जबही । अहंकार युग उपजा तबही ॥
अहंकार युग अन्त समाना । मरै पतंग हार नहिं माना ॥
हारे नहीं आपु अहंकारा । गरजै छुच्छ हारे सुख भारा ॥
अहंकार युग श्वासा ऊनी । गरचि घुमडि बरषै फिरि सूनी ॥
अहंकार ऊद्वेग अपारा । श्वासा हीन तत्व छिनधारा ॥
अहंकार युग बीते जबही । त्रेताकी परलै भइ तबही ॥
त्रेता अन्तकाल जब कीन्हाँ । आधी निशा टंकोरजोदीन्हाँ ॥
आधी रात नाद घन बाजा । महानिशान मेघ जनु गाजा ॥
त्रेता आदि अन्त व्यवहारा । उपजा द्रवा परकला अपारा ॥
द्वापर युगकी कला अनन्ता । सुखदुखमध्य आदिदुखअन्ता ॥
प्रथम घरी द्वापरकी आई । अर्थनाम युग महा समाई ॥
अर्थनाम युग द्वापर माहां । अर्थ अहर्निश व्यापै ताहां ॥
अर्थनाम युग घरी समाना । घरिके बीते युग क्षय माना ॥
एक युग बीते दूसर आवा । धर्मनाम युग तहीं धरावा ॥
धर्मयुग धरनी धरु साँचा । श्वासा छहसै सतरी पाँचा ॥
धर्मधार औ धीर तुरङ्गा । धर्मयुग रोग वियोग सुरङ्गा ॥
धर्मनाम युग बीते जबही । गहर काल युग बरतैं तबही ॥
गहरकाल युग कहर कमाई । रविरथ बीच ध्वजा फहराई ॥

गहर टंकोर जब धरनी मारा । गहर कहर रस ज्ञान अपारा ॥
गहर यम युग बीता जबही । मोक्ष महाबल उपजे तबही ॥
मोक्ष नाम जग सत्य सुरंगा । निमिषि लक्ष दलसात तुरंग ॥
मोक्ष नाग युग बीति जब जाई । द्वापर युगकी परलै आई ॥
जब परलै द्वापरकी होई । आदि अन्त सबजाय बिगोई ॥
द्वापर अन्त बियुरचन भारी । दुःख प्रचंड सुखसबै खुवारी ॥
बीता द्वापर कलियुग आवा । कलियुग कालकलाके भावा ॥
कलियुग महँ युगचार समाना । चारिउ युगको करै बखाना ॥
चारिउ युगकी अर्थ कहानी । बिन परिचै सबयमकी खानी ॥
सतगुरु बिना न होय मिटाऊ । चारिउ घरी कालकी दाऊ ॥
चारि घरी युगचारि बँधाना । कहौं भेद सुनु संत सुजाना ॥
प्रथमहि युगकर चेतन नाऊ । चेतनि चित करै सब ठाऊँ ॥
चेतनियुगमहँ चिंताको धामा । विस्मय हर्ष दुनो विश्रामा ॥
चेतनि चिंता करै सब ठाऊँ । महा बली है श्वास सुभाऊँ ॥
तीनहिं ताप तपै ब्रह्मण्डा । भरमि भूत व्यापै नौ खण्डा ॥
भ्रमित पौन भर्मकी खानी । भर्म हाथ सब दुनी बिकानी ॥
केतौ पढै गुनै संसारा । बिनसतगुरुनहिं चित्तसुधारा ॥
सतगुरु मिलै होय सत तूला । तेहि पाछे उत्पतिकर मूला ॥
दोसर युग बुद्धी बलनामा । शुची अशुची करै जो कामा ॥
ताकी संख्या बहुत बिचारा । छःसै सत्तरि दण्ड पसारा ॥
पांच दण्ड बाकी रहि वासा । ताका भेद काल परकासा ॥
बुद्धी कुबुद्धी दोउ कर भाऊ । एकहि युग दोउ रहनि बताऊ ॥
बुद्धि हीन मैं मत पसारा । बिनु आँकुश नहिं होत सुधारा ॥
अंकुश देई मिलै गुरु पूरा । मोह महामद विषहोय दूरा ॥
बुद्धि नाम युगकी सहिदानी । सुमति सनेह सुरति लपटानी ॥

बुद्धि नाम युग पारस सनेही । चित अभिमान रहे नहिं देही ॥
बुद्धि नाम युग बीते जबही । इच्छा राशि गरासै तबही ॥
इच्छा युगकी अकथ कहानी । सुनहु सन्देश कहो सहिदानी ॥
इच्छा आदि पुरुषकी काया । तासु नेह सब लोग बनाया ॥
सो इच्छा है जीवन नेहा । रही समाय जहां लौ देहा ॥
ता युगमाही विषय विकारारा । ज्ञान न उपजै भर्म पसारा ॥
ता युग माहि धरै नहिं धीरा । लालच लोभहि व्यापै पीरा ॥
इच्छा युगकी अटपट डोरी । शहर सँधार होय निश चोरी ॥
जब जब इच्छा युग विस्तारी । काया कष्ट होय दुख भारी ॥
ता युगकी बाकी भुगतावै । दृष्टि नाहिं अदृष्टि दिखावै ॥
अन्न अहार करै जब कोई । इच्छा युग तब पूरण होई ॥
तासे युगकी दूसरी धारा । सतगुरु मिलै तो होय उबारा ॥
सतगुरु शरण अमर पद पावै । इच्छा समय दूरी बिसरावै ॥
इच्छा युगकर तार पसारा । लाज महा बल तजै विकारा ॥
सातों दण्ड इच्छा कर भावा । दण्ड पांच सातहि विसरावा ॥
पांच शून्य इच्छा कर साथी । मद माते जस मङ्गल हाथी ॥
तासु नेह संयम जब पावै । इच्छा मेटि गरव बिसरावै ॥
इच्छा युगकी एतिक बानी । सतगुरु मिलै होय छुटानी ॥
जाहि देह सतसुक्ती बीरा । ताकह काल देइ नहिं पीरा ॥

समय-कालत्रासव्यापै नहीं, इच्छा युगके माहिं ।
सतगुरुसो परचय करै, परसै निरगुण नाहिं ॥

चौपाई

चौथे युगको करौ बखाना । धर्म महाबल माह समाना ॥
अभय तरंग ताहि युग नामा । संशय रहित सदा बिसरामा ॥
तेहि युग माहि सरव सुख होई । अहंकार व्यापै नहिं कोई ॥

तेहियुग माहि सुधाकी खानी । बोलै धीर मधुर धुनि बानी ॥
झीनी रङ्ग तारंग विराजै । नाना नाद अर्ध धुनि गाजै ॥
सातों द्वीप होइ उजियारा । दामिनि दमकै शहर मझारा ॥
वन औ वृक्ष सघन सब होई । सदा बसन्त खेलै सब कोई ॥
षट ऋतु महा एक सम तूला । एकै बानी एक अस्थूला ॥
साहब सेवक एकै होई । सदा बसन्त खेलै सब कोई ॥
साहब सन्त लखै सब कोई । साहब सेवक लखै न दोई ॥
(एकै बास बसै सब कोई ।)
साहब सेवककी एकै शोभा । चीन्हि न परै अङ्गकी ओभा ॥
साहब सेवक बरन दुहेला । एकै बरण गुरू औ चेला ॥
जैसे फूल बास कह तोरी । पाछे फूल बास गहि जोरी ॥
पाछे फूल शोभासों देही । तिल तजि तेल बास गहि लेही ॥
विना भेद जीव होइ अन्धेरा । पाछे परै कालकी घेरा ॥
सीख बिना गुरु छुटे नाहीं । बिरि फिरि परिहै भौचक माहीं ॥
गुरू सुबास है फूल सनेही । सीख स्वरूप आसिका देही ॥
गुरु बिन कौन उतारे पारा । कठिन काल है भौजल धारा ॥

समय–विनसतगुरू नहिं बाचै, फिरि बुडे तेहि माहिं ।
भवसागरके त्रासते, गुरू पकरी बाँहि ॥

चौपाई

ग्रुगत रंगकी कला अपारा । बिना भेदको करै बिचारा ॥
जस तरंग जलमाह विराजै । ऐसे शब्द शीश पर छाजै ॥
मन मकरन्दीके गुण ऐसा । कोटके बासै विषधर जैसा ॥
अग्नि बीच काया कह डाढै । सागर मांझ दून होइ चाढै ॥
पर्वत मारि उडावे छारा । पुहुमी मेटि करै मसि आरा ॥
सूर्य मेटि सब किरन बनावै । पवन बांधि काया दिखरावै ॥

पानी बांधि अग्निको डाहै । पाला मेटि गरमि नहिं चाहै ॥
तीन लोककी जेतिक खानी । करै बास सबकी सहिदानी ॥
विष दारुण विषयाबसि होई । मारै मरै जियावै सोई ॥
जो चाहै सो सबै बनावै । मनकी कला हाथ जो आवै ॥
मन भूखा औ मनै अघाना । मनै पियासाकर जल पाना ॥
मन सूरा मन कायर हीजा । मनै विरह विरहिन सङ्ग भीजा ॥
मन दारुण मन कही सियारा । मनै तास औ मनै पियारा ॥
मन राई मन राव कहावै । मनै बिना मन हाथ न आवै ॥
मन बाहर मन सबके माहीं । मनते भिन्न कोऊ जग नाहीं ॥
मन सर्वज्ञ चराचर माहीं । मनते करता दूसर नाहीं ॥
मनही देह मनहि पुनि लेई । मनबसि काम लहरि बस सोई ॥
मन लोभी मन कृपणी होई । मन उदार मन दाता सोई ॥
मन पापी मन अघ ढोई । मनै भक्ति लरि तारै सोई ॥
मनै लेख मन करै अलेखा । मनही स्वर्ग नर्कको लेखा ॥
मनहि मरै मन मन नरकै जाई । मन बसि जीव सदा पछिताई ॥
करता जीव रंग मन आहीं । शोभा सकल रंगके माहीं ॥
रंगदेखि सब जगहि भुलाना । रंगरूपको एक ठिकाना ॥
बिन रंगरूप होई फीका । रंगरूप मिलि देखिय नीका ॥
नीक देखि सब शीश नवावै । निरखि देखिके शीश डुलावै ॥
नीके लागि रहा सब कोई । अनइस नीक मनैते होई ॥
ताते इह मन कर्त्ता भाखा । तिरगुण डोरी बांधि जगराखा ॥
मन हर्षित होय गावै गीता । मन उत्कण्ठमन कहै पुनीता ॥
मन खोजी वादी होई । मनै गुरु समुझावै सोई ॥
मन बारै मन आनि जुड़ावै । मनमलीन दशहु दिशि धावै ॥
मन अज्ञान मनै सज्ञाना । मन कविता मन चतुर प्रमाना ॥

मनछन्द धरि भाषा बोलै । मन अस्थिर मन चञ्चल डोलै॥
मनै ध्यान धरि वेद बखानै । मनै नबोडा कर न बँधानै ॥
मन षटचक्र मन विप्र बँधाना । मनके सकल रूप हैं ठाना ॥
मन नट नाटक महा समाना । मन नट सर्व कथै अभिमाना ॥
मनहि अठारह पढ़ै पुराना । मन मन कहि समुझावै ज्ञाना॥
मन चउदय विद्या अधिकारी । मन त्रिकुटी महँ लावै तारी ॥
मनकी ज्योति सकल उजियारी । मनकी छाया मन अधिकारी ॥
मनहीसों सब सरही काजा । मन है सात द्वीपको राजा ॥
मन बिनु सरै न एको काजा । मनके ऊपर मनहिं विराजा ॥
(मननवखण्डदशहुँदिशगाजा ।)
सतगुरु सीख मनहिंको कीन्हा । मनते भक्ति मनते पथचीन्हा ॥
मन मानै तो सबै बनावै । मन बिनु पन्थसो कौन चलावै॥
मन चीन्है तो मनकहँ पावै । बिनु मन सत्यशब्द नहिं आवै॥
मन चीन्है तो सब वश होई । बिनु चीन्है सब जात बिगोई ॥
तीन लोक जो बाहर भाखा । सो सब आनि देहमें राखा ॥
मन चीन्है तो हाथहि आवै । तीनहि लोक देहमें पावै ॥
जो बाहर सो भीतर पावै । तीन लोक पल मांह दिखावै ॥
तीन लोकते बाहर बासा । मन चीन्है तो होइ प्रकाशा ॥
जब लगि मनको अन्त न पावै । तौ लगि इह मन हाथ न आवै॥

समय-तीनलोक हैं देहमहँ, रोमरोम मन ध्यान ।
बिन सतगुरु नहिं पाइये, सत्यशरण निजनाम॥

चौपाई

सात द्वीप काया अस्थाना । सातों द्वीप कमल बंधाना ॥
नाल साति रचना गति देहा । सातों सुरकर एक सनेहा ॥
तहांको भेद हँस जो पावै । दुबिधा दूर मति सबै गवाँवै ॥

पावे भेद करै विश्रामा । पल पल परशै निर्गुण नामा ॥
आवत जात बार नहिं लावै । परसै नाम अमर पद पावे ॥
नाल सात सुर एक ठिकाना । ताके निकट रूसके थाना ॥
नदी तीन बाढी गम्भीरा । साम तहां गोफाके तीरा ॥
तहां बैठि अजपा लौ लावै । रोम रोम की सब सुधि पावै ॥
रस औ बिरस तहांकर मेला । होत बसन्त गुरू तहां चेला ॥
गुरु समाधि मँह अटल प्रमाना । चेला अग्रवास मह साना ॥
चेला बास गुफा महँ करई । पल पल सुरति शब्दपर धरई ॥
त्रिगुण तेजकी दीखै काया । दामिनि दमकि झकोरें बाया ॥
जो गुरु मिलै तो पांजी पावै । बिनु पांजी बिचही भटकावै ॥
पांजी पावै सुरति सनेही । पूरण तत्व चलै जब देही ॥
करै चन्द्र तापर असवारी । प्रीति पूरण जागै खुमारी ॥
प्रेम पियाला तहवां पीवहि । निशवासरचित आनंद दीवहि ॥
चेतनि चेत होय बल जोरा । जागत साह न मूसत चोरा ॥
श्वासा चारि लगनकर भावा । जब उपजे तब संगहि आवा ॥
चारि लगन दुइ भाव अपारा । उपजै विनशै क्रम व्यवहारा ॥
एक लगन संग उपजे काया । एक लगन बहु सुख समाया ॥
एक लगन दुख दारुण होई । शब्द गहे नहिं दुर्मति खोई ॥
एक लगन संग उपजै काया । एक लगन बहुसुख समाया ॥
एक लगन दुख दारुण होई । शब्द गहे नहिं दुर्मति खोई ॥
एक लगन संग उपजै काया । मोह महामद विषकी छाया ॥
विलसत उपजत सब जीव जाई । ना गुरु मिलैना अर्थहि पाई ॥
चारि लगनकर नाम निराला । दुइ सुक्ती दुइ काल कराला ॥
उत्पति संग सुधाकी छाया । दुखदारुण होइ तजे काया ॥

जे भुनि लगत सँवारे बीरा । उत्पति कै सँग तजै शरीरा ॥
बाकी जवनिकाल लखि राखा । मेटै अंक कालकी शाखा ॥
उतपति होत लिखे यमराया । सो सब दीसे नरकी काया ॥
सातों द्वीप लखे सहिदानी । वासिल बाकी कर्म निसानी ॥
जेतिक श्वास चलै नर देहा । ताकर जाने सबै सनेहा ॥
दम विस्तार लिखे सब दाऊ । पाछे करे करे जे घाऊ ॥
द्वीप द्वीपकर अंग जलावे । करपग परलो प्रकट दिखावे ॥
चौरासी लक्ष योनिनकी धारा । नरकी देह ते कर्म अपारा ॥
चौरासीकर पातक भारी । नरकी देहसब लिखे विचारी ॥
करपाछे वासिल लिखि राखे । बाकी अंक मध्यमें भाखे ॥
जमा शीसपर लिखै बिचारी । नित उठीके न्यावे निर्बारी ॥
सातों द्वीप सुधारे रेखा । ऐसा यमकर वरवस देखा ॥
करमज चारि अंक लिखि देई । पाछै सबसों निरणै लेई ॥
रेखा इलालि लिखे विष पूजा । लहसन मसा लिखे तिल गुञ्जा ॥
चक्र लिखै औ आपहि वासे । सन्धि लिखै जीवन कहँ फांसे ॥
नखशिख लिखै कर्मकी खानी । गुण औगुण नहिं मेटे जानी ॥
जाहि द्वीप जस अंक लिखावै । तहां तहां तस चाल चलावे ॥
रवि शशि अँक दोउ लिखि लेई । पाछे दोष जीव कहँ देई ॥
श्वासा स्नेह लिखै सहि दानी । पाप पुण्य भुगतावे जानी ॥
जेभुनि लगन होय उतपानी । लगन केतुकी सबही हानी ॥
दोऊ लगत साधें शशि सूरा । पावै सत गुरु हाल हजूरा ॥
जो गुरु मिलै तो मेटे रारी । बिन सतगुरु सब यमकी बारी ॥
सतगुरु बिना न होय उबारा । केतो ज्ञान कथै संसारा ॥
जप तप योग यज्ञ व्रत पूजा । काल सनेह और नहिं दूजा ॥

तप साधै रहसे मन माहीं। काल करमकी लखै न छाहीं ॥
विद्या वेदकी करै उचारा। कर्मवश जीव भये यमचारा ॥
जब लगि हृदय शुद्ध नहिं होई। तब लगि पार न पावै कोई ॥
जाही लगन तन जग लेही। ताही लगन तजे जो देही ॥
सो जीव उतरि जाय भौ पारा। नहिं तौ अटकि रहै संसारा ॥
कालहि बस जो तजे शरीरा। ताकह काल देइ बड़ पीरा ॥
लगन केतुकी होय न न्यारा। पाछे लेई गरभ औतारा ॥
नर्क खानि भुगतै चौरासी। धरि काया बांधे बिसवासी ॥
सतगुरु बिना लगन नहिं पावै। अन्तकाल यम धोखा लगावै ॥
जीवत कथै बहु ज्ञान अपारा। काल चतुराई छन्द पसारा ॥
कर्मकी वंशी सब जीव फाँसे। हरी न मानै आने हासे ॥
तादिन भूलि है सब चतुराई। जादिन काल धरै तन आई ॥
मूरख चतुराई सहज बैलाना। छोटे बड़े मर्म नहिं जाना ॥
ताते सत गुरु खोजहु भाई। जाते कर्म भर्म मिटि जाई ॥
लगन केतुकी देह बढ़ाई। बाकी सबै कालकी जाई ॥
जे मुनि जन तजे शरीरा। गहै न काल विषयके तीरा ॥
कागद करि जाय भव पारा। मेटै यमकर सकल पसारा ॥
सतगुरुसेती चाल गहि लेई। ताकह काल दगा नहिं देई ॥

समय-काल दगा सब मेटिके, उतरहु भवजल पार।
यमकी चाल बिचारिके, बहुरि न हो औतार ॥

चौपाई

धर्मदास औरो सुनि लेहु। जीवन बाह जानिके देहु ॥
जाको होइ सत्यको रेखा। नखशिख देखहु अङ्ग विशेखा ॥
चतुर शील दोउ निरखेउ जानी। करपर देखहु भक्ति निशानी ॥
शंख चक्रफर देखेहु थाना। लक्षण जानि सुधारेहु पाना ॥

बोले मधुर शीलकी बानी । तेहि तन होय ज्ञानकी खानी ॥
पहिने ग्रीव समा जौ होई । शब्द विवेकी जाने सोई ॥
खंभज होय जाहि कर माहा । यश विस्तार ज्ञान अवगाहा ॥
पलक पसार छत्र जो होई । लोक निशानि अंश जनु खोई ॥
नासिका नेह होय जो मासा । कुटिल कठोर रोग तन वासा ॥
बौरनीपर जो गुजौ गूजा । तामस तेज विषयको पूजा ॥
कोतह गरदनी एचातानी । कुबजा गाडर विषकी खानी ॥
मुख चतुराई हृदय कठोरा । बोले झीन क्रोध कर जोरा ॥
इन जीवन जनि बोधहु जानी । अन्तकाल पुनि होवै हानी ॥
नारी नेह विचारहु जानी । देखहु देह द्वीप सहि दानी ॥
राज गुञ्ज निरखेहु अनुहारी । कर पगशीस लक्षहि विचारी ॥
चंचल चाल पोल होय पाऊ । तेहि जनि कबहु चरण छुआऊ ॥
गुञ्ज होय जेहि मास लिलारा । तेहि बोधते होई कर्म अपारा ॥
पोठ भुजंग औ जीव भुजंगी । विष बरजोर बसै तेहि संगी ॥
नेत्र गुञ्ज ए ऊंच लिलारा । कामलहरि बहु जहर पसारा ॥
हँसत वदन चाले चतुरंगा । बोधत ताहि होत सुख भंगा ॥
नैन शेष निरखे जेहि ओरा । ताकह कष्ट देइ तन चोरा ॥
शुभ रंगुत्र होई विषखानी । क्षीरे छिर विषबालककी हानी ॥
सो गुण छांडे तासु शरीरा । द्वादश कँवल बसै बलवीरा ॥
नाभिकमल होइ रेखा तीनी । वाएँ अङ्क होए शशि हीनी ॥
कच्छदीप होइ गुञ्ज चितेरा । परसत ताहि कालको चेरा ॥
जम्बुदीप होइ गुञ्ज गहीला । लहसन मासा होइ जो ईला ॥
तेहि परसै औ बेधे जानी । गुरु शिष्य दोनोंकी हानी ॥
मीनहि द्वीप विकट होइ रेखा । ताके अङ्क कालकी रेखा ॥
बांझ सुआ बछ मूगी होई । कलपत जाय कालपुर रोई ॥

कूर्म स्नेह लक्ष कर जोरा। चतुर सनेह ज्ञानबल जोरा॥
पग छतनार होइ जेइ जानी। पुस्तपांव पर काल कुबानी॥
समय–चरण पलौ सम होय कर, घटिका पलो प्रमान।
ज्ञान सनेही दूत है, रोम रोम भगवान॥

चौपाई

दूनो अंग विचारेहु जानी। एकरज भक्ति एक विष खानी॥
दोऊ अंग लक्षण गहो शरीरा। पाछे देहु मुक्ति बरबीरा॥
परिचय भेद विचारहु जानी। पान लेत जिव होय न हानी॥
लक्षण लक्ष्य होय सम तूला। पावे सतगुरु मुक्तिके मूला॥
समय–आदि निशानी देखिके, बांए दहिने बाम।
शब्द सनेह नेह करि, तब दीनों निजनाम॥

चौपाई

बांए अङ्ग मसा जो होई। तीरथ अङ्ग रेखा हो दोई॥
बांए अंग विषयकी बासा। माया सघन वंश कुलग्रासा॥
दहिने अंग विषय जो होई। शीस संपति सुख गासे सोई॥
विकटदंत होय जेहि बारी। शीलवंत सुख प्रेम सुधारी॥
बिरर चिकुर मुख चुम्ब सनेही। विहसत वदन सदा सुखनेही॥
उज्ज्वल नेह सदा सुखदाई। शील सनेह भक्ति बहुताई॥
हंस गमन सतगुरु सों नेहा। मधुरी बोले प्रेम सनेहा॥
कर पद कोमल शरद शरीरा। सुत संपति जैसे दारुण धीरा॥
मधुर बात औ चमके देहा। सबते बोले सुरति सनेहा॥
सुरतिवंत प्रीतमकी प्यारी। पछो लांव जेठ पुर भारी॥
श्यामगात लहसन तन माहा। माया संघ न औग्रासै नाहा॥
राजवरण प्रिय श्याम शरीरा। पियाहि आहिपरीमलगंभीरा॥
बगलधि मुख आमिष जो होई। तन प्रसेव सुत सुतहि विगोई॥

लम्भे गात मोट तन भारी । विरह विकार क्रोध अधिकारी ॥
छोट शरीर पातरी वामा । आपु तजै अन्त विश्रामा ॥
निहली चितवनि एँचा तानी । बहुते पुरुष एक पटरानी ॥
विहसत बोलै कुटिल निहारै । आपु जरै औरन कहँ जारै ॥
आगे चलै पाछे तन देखै । गुण औगुण एकौ नहिं लेखै ॥
ऊपर हँसै मनही पछताई । देह थोरहिं बहुत पुआई ॥
एक थन छोट कठोर कुबानी । एक थनझालरि विषकी खानी ॥
नाभी पर तीनि होइ रेखा । सुखसम्पति सपनेहु नहीं देखा ॥
इन्द्री मांझ गुञ्ज होइ भारी । जो परसै तेहि करै खुआरी ॥
मोट पतंग चाकरी चाला । तेहि देखत मिय होइ बेहाला ॥
पग पातर पलो छत नारा । परसन बास परै यम धारा ॥
कनअंगरी अधर तिन लागै । आपु नाह तजि परघर बागै ॥
अस लक्षण होइ जाके गाता । प्रान लेइ करै यम घाता ॥
कुम्भ लिलार खम्भ जो होई । जो परशै सो जाय बिगोई ॥
कर पग पलौ गुञ्ज सनेही । परसत होइ भालुकी देही ॥
जोरे पुअर करमह होई । नाहरि नाइक ग्रासै सोई ॥
अहहि होय लक्ष तिरशूला । काल स्वरूप होइ अस्थूला ॥
मुक्तिपन्थ कबहुं नहिं चाहै । सदा विकार विरह रस लाहै ॥
चञ्चल चित्त थिर नहिं होई । भजन भंग रस भक्ति बिगोई ॥
वरुणी बसै बिसंभर जोरी । नेत्र बिलोन रंग होइ गोरी ॥
झंखत फिरै प्रकट नहिं होई । अन्तर भक्ति ऊपर होइ छोई ॥
प्रेमवन्ती होइ सुरति निहारै । आप तरै औरन कहँ तारै ॥
करै दंडवत निर्भय नारी । भक्तिवन्त बहु लीला धारी ॥
बिगसित बदन शीलकी आखी । कुल परिवार भक्तिगणसाखी ॥
सतगुरु नाम सुनै सचुपावै । मण्डल चारि शब्द फैलावै ॥

हर्षित होइ सतगुरु गुण गावै । भक्ति कि बात सदा मन भावै ॥
गुरु सनमुख होइ सेवा लावै । सदाकाल तेहि मस्तक लावै ॥
संपुट वदन क्षीणता होई । सतगुरु शब्दहि एक बिलोई ॥
सतगुरु देखि न परदा आनै । शब्दकी चाल सदा पहिचानै ॥
सदा अधीन रहै तनमांही । भागे काल देखिके ताही ॥
कर जोरे सनमुख शिर नावै । लाज कानकी दशा मिटावे ॥
ऐसी लक्ष गहै तन पासा । पावन पान लोक होइ वासा ॥
ऐसी लक्ष विचारेउ हंसा । दीन्हेउ ताहि शब्दकर अंशा ॥
लाज काज कह देहु बहाई । भेद सुधारत काल पराई ॥
माता बेटी भई नेबारी । लज्जा तजिके काल बिडारी ॥
लोक लाजकी दशा मिटावे । तौ रिपुकाल निकट नहिं आवे ॥
रामचन्द्र त्रिभुवन के राजा । लोकलाजबस कपिदलसाजा ॥
जानि परी नहिं यमकी वानी । ताते काल कीन्ह तन हानी ॥
लाज लिये तन करै उदासा । तेहि मन भरम भूतकरबासा ॥
गुरुसों करै कपट चतुराई । चाल विहून कालपुर जाई ॥
भक्त कहावे लज्जा नहिं तोरै । निश्चल काल नर्क महँ बोरै ॥
भक्त करै कुल दशा मिटावै । परदा ठानि कालपुर जावै ॥
सो सतगुरु जो होय सयाना । चाल चलावे शब्द प्रमाना ॥
आगत परदा मेटि बहावे । पाछे भक्ति पन्थ महँ आवै ॥
कपट छांडिकै शीस उतारै । हंस दशा धरी मुक्ति सुधारै ॥
शीस उतारि हाथ पर लेई । पाछै पाँव ताहिपर देई ॥
भक्तिका चित हर्षित होई । ममता मोह लहर तज दोई ॥
कामिनि कनककालकरफन्दा । भयउ कालकपटि मन मन्दा ॥
धुवो शीस अर्पना लाई । मुक्ति पंथ पावै तब भाई ॥
पावे भेद शब्द सहि हानी । काल कल्पना मेटै जानी ॥

समय–निहुरीनिहुरे नाचै, चारिउ अंचल छोरी ।
धनी पियारी होइ रहै, यमसो तिनुका तोरी ॥

चौपाई

इहि विधि मुक्ति गहे जो कोई । ताकौ आवागौन न होई ॥
आवागौन विचारै जानी । काया कष्ट होइ नहिं हानी ॥
सतगुरु शब्द जो लागा रहै । निकसि चरण सतगुरुको गहै ॥
तीन लोक नाद जय जाई । सतगुरुको पग रहै समाई ॥
तिसरी श्वासा साधे जानी । कुलअभिमानमिटैसबखानी ॥
नरको लक्ष पारख करि लेहू । पाछे वाह ताही कइ देहू ॥
चंचल चपल कुटिल तन होई । पान पावै तन जाय बिगोई ॥
ताको लक्षन नर्ककी खानी । बोधत हुई दुवोंकी हानी ॥
राजा वरण तन बन्सी लावै । आप नष्ट होइ और नशावै ॥
जो वाकी संगति बैठे जाई । अपनी दशा ताहि पहराई ॥
सो सतगुरु जो होय सियाना । लक्षण देखि देइ तब पाना ॥
आगत पान धरे चितलाई । पाछे निर्णय शब्द बुझाई ॥
पानलेत चित हर्षित होई । चालु चलै नहिं दुर्मति खोई ॥
ताहि देहु गुरू पिपीलका । लक्षण हीन रेष होइजिसका ॥
तापर अंक लिखे सहिदानी । काल कलाधरि देइ निशानी ॥
जेसा लक्ष जाहिपइ होई । पान देहु तेहि तहाँ बिलोई ॥
भामत पौन लिखै तेहि माहाँ । दिटै इलाका गुरुको ताहाँ ॥
जाके होई सुमतीकी खानी । ताही देहु गुरुनाम निशानी ॥
राज बरण मुख शीतल बानी । तायट होई ज्ञानकी खानी ॥
पूरी तरव पान जो पावै । यमकी नाक छेदि घर आवै ॥
राजवर्ण होय क्षीण शरीरा । ता घट काल करै नहिं पीरा ॥
राजबरण मुख गुंज चतेरा । सो जिव होय कालको चेरा ॥

तापर काल लिखै सहिदानी । बोलत धीर हृदय कुबानी ॥
लक्षण भेद कहो सहिदानी । कालसभा भयभीत निशानी ॥
कालकला निरखेहु बहु भांती । करहु विचार दिवस औ राती ॥
कृपण होय माया नहिं छाडै । जोरी जोरी बरनि महँ गाडै ॥
आशा रहे तहां लपटाई । मुक्ति होय नहिं यमघर जाई ॥
देइ ताहि विष गंजित पाना । करम रेख सब देह पयाना ॥
नेत्र बिलोन मसा मुख होई । करत कल्पना जाय विगोई ॥
लवा शीश होय मुख छाही । हृदय कठोर दया नहिं ताही ॥
मध्य कपोल होइ तिल खानी । बांये तत्व लै बोलै बानी ॥
बांये विभौ मासा जो होई । दहिने दारुण तेज समोई ॥
बांये विभौ ताहिके होई । अंत चलै जिव सर्वस खोई ॥
गहरी चितवनि मुख चतुराई । लंपट चोर होइ दुखदाई ॥
छोटी गर्दन राजस भारी । मिथ्या बोलै होय खुआरी ॥
ता घट जीव दया नहिं होई । बोधत ताहि काल पुर रोई ॥
जान ऊपजै कुमती शरीरा । तेहि जनि देहु मुक्ति बलवीरा ॥
एक समय पान जो पावै । आपु जाइ संगति बगरावै ॥
विषयहि लम्पट होय जुआरी । इनते होइ है पन्थ खुआरी ॥
शब्द पेलीजानि पांव छुआवहु । महाविकार तन कष्टहि पावहु ॥
ताते आगम कहौ पुकारी । कुमति छुडाय पान निरुआरी ॥
हर्षित वदन रहै दिनराती । गुरुसों प्रीति करै जेव स्वाती ॥
सोपैही सदा स्वाती आसा । उपजै मुक्ती ज्योति प्रकासा ॥
रहनि गहनि बूझै करजोरी । दीन्हेहु ताहि शब्दकी डोरी ॥
गुरु सन्मुख होइ सेवा लावै । काम क्रोध ममता बिसरावै ॥
सदा अधीन रहै गुरुआगे । पावै शब्द सहज अनुरागे ॥

गुरुपद छांडि अनत नहिं जाई । चुशै अमी रस पीवै अघाई ॥
समता धीर होइ जेहि गाता । तेहि यम कबहि करै नहिं घाता॥
गुरुगम भेद बूझि सब पावै । ममता मोह सबै बिसरावै ॥
समय-गुरुकी आज्ञा आवै, गुरुकी आज्ञा जाय ।
कहै कबीर सो हंस भए, बहुबिधि अमृत खाय ॥

चौपाई

क्षीण अधर औ नेत्र विसाला । गुरुगमी बोले शब्द रिसाला ॥
जो कोइ तपत ताहि पहँ आवै । अमृत सींचिके ताहि जुडावै ॥
पावै अमृत हर्षित होई । मोह महाबल जाइ बिगोई ॥
शब्दकी परच बोलै बानी । तन अभिमान बिसारे खानी ॥
तत्त्व तमाशा निश दिन देखै । भाव अभाव एक करि लेखै ॥
आसन मारि समाधि लगावै । एक पग संपुट पाछे लावै ॥
उलटी बाँह शीशपर राखै । पूरणतत्व अमीरस चाखै ॥
पलकन मारै राखै साधी । तिरवेणी तट राखि समाधी ॥
अमर महातम तत्वहि राता । दशै सूख सागरके दाता ॥
ज्ञान महातम तबही पावै । अमर समाधि एकपल लावै ॥
तबही मिटै काल करदाऊ । दुविधा दूसर सब बिसराऊ ॥
अमर समाधि महा फल पावै । जमदारुन तेहि शीश नवावै ॥
करपग कोमल रोग न व्यापै । काल कला तेहि देखिके काँपै ॥
अखंड मंडल गुफाके तीरा । दरशै ज्योति अखंडित धीरा ॥
जो देखै तो प्रकटै चोरा । देखे बिना ज्ञान होय भोरा ॥
तत्व समाधि लगावै जानी । उपजै ज्ञान अमी रस खानी ॥
सत्य सुकृत पग परसै जाई । रोग न व्यापै काल न खाई ॥
तत्व तमासा गुरुमुख देखै । तत्व छाडि निहतत्व बिबेखै ॥
तत्व समाधि करै नित पूजा । सत्य सुकृत तजि और न दूजा॥

पाँवके ऊपर पाँव चढावे। हाथ फेरिके संपुट लावे ॥
संपुट शीश छुआवै जानी। निरखै अरध उरधकी वानी ॥
कसनी कसै बहत्तर डोरी। सुरति शब्दसों राखै जोरी ॥
अधर अवाज लखै निरबाना। राग छतीसौं सुने बँधाना ॥
मुरली टेर अर्ध धुनि होई। ज्ञानगुफा चढि निरखेहु सोई ॥
सुनत अर्ध धुनि उन मुनिराता। बूझै आदि अन्तकी बाता ॥
मन मकरंदी के गुण पावै। मगन होइ चंचल नहिं धावै ॥
मन सर होई सरै सब काजा। छाँडे कपट शीश बिनुराजा ॥
नख शिश मनै बियापै सोई। मन चीन्हे मन आपै होई ॥
येह मन शक्ती येह मन सीवा। येह मन पांच तत्त्वको जीवा ॥
इह मन लेके उन मुनिरहै। तीन लोककी बातैं कहै ॥
ऊन मुनीमें रहै रहावै। ताकर हंस काल नहिं पावै ॥
ऊनमुनी महँ लावै तारी। अङ्गमें महलमहँसुरति बैठारी ॥
उनमुन महँ जो वासाकरै। अगम महलमें सुरति लै धरै ॥

समय-उन चढी आकाशको, गई गगनपर छूटि।
हंस चले जो जात हैं, रहे शिर कूटि ॥
उन मुनीमें धर्मदासबसै, बंक नाल गहिजोर।
शिर ऊपर सतशुक्ति तहै, तहां शीत शब्दकी डोर ॥

चौपाई

उनमुनी सांची सुरति है बासा। धर्मदास गहि राखहु पासा ॥
सोहं सार मूल धुनि राता। तासु नेह मिले दाता ॥

समय-हंसा सोहंग मान करै, निकसि खेल मैदान।
तहां सुरति बैठारिकै, नित प्रति लावै ध्यान ॥

चौपाई

अमर आसन करौ बिचारी। धर्मदास यह कथा निनारी ॥

जो कोइ मूल ठीक धरि आवै । सोई अमर समाधि लगावै ॥
सार समान रहै दिन राती । पावै आदि अन्त उतपाती ॥
अमर महातम पावै नीका । अमरसमाधि को गहै धरि ठीका ॥
पांच पचीस सकल सब जानै । आवत जात श्वास पहिचानै ॥
श्वास सार शब्द निरुआरै । अमरसमाधि को भेद विचारै ॥
निशि वासर है शब्द समाना । जागत सोवत एक ठिकाना ॥
अमरमूल धुनि शब्द समाई । बोलै ज्ञान गमी अधिकाई ॥
लावै अमर मूल महतारी । अटल रहै मति टरति न हारी ॥
अमर सुहावन आसन मूला । नख शिख भेद गहै अस्थूला ॥
तनकी लक्ष्य लखै विस्तारा । लक्ष्य अलक्ष श्वास गुंजारा ॥
लक्ष्य लखै सो साधु कहावै । बिना लक्ष्य सतगुरु नहिं पावै ॥
सतगुरु चीन्है के सहिदानी । काल व्याल भयभीत निशानी ॥
काल काल बन रेख बनावा । नख शिव जानै तासु सुभावा ॥
पतरी ग्रीव नासिका भारी । भृकुटी देह नेह होइ कारी ॥
दहिने ग्रीव मासा को बासा । गुण गंभीर ज्ञान परकासा ॥
नेत्र रसाल बदन मनिहारा । शब्द सनेही सदा पियारा ॥
सदा हृदय सतगुरुकी आसा । बोलै ज्ञान गर्मी परकासा ॥
पूरण लक्ष पक्ष दोइ होई । शब्द गहै बहु भेद बिलोई ॥
ललाट पाट रेखा होई चारी । सुरति सनेही सुरति सुधारी ॥
तेहि जानेहु पीछल सहिदानी । पाछिल बोध भये सब हानी ॥
सुनत शब्द मिलै सो आनी । शब्द सनेह गहै चित्त जानी ॥
पलक छत्र औ झीने बोलै । धावत पान कपट सब खोलै ॥
ताकह जानहु हंस सुहेली । आनि मिले यम परदा खोली ॥
भीतर वचन कहे हित जानी । पाछिल सुरति भई जत हानी ॥
चरण टेकि चित बोधहु जानी । जाते आगे होइ न हानी ॥
रोष करहु तो मोर दोहाई । गुरुको रोष लोक नहिं जाई ॥

समय-गुरुते माथेते उतरै, शब्द बेहुना होय।
ताको काल घसीट है, राखि सकै न कोय॥

चौपाई

गुरु भृङ्गी कर एक सुभाऊ। मेटे करम करे मुकताऊ॥
शीख जो मन बसिदुबिधा करई। गुरु पुरा होई चित ना धरई॥
चित तो धरे शीख बिगारै। आपु सहित भवसागर डारै॥
दीन दयाल गुरुनकी रीति। जैसे चन्द चकोरहि प्रीति॥
सीखे सिखापन बहुविधि देही। भरम मेटि निर्मल करि लेई॥
शीख भेद जो पूछे आई। क्रूर होइ तौ उठै रिसाई॥
पूर होइ तो शीखहि बोधे। कलह कलपना तजिके सोधे॥
शीश अज्ञान पार नहिं पाई। ताते करै कपट चतुराई॥
करै कुटिलता बोलै जोरा। गुरु पूरा होइ करै निहोरा॥
समय जानि बचन मुख बोलै। कहुँ शीतल कहुँ तेजस डोलै॥
समय जानि बचन मुख बोलै। कहु तेजस कहुँ शीतल डोलै॥
जब जब शिष्य करै अज्ञानी। हृदय शुद्ध मुख कहै कुबानी॥
भाव विचारि शिष्य सों कहहीं। शिष्य की दशा जो नीके लहही॥
जोर कहनको शिष्य डराई। गुरुशब्द महँ लेइ मेराई॥
गुरु पूरा होय ताहि सुधारै। करम काटि भव सागर तारै॥
गुरु सुवास सबके सुखदाई। गुरु राखै तो काल न खाई॥
जानेहु ताहि काल अभिमानी। काल अङ्ग धरि प्रकटे आनी॥
गुरु नाता धरि शिष्य नशाई। रहनि गहनि नहिं एक लखाई॥
अज्ञान दिसासे शिष्य कहावै। गुरु होय गुरुगम समुझावै॥
शिष्य करै बहु चञ्चलताई। गुरु पुरा होय लेइ बचाई॥
गुरुकी दशा ज्ञानकी भाऊ। अज्ञान दशाते शिष्य कहाऊ॥
रण ज्ञान गमी जेहि होई। हंस उबारन सत गुरु सोई॥

सतगुरु कला अनन्त कहावै । ताकर भेद शिष्य किमि पावै॥
ताते शिष्य कहिय अज्ञाना । गुरु बतावे शब्द निर्वाना ॥
शिष्य नाता धरिजो कोइ आवै सतगुरु होइ सत राह बतावै ॥
गुरु सोई जाको चित थीरा । सुरति सरोतर साजे बीरा ॥
केतो चूक शिष्य सों परई । सतगुरु पूरा सब परि हरई ॥

समय–जाका चित्त समुद्रसा, बुद्धिवन्ता मति धीर ।
सो धोखै बिचलै नहीं, सतगुरु कहै कबीर ॥

चौपाई

लक्षण लक्ष्य बिचारै जानी । निरखै आदि अन्त सहिदानी॥
गुरु पूरा शिष्य होय उदासा । गुरुगमन लेई शब्द परकासा ॥
आदि अन्तकी परिचय लेई । पाछे भेद शब्द तेहि देई ॥
परखै परिचय परखै रेखा । शब्द सनेह सुनावै लेखा ॥
त्रिकुटी तीर गुञ्ज जो होई । परिखै शब्द रहै तन गोई ॥
ममता मोह करै हंकारा । अन्तर कुटिल चतुर वरिआरा॥
पलक भुअङ्ग परोहन साथा । हृदय मलीन नवावै माथा ॥
वरोनीपर जो गुञ्जै गुञ्जा । महा सुबुद्धि होइ मुख पुञ्जा ॥
हृदय मलीन होय मुख छाहीं । गुरु गमि शब्द विचारै नाहीं ॥
लहसन मासा होय मुखमाहीं । शुक्री रवी जम।हिकी छांहीं ॥
राज बरन औ लँबी देहा । गुरुगमि शब्द बिचारै नेहा ॥
नेत्र कीर्ति कुटि वृक्षकी शाखा । बोले सदा मधुर धुनि भाखा ॥
बरण छीन लौ नेत्र मलीना । हृदय कपट मुख रह अधीना ॥
भ्रुकुटी ऊँच शीश छतनारा । ज्ञान महाबल कथै अपारा ॥
लम्बी नासिका श्रवण है छोटा । हृदय शुद्ध मुख बोलै खोटा ॥
राज बरनहि मोट तन भारी । छोट शरीर ज्ञान अधिकारी ॥
मोटी नासिका ऊँच लिलारा । ज्ञानहीन मन कथै अपारा ॥

पातरि अधर कपोलन्ह माँसा। ज्ञान महाबल कथे निरासा॥
धरनी धीर धरै गरमाई। डाढी दरबर औ बहुताई॥
आगै ग्रीव गुंज होइ भारी। माया सवन क्रोध अधिकारी॥
भुज भुअंग नागिनि मनिहारा। करपग रसना रेख सुधारा॥
रेखा चारि होय चतुरंगा। काल कला धरि प्रकटे अंगा॥
करपर होइ दीर्घ भण्डारा। ताके निकट भजनकी धारा॥
सोई धार अखंडित होई। क्षीण भंग मति गहे बिलोई॥
धारा मिलि अवधी कह आई। हंसदशा धरि पंथ चलाई॥
सो धारा होइ मोट सनेही। ज्ञान गहे मति धरे ना देही॥
वारिष धारा मिलै सुधारा। हृदयशुद्ध प्रीतम मनियारा॥
भजनभंग कबहूँ नहिं होई। गहै शब्द गरभेद बिलोई॥
यशकी रेख बिचारै जानी। जेठे पलौ जीवकी खानी॥
तैसे ताहि बिचारहू रेषा। तहाँ तहाँ तस कर्म विशेषा॥
अवधिके नीचै चुंगल होई। अयश करत यश पावे सोई॥
विश्वा जानि लक्ष गहि लेऊ। जस विश्वा तस सुमिरण देऊ॥
बिश्वा बीस होय नर पूरा। शब्द सनेही गुरुगमि शूरा॥
अंडज होइ जड जनमें आई। घटी बढी होइ अंक लिखाई॥
पिंडज खानि देह धरि आवे। बारह पंद्रह अंक चढ़ावे॥
ऊष्मज होइ जग लेइ अवतारा। नरके कर दश अंक सुधारा॥
अचल खानि जग जन्मे आई। बत्तिस विश्वा अंक चलाई॥
चारि खानिकी लखै निशानी। दीहेहु ताकहँ शब्द सहि दानी॥
खानी लक्ष विश्वा लखि राखै। कर्म अकर्म भिन्नके भाखे॥
पिंडज चारि भांति तन होई। कर्म अकर्म सुधारै सोई॥
कर्मी नाहर घातिक जेता। अंक सुधारि लिखै कर तेता॥
जे के करमह सती औ गेडा। लिखै अंक करमकर बेडा॥

गाय भैंस परमारथ खानी । जैसे अंक सुधारै जानी ॥
पशु पक्षी परमारथ होई । नख शिख रेखा लखे बिलोई ॥
अंडज चार बरनकी काया । कर्म अकर्म तहाँ निर्माया ॥
अंडज मीन सुफल तन होई । तैसे अंक सुधारे कोई ॥
अंडज पक्षी तन निरदाया । तहाँ तहाँ तस अंक चलाया ॥
करमी पंछी जोरा बाजा । तैसे अंक सुधारै साजा ॥
अंडज नाग कर्मकी खानी । बोरे काल नरक सहिदानी ॥
ऊष्मज बरन चारि तन होई । गुण अवगुण सब लिखै बिलोई ॥
भृंगी आदि कीट सुखदाई । भजनके अंक लिखै यमराई ॥
बहुतक कीट होय सुखदाई । मारि खात नर रोग नशाई ॥
तासु लिखै परमारथ खानी । कर्म अकर्मकी सुनिये बानी ॥
एक कीट दुखदाई होई । कीटहि कीट खात है सोई ॥
सो निशान करमकर होई । जेतिक अंक लिखै तन सोई ॥
एक कीट नर दृष्टि न आवै । तेहि अवगुणते काल नचावै ॥
अचल खानि की चारि निशानी । गरम शीतल लिखे अमृतवानी ॥
गुण औगुणको करै विवेका । गुण अवगुण नरके कर रेखा ॥
सो सतगुरु जो सोइ सयाना । चारि खानिको लखै निशाना ॥
पाप पुण्यको करै विचारा । ताहि तहाँ निज पान सुधारा ॥
कर्म जीव कर्महिकी खानी । काल कर्मकी बोलै बानी ॥
सतगुरु सोइ जो लक्ष्य विचारै । लक्ष्य विचारिके पान सुधारै ॥
चोर साहुको करै विचारा । भाव विचारि पान निरुआरा ॥
कपटी जीव कर्मबसि अंधा । शब्द सुनत चित होइ विष मंदा ॥
अस कर्मज जब देखि बिचारै । कर्म मिटाय पान निरुआरै ॥
खानिकी लक्ष फेरि जब लेई । तब तेहि शब्द परीक्षा देही ॥
विश्वा निरखि विचारै रेखा । गुण अवगुणका जानै लेखा ॥

कर पलौ कर रेख विचारै । तिरछि विषमको लेख सुधारै॥
तिरछा रेख बिस्नाकी खानी । जस देखै तस बोलै बानी ॥
विषम रेख कर्मंज अधिकारी । जत कर्मंज तत रेख सुधारी ॥
ततका मल हरि परसे परनारी । सुनो धर्मनि मैं कहौं विचारी ॥
नख उज्ज्वल होइ गुंज चितेर । कलह कल्पना यमकर घेरा ॥
करपर लिखै विषमकी खानी । गुण औगुणकी लिखै निशानी॥
तिरछा रेख नारीकर नेहा । तासु नेह सुत सुता उरेहा ॥
माता पिता बन्धु भरतारा । विषमरेख यम लिखै बिचारा॥
अवधि तीर दोउ तिरछा उरेहा । भक्ति भंडार विषमकर नेहा ॥
मीन पूछ भंडार सुधारी । सुख संपति बिभौ तन टारी ॥
नवो खण्ड यमरेख सुधारी । सुख संपति बिभौ तन टारी ॥
गुण अवगुणसबतबहि लिखावहु। युक्ति जानिके हंस चेतावहु ॥
हंसा दासा तबही नर पावै । जब करताकी दशा मिटावै ॥
काल कर्म कालकी खानी । चाल चलावै नरकाग समानी॥
काक कुबुद्धि तेज तनमाही । सतगुरु शब्द बतावहु ताही ॥
काक कुबुद्धि तजे कुटलाई । तब सतगुरुकै शरण समाई ॥
काक कुबुद्धि तत चाल मिटावै । तब निर्वान परमद पावै ॥
बुद्धि फेरि पलटावै बानी । सतगुरु शब्द गहे सहिदानी ॥
लोक लाज कुल दशा छुडावै । तब कौआते हंस कहावै ॥
यम रेखन की जानै बानी । सौ सतगुरु सोइ तत्त्व ज्ञानी ॥
रेखा विना न लेखा पावै । बिन लेखा नहिं गुरू कहावै ॥
सूकर स्वान गीध औतारा । विनु यमरेख लखै नहिं पारा ॥
यमकी रेख सकल जब जाने । गुण अवगुण तबही पहिचाने॥
करपर होय चक्रकर थाना । शंख सीप गुरु भेद बखाना ॥
पाँचों चक्र होय सम तूला । योगकला चतुरथ अस्थूला ॥

एकचक्र अथवा दुइ होई । कछु ज्ञानी कछु दुर्मति खोई ॥
तीनि होय तो होय उदासा । चार होय तो सूर्य प्रकाशा ॥
पाँचो शंख होय करमाहा । दुख दारिद् जान अवगाहा ॥
सीप होई तौ होय उदासा । शब्द प्रतीत शब्दकी आसा ॥
नखशिख रेख बिचारेहु जानी । तबहि सुधारेहु हंसकी खानी ॥

समय-नख शिख जानिके, तबहि सुधारेहु पान ।
भर्मभूत नहिं दर्शही, हंस होय निर्बान ॥

चौपाई

निरखेहु आदि अंत सहिदानी । गुण अवगुण देखहुँ बिलछानी ॥
कर्मजीव काल अधिकारा । कर्मके घर लेई अवतारा ॥
वरण भेद परिखै कुल जाती । रेखा लेख देखै उतपाती ॥
कर्मी काल कर्म वश होई । गुण अवगुण सब देखि बिलोई ॥
उपजे चोर जुआरी झूँटा । कर्मी काल कर्म घरि लूटा ॥
कामीके घर कर्मी होई । कर्म रेख तब देख बिलोई ॥
कर्म खानि कायामहँ बासा । सुनै शब्द चित होई उदासा ॥
भर्म भूतकी गहै निसानी । पूजे शिला औ उलछै पानी ॥
मारु मारु मुख बानी भाखै । मन बशि जीव काल घर राखै ॥
नेत्र बिरह रस भ्रुकुटी छीना । कबहूं चंचल कबहुँ मलीना ॥
बालक होई पौनके साथी । मदमाते जस मैंगल हाथी ॥
तिन जीवनकी दशा मिटावै । पाछे सत्य शब्द समुझावै ॥
पद्म मुरक जाके तन होई । सो कर्मी जग जीवै लोई ॥
दया लगनकी परमित पावै । निर्मल हो सत्यलोक सिधावै ॥
नेत्र विशाल रक्तकी झांई । सुरति सनेह ज्ञान बहुताई ॥
जब तब चितमहँ संशय आवै । ज्ञान गम्यते मार बहावै ॥
ताकी निर्णय अगम सुभाऊ । पावै सत्य शब्दको दाऊ ॥

काग बुद्धि मन दशा छुडावै । पावै शब्द लोक सो आवै ॥
स्वेत कुष्ठ मद गात मलीना । कर्म बिबश विषयी लौलीना ॥
जहद कुष्ठ मोती मनी भारी । धुन्ध कुहेर बहिरी रकतारी ॥
शून्य भाग्य दाग मतिमारी । फोकट कुष्ठ औ गंध पहारी ॥
रक्तबिकार जहर धुनि फीका । अंग मलीन कर्मको लीका ॥
पाछिल कर्मज नरकी देहा । परखे सतगुरु शरण सनेहा ॥
तासु निशान परखिके काया । नेत्र गुञ्ज विषवाण बनाया ॥
कर्म निशान दशा पहिराया । तनविकार गुरुवचन नभाया ॥
तेहि जनि देहु मुक्ति बर बीरा । निश्चय काल करै बड पीरा ॥
पीरा सहै जीव शब्द न मानै । गुरु निन्दा निशिबासरजानै ॥
निन्दा करत जाइ यमदेशा । ज्ञान बुद्धि नाह गहै सदेशा ॥
गुरुकी दया जो मुखमहँ आनै । लोभ लहरि ममता मनसानै ॥
कबहिं न होहि ताहिकरकाजा । कितनों करै बुद्धिकर साजा ॥
गुरु निन्दा कुष्ठी औतारा । परै रौर नरककी धारा ॥
सो सतगुरु जो होहि सयाना । ऐसे जीव कहँ देइ न पाना ॥
पान लेइ अंतै अगडावै । स्वर्ग नर्क महँ ठांव न पावै ॥
तनकी दुर्मति लहै न पारा । भजै राज नर्ककी धारा ॥
कर्मी खानि दहै नर पावै । पाछिल अवगुण संगहि आवै ॥
तेहि जनि देऊ शब्दसहिदानी । मानहु सत्य शब्दकै बानी ॥
धोखे आइ पान जो लेई । पाछे समुझि सिखावनि देई ॥
सुनत सिखावन हर्षित होई । ताहि देहु गुरुशब्द बिलोई ॥
गुरु की त्रास करै लौ लीना । सुनत सिखापन होइ अधीना ॥
मानै त्रास रहै लौ लाई । पावत पान करम कटि जाई ॥
उतपनि लगनजो साधहु धीरा । ताहि लगन सँग साजहुबीरा ॥
नाम पान पाँजी समुझायहु । सत्य शब्दकी रहनि बतायहु ॥

कामिनि कनक कलाकी फंदा । अरपै दुनौ शीश मनमंदा ॥
कामिनि अरपै कनक चुरावै । इहि विधि हंसलोकनहिंआवै ॥
कनक अरपि कुलभावदिखावै । वाजी दिखाइके कलाछिपावै ॥
कामिनि कनक करै सम तूला । पावै शब्द मुक्तिकर मूला ॥
चाल विना लागै बडि वारा । तामें नहिं है दोष हमारा ॥
चाल चलै कुलदशा मिटावै । भक्तिसार धरि लोक सिधावै ॥
कथनी कथै करनी नहिं जानै । ताते अवगुण सबै बखानै ॥
कथनी कथै लोक नहिं जाई । भात कहे नहिं भूख बुझाई ॥
पानी कहे प्यास नहिं जाई । कथनी कथै पाछे पछताई ॥
कथनी थोथर करनी सारा । कथनी कथि कथि हुये गँवारा॥
कथनी कथि जो करनी करै । कहैं कबीर सो प्राणी तरै ॥

समय–करनी बोलै पारकी, करपै लै व्यवहार ।
करनी कर शब्दै गहै, उतरै भवजल पार ॥

चौपाई

महा शून्यके भीतर रहई । सत्यलोक की बातें कहई ॥
कहै अर्थ कथ करै विचारा । कहै कबीर सो शिष्य हमारा ॥
कथै आन करै जो आना । सो अब जानहु पशू समाना ॥
जैसा कहै करै पुनि तैसा । हैं हमहीं हमहीं सो ऐसा ॥
करनी करै कहै तब बाता । ताहि मिलै गुरु समरथदाता ॥
कथनी कथै गर्भ होय भारी । बिनु करनी सब यमकीबारी ॥

समय–करनी गर्भ निवारनी, मुक्ति सारथी सोय ।
कथनी कथि करनी करै, तो मुक्ताहल होय ॥

चौपाई

इहि विधि गहै शब्दकी आसा । निश वासर हम ताके पासा ॥
अति अधीन करनी कर शूरा । करनी किये मिले गुरुपूरा ॥
शूर होय करनी मन लावै । भक्ति करै जगबहुरि न आवै॥

करनी शूरा कथनी सार । करनी केवल उतरै पार ॥
करनी करैं शूरमा होई । कादर करनी करै न कोई ॥
शूरा होय तौ करनी आवै । कादर होई सो बार लजावै ॥
समय—शूरा सोई सराहिये, अंग ना पहिरे लोह ।
लरै सकल बँद खोलिकै, मेटै तनकर मोह ॥

चौपाई

सदा अधीन रहै तनमाहीं । परिचे शब्द विचारे नाहीं ॥
रहे अधीन सतगुरूके आगे । निशवासर सेवा चित लागे ॥
जो लगि नहीं अधीनता आवै । तब लगि सत्य शब्द ना पावै ॥
समय—नहीं दीन नहिं दीनता, नही सन्त सन्मान ।
ताघर यम डेरा किये, जीवतै भया मसान ॥

चौपाई

सदा अधीन रहै जो प्रानी । दीनेहु ताहि शब्द सहिदानी ॥
कुल अभिमान महानद भारी । भक्ति पन्थ गहि ताहि सुधारी ॥
शब्द लेइ कुलदशा न तोरे । तेहि यम विषम सरोवर बोरे ॥
भक्ति करै कुल कानि न खोवै । आवागोन गर्भ सुख गोवै ॥
जननी बेटी भैनी बाला । बहिन भयए ततक्षण काला ॥
इन्हते होइहि भक्तिकी हानी । लाज नदी महँ बोरे आनी ॥
कुलकी राह बहारै लोही । कुलना तयारी छुती बिगोई ॥
समय—कुलकरनीके कारने, हंसा गये बिगोय ।
तब काको कुल लाज है, जब चला चलाको होय ॥

चौपाई

कामिनि कनक कालकी खानी । काल कला धरि बोलै बानी ॥
इनते होय भक्ति कर नाशा । ताते बहुरि गर्भ महँ बासा ॥
परदा प्रकट जबै ना होई । बोलै वचन मधुर धुन सोई ॥

परदै रहै लाजकी बँधी । परदा साथ कालकी सँधी ॥
गुरुसों कपट करी धन लीनी । सुरति निरति बिनुकाल अधीनी॥
कामिनी परदा सति सो ठानै । लाज लिये मुख बात न आनै॥
गुरुके परदा बांचै नाहीं । बूडै विषम सरोवर माहीं ॥
गुरुसम मात पिता सो नाहीं । गुरु बिन बूढि सरोवर मांहीं ॥
गुरुसम मात पिता नहिं होई । मात पिता गुरु जानहु सोई ॥

समय–जे कामिनि परदै रहै, गुरुमुख सुनै न बात ।
ते कामिनि कुतिया भई, फिरै उघारे गात ॥

चौपाई

लोकलाज पति सबै बिचारा । लक्षण लक्ष्य सबै निरधारा ॥
जाको होई भक्तिकी आसा । सतगुरु चरण करै विसवासा ॥
तजै गर्भ जो निकसी आसा । पावै सतगुरु चरण निवासा ॥
यमको अन्त जानि जो पावै । भवसागर तब साधु कहावै ॥
सतगुरु चरण गहै चित जानी । मेट कुटिल कर्मकी खानी ॥
सन्त कहावै अन्त सम्हारी । चौदह काल चरण चित धारी॥
चौदह यमकर सकल पसारा । सतगुरु शरण होई निरुयोरा ॥
चौरासी कर करम अपारा । बिनु सतगुरु का करै उबारा ॥
गुरु करता गुरुदेव नरेशा । बिन गुरुगम सब भेद अनेशा ॥
गुरुसे दूसर और न कोई । जाते मुक्ति पदारथ होई ॥

समय–गुरुकरता कर मानिये, रहिए शब्द समाय ।
दर्शन कीजे बन्दगी, सुनै सुरति लगाय ॥

चौपाई

आगे मिलै बन्दगी कीजै । पाछै चरण कमल चित दीजै॥
शब्द सुरति मिलि रहे समाई । ताप तपै नहिं सुरति समाई ॥
एकै देह एक अस्थूला । एकै भाव भक्ति कर मूला ॥

शिष्यके हिरदै गुरुके बासा। शिष्य रहै गुरुचरण निवासा॥
गुरु शिष्यसों अन्तर नाहीं। मन है एक देह दुइ ताहीं॥
शब्द स्वरूप गुरूकर बासा। सुरति स्वरूप शिष्यकी आसा॥

समय-गुरू समाना शिष्य महँ, शिष्य लियाकरि नेह।
विलगाये बिलगै नही, एक प्राण दुइ देह॥

चौपाई

ताहि गुरूसों सत्य जो कीजे। बाहर अंतै चित्त ना दीजै॥
जो गुरु शिष्य हृदय नहिं होई। तासों सत्य करै नहिं कोई॥
गुरु बाहर शिष्य भीतर आवै। दुबिधा धोखा काल तेहि लावै॥
सत्य होय सो सत्यहि जानै। गुरुकहँ राखि हृदयमहँ आनै॥
गुरु हृदये सो बसै निनारा। सत्य करत जाई यमद्वारा॥
गुरु शिष्यसों बाहर बसई। सत्य करत काल तेहि डसई॥
गुरुकी मति अंतै रहै बासा। शिष्यकी मती गुरुके पासा॥
ऐसे गुरुसों सत्यजो करहीं। सेवा करत काल तेहि धरहीं॥
शिष्य सयान गुरू अज्ञानी। धोखै होइ दुनोंकी हानी॥
गुरु शिष्यकी मति एकै होई। सत्य करै तारै कुल दोई॥
गुरुकी मति जो शिष्य न पावै। काज विसार चिंता मन लावै॥
गुरुको भेद लखै नहिं बानी। सत्य करै कुमती अज्ञानी॥
नवका ऊपर बहुजीव चढावै। खेवा विना पार नहिं पावै॥
खेवनहार चीन्हि जब लेही। पाछे पाँव नउका पर देही॥
खेवन हार चीन्हि नहिं पावै। नउका चढै सो मूर्ख कहावै॥
सागर सुमति मुक्तिकी धारा। ममती न्याव ज्ञान कडहारा॥
करै विवेक चोर औ साहू। बिना विवेक घाट लागु न काहू॥
चोर जानिके पाँव न देई। साधु जानिके पारहु जेई॥
चोर साहुकर भाव बतावा। सागर नाव धार दिखलावा॥

चोरके नाव चढै जो कोई । सागर पार कबहुँ नहिं होई ॥
साहुकी नाव होइ असवारा । सागर उतरत लाग न वारा ॥
सागर पार मुक्ति कर वासा । जो गुरु मिलैतो करै निवासा ॥
घर घर गुरू घरहि घर चेला । लालच बाँचे फिरै अकेला ॥
जैसे श्वान कामबश धावै । तृष्णा बाँधे अंग लगावै ॥
तृष्णा मिटै गांठि जुरि जाई । पाछे शीश धुनि पछिताई ॥
एहि बिधि होइ दुवोजग भूटा । काल कलाधरि गहै न खूटा ॥
ऐसी सत्य करै जो कोई । धोखे जाय काल बसि होई ॥
गुरुकी करनी शिष्य जो पावै । तब सत्य करै सत्यलोक सिधावै ॥

समय-सत्य तो तासों कीजिये, जहवां मन पतियाय ।
ठाँव ठाँवकी सतीसों, कुलकलंक चढि जाय ॥

चौपाई

अंकके मिटत कलंक मिटि जाई । अंकके रहत अकलंक न जाई॥
अंक लिखा यम एहतन माहा । अंक मिटाइ देहु तेहि माहा ॥
नख शिख अंक लिखा यमराई । चौदह कला थाना बैठाई ॥
गुरुगमि शब्द जानि जो पावै । तब चौदह यमफन्द मिटावै ॥
एहि फन्दै सुर नर मुनि भूलै । देह धरी धरि सब जग झूलै ॥
चौदह काल बिकार अन्याई । नर नारी घट रहै समाई ॥
भिन्न भिन्नके न्याय विलोवै । पारस निहार अन्तमुख गोवै ॥
प्रथम काल कामके अंगा । नख शिर व्यापै विषै भुजंगा ॥
चित्तभंग औ कुल व्यवहारा । लाज सनेह सकुच बटपारा ॥
आलस निद्रा रूप बरियारा । लालच लोभ मोह कर धारा ॥
विषय वास बसै बेकारा । इन्द्र चौदह मिलि भक्ति उजारा॥
भक्ति प्रतीत शितल इन्हनासी । प्रेम बिगारि लगावहि फासी ॥
दया धीरज संतोष न आवै । सुमति सहज लै दूरि बहावै ॥

निर्भय ज्ञान विवेक गरासै । सुरति निरतिले उपजत फाँसे ॥
सो सतगुरु जो होय सयाना । निर्भय लगन देइ तिहि पाना ॥
निर्भय दशा सूर समुझावै । क्रूर कपट और भर्म बहावै ॥
निर्भय होइ भय तिनुका टूटा । नरनारी गुरु यमसों छूटा ॥
लगन सनेह गहै सहिदानी । उतपति प्रलय विचारै खानी ॥
आदि अन्तकी लगन बिचारै । सत्य दिशा धरि हंस उबारे ॥
चन्द सूर्य की गहै निशानी । आदि अन्त गुरुभेद बखानी ॥
चंद सनेह लेइ औतारा । सोइ लगन गहि उतरै पारा ॥
ताहि चन्दकी नाकी पावै । सौ पाँजी गहि लोक सिधावै ॥
सूर सनेह विषम जम जोरी । प्रलय काल चौरासी डोरी ॥
सूर्य सनेह होइ सन्धारा । मारिके बहुरि लेइ औतारा ॥
जत उपजै तत बिनशै प्रानी । सूर्य सनेह सबनकी हानी ॥
चाँद सूर्य दोय गढके राजा । पौरि पगार बनौ दरवाजा ॥
अहुँठ हाथ गढ भीतर साजा । कपटभाव माया उपराजा ॥
दुइ दरवाजे बानो किंवारा । एकपट रहै एक खुलै किंवारा ॥
दोइ लगनकी राह संवारी । आवत जात लखै बैपारी ॥
आवत एक राह चलि आवै । फिर तेहि राह जान नहिं पावै ॥
जौनी राह महलमहँ आवै । तहाँ स्वाति मुक्ता बरषावै ॥
तहाँ स्वाति मुक्ता बरषावै । फिरि तेहि रायजाय जो खावै ॥
मुक्ता होय जग बहुरि न आवै । देवरूप होय जय जय पावै ॥
जब आवै तब खुलै किंवारी । जात समय फिरि मारत तारी ॥
जब वह द्वार जान नहिं पावै । तारी मारि बहुरि तहाँ धावै ॥
जाने बिना होय मतिहीना । भूलि परै होय काल अधीना ॥
आवत जौन तुरै चढि आवै । सोइ तुरै यम फेरि छिपावै ॥
आनै तुरै आन सो द्वारा । ताते पैर कालके धारा ॥

भूलै आदि तुरौ अस्थाना । ताते काल देहि बँधि खाना ॥
जौं वह तुरौ अन्त जीव पावै । खोलि कपाट बाहरको धावै ॥
आदि तुरौ चढि बाहर जाई । पाछै काल रहै खिसि आई ॥
आदि तुरौ बिनु द्वार न पावै । बहुरि बहुरि चौरासी आवै ॥
धर्मदास बिनती अनुसारी । सतगुरु हो मैं तुम बलिहारी ॥
आदि अन्त प्रभु कहौ बुझाई । पकर न पावै काल कसाई ॥
अन्त करै पुनि गर्भमें बासा । काया धरे करैं रहि बासा ॥
कायाते जब बाहेर जाई । ताकर भेद कहो समुझाई ॥
मैं आधीन हा मतिके थोरा । चरण टेकि प्रभुकरौ निहोरा ॥
आदि अन्त प्रभु कहौ बुझाई । सो सब जानौ चरण समाई ॥
वर्तमान भाषहु उतपानी । जानेहु आदि भेद सहिदानी ॥
अन्त अवस्था कहौ बखानी । जाते आगे होय न हानी ॥
जाहि द्वार प्रथमें चलि आवै । तुम प्रसाद शब्द लखि पावै ॥
कर्म अकर्म वरण कुल जाती । कहेउ बुझाय दिवस औराती ॥
कर्म अकर्म भाषहु बहु भावा । थमकर अन्त नजरि सब आवा ॥
कर्मरेख काल लखि राखा । गुरुप्रताप जानी सब शाखा ॥
गुणअवगुण सब कहि समुझायहु । गुरू शिष्यकर भाव बतायहु ॥
सो सब जानि गही सहिदानी । आदिभेद गुरु नाम निशानी ॥
नखशिख काल लिखा सहिदानी । सो सब जानिपरी मोहि बानी ॥
करम रेख काल लिखि दीन्हां । सो हम जानि दृष्टिमहँ लीन्हां ॥
गुण अवगुण दोऊकर भाऊ । परिखे काल करमकर भाऊ ॥
जहां २ काल लिखी सहिदानी । तू अदया है सब पहिचानी ॥
नखशिख रेखा काल बनावा । सो जो रेख जानि सब पावा ॥
आदि मध्य भाषहु सहिदानी । सो निशान जानी सब वानी ॥
जो भरि कहेउ सिखावन आनी । सो सब जानि करौ दिलछानी ॥

कहेहु बुझाय मुक्तिके नाहा। रेखा परखि देहु ताहि बाहा॥
गुणअवगुणसबमोहिलखिआवा। रेखा परखि तब पंथ चलावा॥
भाषेहु आदि लक्षकी खानी। सो सब जानि गहो सहिदानी॥
गुणअवगुणसबमोहिलखिआवा। परखौ लक्ष हंसकर भावा॥
लक्ष्य अलक्ष्य दोऊ लखि लेहू। पाछै बाँह हंस कहि देहू॥
नर नारी लक्षण देखि शरीरा। पाछै देहो मुक्तिके बीरा॥
करपर रेखा लखौ सुभाऊ। शीश हृदय नाभी कर दाऊ॥
कच्छ जंग औ मीन निशानी। लक्षण परखि चेतावो जानी॥
चौदह काल विषमंकर दाऊ। शरण सनेह हंस मुक्ताऊ॥
चौरासी कर बीज अंकूरा। संशय मेटि देहु मतिपूरा॥
करमी जीवहि सूम पठायहु। निःकर्मी कह लोक पठायहु॥
यह सब भेद विचारेहु जोरा। दगा देह नहिं पावे चोरा॥
उत्पति भेद सबै मैं पाया। वर्तमान हृदये महँ आया॥
चरण टेककी करौं निहोरा। अंत अवस्था भाषहु थोरा॥
जादिन अंत अवस्था होई। तादिनकी गति कहौ बिलोई॥
जादिन अंत अवस्था आवै। पाँजी भेद कहौ समुझावै॥
जाते हंसहि काल न खाई। मुक्ति होइ सतलोके जाई॥
जैसे आवा गमन बतायहु। आदिमध्य सबकहि समुझायहु॥
तैसे कहो अंतकी बानी। जाते न होय जीवकी हानी॥
धर्मदास मैं तुम्हें बुझाई। अंत दशाकर भेद बताई॥
जा दिन हंस देह तजि जाई। ता दिनकी गति कहो बुझाई॥
सोरह खाई दश दरवाजा। रवि शशि संग जीव तहां गाजा॥
आवा गौन करै दिन राती। गहौ निशानछोडि कुलजाती॥
धर्मदास कुल जाति गँवावहु। तब तुम शब्दहि पारख पावहु॥
शशिके संग गर्भ जीव आवै। जलरंगतत्त्व चढि आनि समावै॥

ताहि संग रहै ठहराई । देह सनेह गहै यमराई ॥
काया परचै गहै निशानी । अंतकाल जीव करै न हानी ॥
जादिन अमल कालकी आवै । आगम भेद हंस जो पावै ॥
पावै भेद चित होय सयाना । गुरुते लेह सुधारस पाना ॥
काया परिचय आगम जानै । आदि अंत कह भेद बखानै ॥
प्रथमहि देह हमारी जो देखै । सो परिचय अवधी घट लेखै॥
अंत देह हम यमकहँ दीन्हाँ । जानि गहै जीव ताकर चीन्हाँ॥
देह हमारी निश दिन देखै । पूरण अटल सुफल तन लेखै॥
जब देखै बिनु शीशकी काया । तब जानै घट काल समाया॥
छटए मास अवधि नियरावै । हमरि देह यम अछप छिपावै ॥
अपनी देह दिखावै काला । तब जीव जानै काल जंजाला॥
हमरी देह लै शून्य समावै । अपनी देह प्रकट दिखलावै ॥
यमकी देह शीश बिनु होई । तेहि देखत जीव जाइ बिगोई ॥
हमरी देह बिमल बिस्तारा । काल देह बहुरंग अपारा ॥
जर्द श्याह औ नील सुरंगा । और रंग बहु कला तरंगा ॥
हमरी देह रंग बिनु होई । नखशिख निर्मल देखै सोई ॥
जादिन आदि पुरुष निर्माया । तादिन देह बरण हम पाया ॥
सोइ देह धरि इहवाँ आए । कला अनंत जीव समुझाए ॥
देह धरे बहु लीला कीन्हाँ । ताते देह कालकर चीन्हाँ ॥
कालकला विष बान बनाया । सोइ विषनीर विषै दिखलाया॥
जब हम चले पुरुषके पासा । काया रही अधरही बासा ॥
काया त्यजी हम भए निनारा । सोई काया रही संसारा ॥
कायाकाल लीन्ह सहिदानी । अपने देश बसायसि आनी ॥
सो काया सबही दिखलाया । जो देखे सो थीर रहाया ॥
सो काया जो अधरहि देखै । शशि संपति सुखबिभौबिशेखै॥

ता काया की यह सहिदानी । सो काया मम हाथ बिकानी॥
ऐसा काल भया अज्ञानी । हमसे लीन्हि सन्देह निसानी॥
नरकी देह कालके हाथा । झाँई चले ताहिके साथा ॥
काया सरी गली इहाई जाई । झाँई जानि गहै यमराई ॥
गहै काल औ लेखा लेई । धोखा लाइ नरक महँ देई ॥
तेकाया कर करै बिचारा । तीन लोक तजिहोए निन्यारा॥
सहज सून मह पकरै काला । झाँई साथ करै जञ्जाला ॥
काया धरिके लज्जित कीन्हाँ । तेहि कायाकर माँगै चीन्हाँ ॥
देह धरे कीहिसि अति चारा । झाँई साथ जाए नहिं पारा ॥
सो झाँई जो इहइ बिबेखे । कंठ ध्यान धरिहम कह देखे ॥
अखंड मंडील मह काया रहई । ताकर भेद जानके गहई ॥
एह काया तजि ईहई बासा । झाँई तजी होयलोक निवासा॥
सत्य शब्द जानै जो कोई । ताको आवा गौन न होई ॥
शब्द शब्द जो जीव न पावै । झाँइ साथ गर्भ फिरि आवै ॥
आवा गौन लखै सहिदानी । आदि अंतकी बूझे बानी ॥
गुण अवगुण झाँईके संगा । ताते काल करै मतिभंगा ॥
झाँई झमकि दिखावै गाता । आदि अंतकी बूझे बाता ॥
हमरी क्योंकर ध्यान लगावै । देखत ताहि परम सुख पावै ॥
जब वह काया काल चुरावै । काया परिचय आगम पावै ॥
काया परिचय भेद बिचारै । नाम सुमिरिके हंस उबारे ॥
अंग अंगकी परिचय देखै । आगमजानि हरषितमन लेखै॥
हर्षित रहै सदा दिलमाहीं । शोक मोह कछु व्यापै नाहीं ॥
कर औ शीश जानिके भावा । मास बरष कर आगमपावा ॥
आगम जानि गहै सहिदानी । बोलै सत्य शब्दकी बानी ॥
आगम जानि रहे लौ लाई । छूटत देह लोक तब जाई ॥

समाधान होइ आगम पावै । ता घट चोर न मूसन आवै ॥
लगन जानि जो पाँजी पावै । तत्त्व सनेह विलोक सिधावै ॥
आगमकी गति काया देखै । पर्वत नाम मंडल हित लेखै ॥
पर्वत पांच नाम अनुमाना । कहौ भेद सुन संत सुजाना ॥
पाँचौं पर्वत नजरि समावै । काया भेद नजरि तब आवै ॥
रवि लीला एक पर्वत भारी । चंद उनेह दूसर अधिकारी ॥
दुइके बीच सुमेर अनुमाना । देखत ताहि हंस निर्बाना ॥
चौथे मलया गिरि कैलासा । गोमत नाम पँचए परकासा ॥
पाँचौ पर्वत देखै सोई । गुरुगमि बुद्धि जाहि तन होई ॥
जब देखै तब कुशल शरीरा । बिन देखै जानै तन पीरा ॥
रवि गिरि जादिन नजरेनआवै । तेजहि तन ना कष्ट जनावै ॥
चन्द्र शिखर जादिन नहिं देखै । द्रव्यशोक कछु हानि विवेखै ॥
जादिन कैलास नजरेनहिं आवै । मित्र हानि दुख खबरिजनावै ॥
गोमत पहार नजरि नहिं आवै । काया कष्ट देश दुख पावै ॥
गिरि सुमेर जादिनहीं देखै । अन्तकाल तन घाव विशेखै ॥
रसना कान नजरि नहिं आवै । मास सातमहँ काल चलावै ॥
जाकी रसना चूमक वासा । सो नहिं देखै सदा निवासा ॥
पर्वत धवला नजरि नहिं आवै । मास एक महँ मृत्यु जनावै ॥
तादिन काल चौकीअग आवै । ध्रुवमंडल नजरै नहिं आवै ॥
सो सतगुरु जो होय सयाना । जैमुन जानि देह तेहि पाना ॥
जबतै काया आगम नहिं पावै । तबतै अमी बीज नहिं पावै ॥
काम बसी पावे जो ताही । बोरे विषम सरोवर माहीं ॥
काया श्वास चलै पर मेहा । काल वश्य होय छाँडे देहा ॥
पश्चिम लहरी जो गावै जानी । पांजी द्वार लखै सहिदानी ॥
चंद उगै सूर्य अथवै जबही । हंस सुजन तन यागे तबही ॥

पूरी तत्त्व होय असवारा । पहुँचे सत्य लोक दरबारा ॥
सिंधु तेज होय तजै शरीरा । चले तेज चौराशी हीरा ॥
उतपनि लागन देह तजि जाई । संकट गर्भ धरे नहिं आई ॥
अपनी काया आपु बिचारै । आपन आगम आपु सुधारै ॥
औरो आगम कहो बुझाई । जातें अवधि आनकी पाई ॥
गुरू आपु घट परखै जानी । तब पावै शिष्यकी सहिदानी ॥
तन परि आस परै जो प्राणी । तब निरखै ताकी सहिदानी ॥
झाँई झमकि जोत नहिं दरशै । काया कष्ट काल नहिं परशै ॥
गगन अवाज सुने नहिं बानी । कर पल्लवकी लखै निशानी ॥
मधीक जल्लौ दूना करई । पल्लौ सब पुहुमीमों धरई ॥
जेठा पल्लव ऊपर उठावै । तासु लहुरा उठि देखलावै ॥
निपल सहुरा पल्लौ उठि आवै । तासु जेठ वह अटल रहावै ॥
अटल रहै की यह सहिदानी । काया कष्ट होय नहिं हानी ॥
सो पल्लौ पुहुमीते डोले । देह तजै अस आगम बोले ॥
दरश भयावन वदन मलीना । लंपट बोलै काल अधीना ॥
ताही भूत ताहि दिखलावै । महा भयंकर मोट दरसावै ॥
कर पग शीतल सबै शरीरा । माथ तपै औ पायर बीरा ॥
औषध का गुण व्यापै नाहीं । निश्चय अन्तकाल है ताहीं ॥
नासिका नेह बासा नहिं आवै । थोथरी जिह्वा स्वाद न भावै ॥
हाथ पाँव पुहुमी महँ मेलै । कांपे मेरु काल सँग खेलै ॥
छिन छिन माथ डुलावे सोई । जानहु अन्त काल पेहि होई ॥
आपन भाव दिखावै जबही । विषम कालाघट व्यापै तबही ॥
स्वपने शीश काटि कोई लेई । श्यामवरण कामिनि रति देई ॥
भइसा गदहा हाथी देखे । नाग श्वान औ भालु विशेखे ॥
झूरी बींद परै निशि सोई । चलैं देह तजि सर्वस खोई ॥

समय–गगन गरजै बिजुरी ना चमकैं, तहां दुनो बन्द देई।
कहैं कबीर दिन पांच सातमें, हंस पयाना लेई ॥

चौपाई

काया परिचय भेद विचारैं। आपु तरै औरन कहँ तारैं ॥
सो सतगुरु जो होय सयाना। श्वासा नेह करै बन्धाना ॥
परिखै लगन तत्त्व निर्वाना। गुण अगुण सब करै बखाना ॥
निशवासर चले सुरकी धारा। कायाकष्ट होइ अधिकारा ॥
तिथि अनुमान लखै सहिदानी। श्वासा सूर चले बलहानी ॥
बधिकके पहरे आपु उबारै। चन्द सनेह भेद निरुवारै ॥
श्वाशा सार गहै सहिदानी। शशिके घर महँ सूर्य उगानी ॥
जेतिक श्वासा सूर्य उगाई। चन्दाके घर पीवे अघाई ॥
काया कष्टताप मिटि जाई। शील हंस होवै सुखदाई ॥
कालकी अवधि मिटावै जानी। समाधान होइ गहै निशानी ॥
तेज सुनरकी खा अतिचारा। ताते चले चन्द्रकी धारा ॥
महा अनन्द सफल तन होई। काल कला नहिं व्यापै सोई ॥
जब जब काल सतावे आनी। तब तब भेद करे बिल छानी ॥
साधैं लहरि समुद्र सनेही। तबसुख पावै यह जग देही ॥
साधन करै कहैं लौलीना। तत्त्व स्नेह होय नहिं छीना ॥
प्राण आत्माके गुण पावै। जो सतगुरु निज भेद बतावै ॥
परिचय तत्व साधना करई। धोखैं प्राण न कबहूँ परई ॥
रूखा रूखा करै अहारा। सोई गहिहै भेद विस्तारा ॥
काम क्रोध तजि करै फकीरी। ज्ञान बुधि धारै तत्व धीरी ॥
वाद विवाद सबै विसरावे। दुविधा दूसर निकर न आवे ॥
श्वासा सार गहै गुंजारा। जाप जपै सतनाम पियारा ॥
अजपा जाप जपै सुखदाई। आवै न जाय रहै ठहराई ॥

चारि कमलकी परिचय जानै। गहै भेद निज तत्त्व बखानै॥
फाहा रोपि करै निरुबारा। आदि अन्त सब करै सुधारा॥
योजन चार करै बन्धाना। आसन मारि रहै निर्बाना॥
चारि योजन खूटी विस्तारा। रूई फाहा जो करै सुधारा॥
सुधा रूई नर नाटक माहीं। खूँटी ऊपर रोपै छाहीं॥
बैठे आसन भूल सुधारी। देखै परिचय श्वास विचारी॥
चलै श्वास रतना गति नेहा। रवि शशि उदय विचारै देहा॥
फाहा सनमुख बैठि रहावै। निरखे ताहि तत्त्व जब धावै॥
पांचौ फाहा रोपै जानी। तत्त्व सनेह करै विलछानी॥
रविके घर होय श्वासा आवै। योजन एक तीनि तहां धावै॥
एक योजन एक एकै विचारा। प्रलय प्रचंड तेजकी धारा॥
ताहि लगनकी गहैं निशानी। कछु सुख उपजै कछु होय हानी॥
मूलकमल ताकर रहि बासा। तेजपुंज है बुद्धि प्रकाशा॥
ताहि कमलकी देखे आशा। मूलकमल तब होय प्रकाशा॥
तासु लगन लै साजहु बीरा। उपजै बुद्धि ज्ञान गंभीरा॥
ताहि लगनकी पांजी पावै। तेजपंज महं बहुरि न आवै॥
दूजै योजन तजि प्रकाशा। ताहि तत्त्व की देखै आशा॥
निवृंत कमल महँ ताकर बासा। काया मध्य सुभर रहि बासा॥
योजन तीन जो है विस्तारा। पृथ्वी तत्त्व जानकी धारा॥
ताहां बसै पवन बल वीरा। जाहि पवन संग उपजै छीरा॥
ताके संघ सँवारहु वीरा। निर्मल हंस होय गंभीरा॥
श्वासा साथ पारस सहिदानी। विन रसनाकी बोले बानी॥
दुसरी घडी चन्द्र सनेहा। गहो बिचार देखिकै देहा॥
ताकी श्वासा चल चोचण्डा। कहे कबीर मिटै दुखदण्डा॥
झीनी श्वास होइ गुञ्जारा। चले प्रचंड बासुकी धारा॥

दुई योजन पैज बिचारा । पौनविजय बल तहाँ सुधारा ॥
पुहुप कमलमहँ ताकर वासा । देहमध्य नाभी रहि बासा ॥
जाते होय क्षीर बंधाना । होइ खटाई स्वाद अमाना ॥
पुहुप कमल होइ लगन विचारै । पौन सनेह पान निरुवारै ॥
ताहि तत्त्व श्वासा चढि धावै । सोइ कमल जानि जो पावै ॥
जौन कमल तत्त्वकी धारा । तौन कमल नेव बिस्तारा ॥
जाहि तत्त्व सँग पान पठावै । ताहि कमलमहँ ले पहुँचावै ॥
आन कमलपर जीवकर बासा । आनते पान करै परकासा ॥
आन कमलमहँ पहुँचे याना । धोखे काल करे पछताना ॥
जाहि कमलपर जिवका बासा । तहाँ बयान कर रहु प्रकासा ॥
बालक की जिह्वा रहि बासा । सुभर कमलमहँ करै निवासा ॥
ताही लगन जीवके गहई । पावत पान काल न दहई ॥
संशय कमल देहु जनि पाना । नहिं तौ हंस होय अज्ञाना ॥
उपरहि पान लेइ यमराजा । संकट शिष्य गुरुकह लाजा ॥
सुरति कमल जीवकर बासा । ताहि कमलपर साधहु श्वासा ॥
पूरी तत्त्व चलै जब धारा । योजन चारि जाय चढिपारा ॥
सुरति कमलपर ताकर बासा । तहँवा पान करै परकासा ॥
पालता पौन ताहिके संगा । परसत ताहि होय नहिं भंगा ॥
पवन सजीवक करै अनुमाना । सो हंसहि लै जाय ठिकाना ॥

समय-चारि कमलमहँ चारि पौनहैं, चारिउ कमल अपीव ।
दाज पान सुधारिके, जाहि कमलपर जीव ॥
चतुरंगीकी लच्छ नहिं, तबहि सुधारहु पान ।
द्वादश कमल बिचारि हो, चौकाके अनुमान ॥
चौका चन्दन कीजियो, मलयागिरिको नाम ।
चारों कमल सुधारिकै, मध्य ताहिके धाम ॥

चौका चारि सुधारके, चारि कमल अस्थान ।
चारिउ पौन उरेहिंके, देखो सुरति अमान ॥
सुरति सनेही पौन कहँ, सुमिरहु सुरति सुधार ।
चारिउ अंक सुधारिके, जलदल धरेउ सुधार ॥
प्रथमहि चौका कीजिये, चारि खूँट अनुमान ।
चौरासी द्वीप सुधारिहै, सत्य लोक सहिदान ॥
ऊपर पँखुरी द्वीपके, भीतर चौका चारि ।
द्वादशदल निर्बान है, देखो सुरति बिचारि ॥
माया छत्र बिस्तारहू, सती नाम विश्वास ।
द्वादशदल तहाँ सुरचिके, कीएहु प्रेम प्रकाश ॥
जापर बसे निरक्षर, ताहि तत्त्वको नाम ।
शब्दसुधारस खानि है, हम तुम तेहिके धाम ॥
शब्द सुरतिको नाम गहि, सुमिरै शब्द सुधार ।
तब सिंहासन पग धरै, रचै लोक विस्तार ॥

चौपाई

कदली दल आनेहु पनवारा । धरहु नारियर प्रेम सुधारा ॥
सनमुख कलशाले साजेउ जानी । बाती पांच धरेउ तहाँ आनी ॥
आसन लिखेहु लगनको नामा । भर्मभूत भाजै तजि धामा ॥
दहिने राखहु दल परवाना । मेटै जहर अभी धरि ध्याना ॥
निर्मल नीरकी देइ दुहाई । जहर नीरकी दशा मिटाई ॥
आसन लेई लगनको नामा । लगन सनेह सुधारै धामा ॥
खरचा पांच धरेउ तिहि माहां । प्रकटे सत्य शब्दकी छाहां ॥
बहुविधि बाससुगन्धमिलायहु । चौकाके दहिने धरवायहु ॥
ताके निकट शिला अस्थाना । रेखा रोपि करेहु बन्धाना ॥
सत्यशब्द ले रखै बनायहु । ताके ऊपर शिला बैठायहु ॥

शिला ऊपर फिरि अंकसुधारेहु । शुक्तीकी श्वासा तहँ चारेहु ॥
ता ऊपर पुनि धरहु कपूरा । काल अंश होवै सब दूरा ॥
चौकाके बाएँ अस्थाना । आरति थार धरेहु सहिदाना ॥
आद्याके श्वासा सुख मूरी । ताको नाम सुधारहु पूरी ॥
अंक सुधारिके आसन कीन्हेहु । ताके ऊपर थार जु दीन्हेहु ॥
तिसरी श्वास करुणा मैं उचारहु । सुमिरणसारसत्यमुखभाखहु ॥
सुगन्ध सुपारी तापर राखहु । ॥
चौका कलश मध्य अस्थाना । धरहु मध्य धोती औ पाना ॥
नरियर मिष्टानमध्यमें राखेहु । धोती पान बचनअभिलाषेहु ॥
इहिविधिकी यह सब विधिपूरा । सुमिरतके हम होव हजूरा ॥
लोक निशान पुरुषजो भाखा । सो हम गुप्त एको नहिं राखा ॥
सब विधि ज्ञान तुम्हें हमदीन्हां । अब हम लोक पयाना कीन्हां ॥
नारियर है ब्रह्मा कर माथा । सो हम दीन्ह तुम्हारे हाथा ॥
ताके मध्य जीव सहिदानी । मानतताहिकियहु बिलछानी ॥
ज्योति कपूर कियेहु प्रसङ्गा । काल अंग परसतहोइ भङ्गा ॥
सतएँ श्वासा ताके सङ्गा । जाते यमकर मिटै तरंगा ॥
जैसी लक्ष्य जीवके पासा । हाथ नारियर नीकसुतासा ॥
कर्मी जीव कर्मके बांधा । निर्णय भेद न जानहिं अन्धा ॥
अङ्ग छिपाइ करै जिव बोटा । ताकर होय नारियर खोटा ॥
निर्मल हँस होय सुखदाई । मोरत नारियर वास उडाई ॥
निर्मल अंकुर सेतपुर होई । शब्द सनेही प्रीतम सोई ॥
जैसी दशा जीवकी जानी । प्रकट होय जब नरियरभानी ॥
जेते लपट तासुकी काया । सो नरियरमें होय सुभाया ॥
नरियर एक होय जलरंगी । सतगुरु सत्यशब्द परसंगी ॥
पारसते ताकी उतपानी । हंस दया धीर निकसी खानी ॥

कर्मी एक रोष निर्मांवा । निरखत ताहि तत्त्व कर भावा ॥
कपट सनेह कर्म सहिदानी । ताकर अङ्गसत्य करै हानी ॥
शब्द विचारि करेहु गुरुआई । पूरी तत्त्व लेहु सङ्ग लाई ॥
जेतिक लक्ष जीवकी काया । तेते पान साथ निर्माया ॥
रेखा गुञ्ज विचारेहु जानी । विषमतिछर करि है जिम हानी ॥
गुरुकी रेखा जाहि पर होई । छत्र सोहावन पर्श मिति सोई ॥
गुञ्ज औ छत्र शरन मुकतायहु । ताहि पानपर अंक चढायहु ॥
सत्य शब्द पारस परसायहु । ॥
पारस मनि है तंत्त्व सनेही । तासु लगन लै पान उरेही ॥
पावत पान हंस घर जाही ।
पौन सजीवक जावन नेहा । तत्त्व लगन लै सुरति सनेहा ॥
सत्य नाम सुकृत सठिहारा । सो सहिदानी पान सुधारा ॥
छत्रके छल होई जेहि पाना । तापर अंक लिखै निर्बांना ॥
जाहि देहु हंसन कह खाहा । पान छत्र मणि दीजै ताहा ॥
निशदिन रहैं जो सुरति समानी । सो दीजै सीखन सहिदानी ॥
धर्मदास तुम जेठे भाई । हम लहुरे कीन्हा अधिकाई ॥
तुम्हरी वस्तु तुमहि कहँ दीन्हा । अब हम लोक पयाना कीन्हा ॥
जेते जीव आहि जगमाही । सो सब आवै तुम्हारे बाही ॥
तुम्हरे शिर जीवन कर भारा । आदि अन्तको तुम कडिहारा ॥
तुमरे हाथ जीवकर काजा । काल डसैं तब तुम कहँ लाजा ॥
वंश बयालिस कुलके राजा । ज्ञान गम्य सबै तेहि साजा ॥
उन्हके पास जीव जेते जावैं । सो सब सत्य लोक कह आवैं ॥
बंशके बंश छत्र मनिहारा । सोइ शब्द सुत वंश हमारा ॥
जेहिवां देइ सो लेकर जाई । काल डसैं नहिं मोरि दुहाई ॥
बंशके बांह जीव जत आवैं । यमकी नाक छेदि घर जावैं ॥

बंश बयालिस राज तुम्हारा । जिन्हसों पन्थ चलै संसारा ॥
कोटिन्ह दगा वंशपर पराई । कहै कबीर नाम बल ताई ॥
नाम कबीर पान है सारा । इहै नाम काल हंस उबारा ॥
नाम कबीर कहो गुरुराई । बावन लाख दगा मिटि जाई ॥
जाहि देहु औ नाम निशानी । हंस उबारि करै राजधानी ॥
वंश समाहि हंस हिया माँही । हंस देहि जीवन कह वाही ॥
अहनिश नाम हमारो लेई । ताकों काल दगा नहिं देई ॥
भजनी भजन करे सुकहावै । अमर सनेह समाधि लगावै ॥
शाल दशा धरि हंस उबारै । विषम लहरि भवसागर तारै ॥
वँश बयालिस अँश हमारा । करपग शीश छत्र निआरा ॥
कलावन्त शूद्र सुखदाई । हँसके नायक शरण सहाई ॥
वँशके चरण शीश कुरबानी । अङ्ग अङ्ग हमरी सहिदानी ॥
जाके मस्तक दीन्हें हाथा । काल करम नहिं ताके साथा ॥
चरण छुए रज अमृत लेई । ताकह काल दगा नहिं देई ॥
दया प्रीत सब जानत रहई । काल कर्म सब दूरि खँदे रही ॥
जासों कहै सत्य हित बानी । ताकी काल करे नहिं हानी ॥
जौन जीव सत्य पारस पावै । छोडै देह लोक सो आवै ॥
सुख सनेहसो पारस पावै । सो निश्चय सुखसागर आवै ॥
देह धरि प्रकटे संसारा । शब्द बिदेह हंस रखवारा ॥
जाकह देहि सत्यकर भारा । सोई शब्द सुत वंश हमारा ॥
करनी करै वंशकी चाला । ताको नाहिं सतावै काला ॥
करहु राज औ पन्थ चलावहु । शब्द सनेह हँस मुकतावहु ॥
राज पाट सौंपो अनुमाना । जम्बुद्वीप छत्र करहि अपारा ॥
आगे चलि है पन्थ विस्तारा । कालकला छल करहि अपारा ॥
तुमरे घर प्रकटीहि अन्याई । हँस दशा धरि पन्थ ननाई ॥

कपटकी भक्ति करहि विचारा । लाजधाज पाखंड पसारा ॥
ज्ञानदशा धरि पंथ चलैहै । ममता बाँधि जीव भरमैहै ॥
तहां आपु दृढ़ राखहु ज्ञाना । कालकिकला होय पिसि माना ॥
बाहर काल चतुराइ भखीही । सदा अमान मुक्तिते रखीही ॥
सत्य दुहाई फिरिहैं जहां । टिकै न कील कलाकी तहां ॥
जो जिव शब्द हमार न मानी । सो जाने वो है यमकी खानी ॥
आन मेटि दुविधा फैलइहै । सो जिव सपनेहु मोहि न पइहै ॥
शब्दकी शरण गहहि लौलाई । निर्मल हंस होइ सुखदाई ॥
काल कला धरि प्रकटहि आई । बिरलै हंस रहै ठहराई ॥
काल कला मुख भाषहि जबही । छुटिहैं चित्त हंसन कर तबही ॥
भाषिहि ज्ञानदृष्टि व्यवहारा । सुरति डोलाई करै अतिचारा ॥
कालपंथ महँ प्रकटिहि आई । ज्ञानमेटि भाषहि चतुराई ॥
शब्द वंशकी निंदा करि हैं । ममता बाँधि कालमुख परि हैं ॥
आप थापी वंश उठै हैं । शब्द मेटि जीवन भरमै हैं ॥
एक परिपच बांधि है सोई । जो नहिं हंस हमारी होई ॥
जब परिपच सुनाइहि काला । शब्दन सुमिरै तेहि करै बेहाला ॥
मन बच आश शब्दकी करि है । कालकी चाल चित्तना धरि है ॥
मन वच जानि शब्द कहँ धरि है । निश्चय सत्यलोक सो जैहै ॥
पाषण्डकी गति देहु बहाई । शब्दकी शरण गहै चितलाई ॥
शब्दकी आप शब्द लौ लाई । शब्द छोडि नहिं आन चलाई ॥
शब्द पाइ करि है अभ्यासा । सुमिरन भजन शब्द विश्वासा ॥
अमर समाधि शब्द अवराधे । अक्षरमांह निरक्षर साधे ॥
पूरी तत्व लखै जो कोई । पूरण ज्ञानगम्य जेहि होई ॥
वंश सदाहि या तत्व समाई । बंद करै तो मोरि दुहाई ॥
बंश दयाते सब मिटि जाई । सुमिरि बंश बयालिस पाई ॥

समय–मनसा वाचा कर्मणा, तत्त्वहि तत्त्व समाय।
अक्षरमांहि निरक्षर दरशै, अधर ध्वजा फहराय॥
दामिनि कैसी दमक जिमि, ऐसी शब्दकी डोर।
कहै कबीर पहुँचाइ हों, हंस सुजनकी जोर॥

चौपाई

अक्षर मांह निरक्षर पावै। छोडि देह पांजीकी धावै॥
पांजी द्वार सत्यकी धारा। जलरंग चौकि सुकृत रखवारा॥
आदि अन्त हम तुमकह दीन्हा। अब हम लोग पयाना कीन्हा॥
तुम साहब सतलोक सिधाए। हम सेवक संसार रहाए॥
निश बासर तुमहीं लै लैहों। पलपल दरश तुमहिको देहों॥
छिन छिन रहो तुम्हारे पासा। धर्मदास मोहि तुम्हरो आसा॥
तुम हो भाई प्रेमहित मोरा। हंसन जाय करौ बँदि छोरा॥
लोक बोडइसा बैठे रहिहौ। गुहालोक बिरले सों कहि हौ॥

समय–भेद पुरुषको तासों कहिहों, जो शब्द पारखी होय।
शब्द पारखी मिलै नहिं, तासों राखेहु गोय॥
चन्द्र सूर्य चढि जल पिवैं, बिनु रसना रस सोय।
तासों कहि हों शब्दनिरक्षर, नेह धरो जनि गोय॥
बिनु रसना रस पीवन जानै, कहा निरक्षर पावै।
कहै कबीर ताहि परिहरहु, काल कला धरि आवै॥
सूक्षम वेद भेद नहिं जानै, कथनी कथि लपटान।
गुरुगम भेद विचारै नाहीं, यमपुर जाय निदान॥
चंद सनेह लखै सहिदानी, तुरति होय असवार।
दुई करजोरी महारस पीवै, सतगुरु शरण अधार॥
संयम करै अधर धुनि साधै, सत्यसुकृत रखवार।
गुरुकी दया साधुकी संगति, उतरे भवजल पार॥

काया परिचय जानिके, पकरै दृढ कडिहार ।
नाव लगावे घाट कह, खेइ उतरे पार ॥
पश्चिम लहर जो गावै, नाव लगावै घाट ।
उतरि पांजी सोधिके, तब पावै निज घाट ॥
चंद उदय जब होत है, सूर्य अस्त बलहीन ।
इहै लगन है आदि की, जैसुनिकरसुरलीन ॥
जलरंग महलमें जाई रहै, करै जाइ विश्राम ।
सतगुरु शब्द बतावहि, तब पावै निज धाम ॥
अन्तकी राह बराइके, चलै आदिकी राह ।
आसन पावै लोक महँ अक्षय वृक्षकी छांह ॥
धर्मदास हंसनके नायक, माथे राखहु नाम ।
अब हम चले लोक कहँ, तुम जाय करो विश्राम ॥

चौपाई

स्वेत मिठाई उत्तम पान । सत्यबचन भाषहू प्रमान ॥
आरति करी कीन्हेउ भाऊ । नरियर मोरपांच मिलिपाऊ ॥
भक्तिभाव कीन्हेऊ बहुभांती । सतगुरु दूलह संत बराती ॥
शब्द सुरति ते गांठि जुरावहु । भावर की बंदन पहिरावहु ॥
तिलकबन्दन बहुबिधि कीन्हेउ । पांचसाधुमिलिआशिष दीन्हेउ ॥
पञ्च जने मिलि अर्पण कीन्हेउ । डरत तिन्है पुहमीमें दीन्हेउ ॥

समय-डर पारस डर प्रेमगुरु, डर करनी डर सार ।
डरता रहै सो ऊबरे, गाफिल खासीमार ॥
तत्त्व तिलक तिहुँ लोकमें, सत्यनामनिज सार ।
जन कबीर मस्तक दिया, शोभा अगम अपार ॥
शोभा अगम अपार, पार बिरलै जन पावै ।
अमर लोकको जाय, बहुरि कबहूँ नहिं आवै ॥

अखण्ड फनिमनी तिलक है, अक्षय बृक्ष है सार।
अमर महात्मा जानिकै, करैतिलकतत्त्वसार ॥
त्रिकुटी अग्रे मूल है, भृकुटीमध्यनिशान।
ब्रह्मद्वीप अस्थूल है, अग्रतिलक निरबान ॥
अग्र तिलक शिर सोहै, बैसाखी अनुहार।
शोभा अविचल नामकी, देखहुसुरति विचार ॥
जासु तिलक अस्थान है, तासु नाम अस्थीर।
खंब लिलाटै सोभही, तत्त्वतिलकगम्भीर ॥
संता अयनकी खानिहै, महिमा है निजुनाम।
अक्षयनामतेहितिलकको, क्षयनहिं अक्षयविश्राम ॥
मध्यगुफा जहां सुरति है, उपर तिलकको धाम।
अमर समाधि लगावै, अंग अंग अस्थान ॥
कंठी कंठ बिराजै, उज्वल हंस अमान।
मुख उज्वल चक्षू उज्वल, उज्वल दशा न होय ॥
जो उज्वल है भीतर, ऊपर उज्वल सोय।
अंतर कपट मलीनता, ऊपर और न होय ॥
जौन भाव भीतर बसै, ऊपर बरतै सोय।
(भीतर और न देखिये, ऊपर और न होय) ॥
जौन चाल संसारकी, तौन संतको नाहि।
डीभि चालु करनी करे, संत कही नहिं ताहि ॥
साधु सती औ शूरमा, ज्ञानी औ गजदंत।
एतौ निकसि न बहुरे, जो युगजायँ अनंत ॥
साधु चाल जो जानिहै, साधु कहावैं सोय।
बिन साधै साधू नहीं, साधु कहांते होय ॥

साधु कहावन कठिन है, ज्यों खांडेकी धार ।
डगमग है तौ कटि परै, गहै तो उतरै पार ॥
साधू सोई जानिये, जो चलै साधुकी चाल ।
परमारथ लागा रहै, बोले बचन रसाल ॥
संगति करिये साधुकी, हरे सकल तन व्याधि ।
नीची संगति असाधुकी, आठों पहर उपाधि ॥
निश वासर साधू मिलै, मिटै विषम तन पीर ।
तासु नेह नहिं छाँडिहौं, सदा सुफल तनथीर ॥
साधुनसों संगति करै, जागत सोवत हाल ।
तासु संगमें ऐ वरहों, ज्यों कर सदा रुमाल ॥
जाके हृदये सत्यहो, सोई सुकृतके साथ ।
साधु २ सोहावे ताहि, खोजि लेइ नगमनीमाथ ॥
साधु न संकट सों परै अगमन हमही होय ।
दुर्जन मारि बहाइहैं, पला न पकरै कोय ॥
तन मन शीतल शब्दपर, बोलत बचन रसाल ।
कहै कबीर तेहि दासको, गांजि सकै ना काल ॥
ररा काग विष बोकरा, कूकर नाग मञ्जार ।
नाहर विषधर दूत, भूत वट औ पार ॥
सब कह बाधी कबीर, आन घाट बाटलै डार ।
बाट घाट बन औघट, मोहिं खसमकी आश ॥
मते चलौ कबीरके, कबहि न होय बिनाश ।
भागे यमदूत भूत यम, काल न तिनुका टूट ॥
हंस चले हैं लोक कहँ, काल रहा शिर कूट ॥

चौपाई

धर्मदास सुनो शब्द सन्देशा । जाहि देहु ताहि मिटै अन्देशा॥
जाके घट तुम्हरी सहिदानी । तहाँ प्रगट हम तुमहि समानी॥

जो कोई लेइ तुम्हारो नावा । ताके शिर मह मन्दिर छावा ॥
सन्त दसाधरि पन्थ चलावहु । छापा तिलक कंठी पहिरावहु ॥
वैरागी वैराग्य पढावहु । गृहि बासी रहनी समझायहु ॥
वैरागी उन मुनि घर करई । हर्ष शोक कछु चित नहिं धरई ॥
रूखा सूखा करै अहारा । निशदिन रविशशिसूरहिसुधारा ॥
विकशित बदन भजनके आगर । शीतल सदा प्रेम सुखसागर ॥
वैरागी आसन आरंभै । माला तिलक सुमिरिनि थंभै ॥
पश्चिम लहरि जो गावै जानी । अजपा जाप जपै सहिदानी ॥
रहिता रहै बहै नहिं कबही । सो वैरागी पावै हमही ॥
हमें पाय हमही अस होई । आवा गौन मिटावै सोई ॥
आवा गौन मिटावै काया । सदा अधीन रहै तत्त्व समाया ॥
काया धरि काया कह बोधै । आवा गौन रहित घर शोधै ॥
जीवत मरै मरै पुनि जीवै । उनमनि बसै महारस पीवै ॥
महा शून्य मों रहै समाई । मरै न जीवै आवै न जाई ॥
ऐसी विधि वैरागी सोई । हममिलि रहे हमहि असहोई ॥
गृही होइकै रहै उदासा । शब्द कमाइ शब्द विश्वासा ॥
गृही दगा कोटि जो पाई । कहै कबीर भक्ति बतलाई ॥
गृही भाव भक्ती जो साधै । सन्त साधु सेवा आराधै ॥
घर तजि बाहर कबहि न जाई । गुरु नाम भक्ति करै लौलाई ॥
भक्ति करै निर्भय सहिदानी । गुरु औ साधु एककरि जानी ॥
जहाँ साधु तहाँ सतगुरु वासा । जहां सतगुरु तहाँ मुक्ति निवासा ॥
जहाँ मुक्ति तहाँ लोक उजागर । जहाँ लोक तहाँ रहै सुखसागर ॥
जहाँ सुख सागर तहाँ कबीरा । भक्ति मध्य बाहर औ तीरा ॥
जहाँ मध्य तहाँ पुरुष अमान । जहँ बाहे तहाँ हंस सुजान ॥
जहाँ तीर तहाँ निर्मल धीर । जरा मरण नहिं व्यापै पीर ॥

जहां पीर तहां संशय धीर । संशय मध्य असंशय नीर ॥
जहां नीर तहां सुख संतोषा । जरा मरण नहिं व्यापै धोखा ॥
जहां धोख तहां आवै धीर । जहां धीर तहां गहिर गम्भीर ॥
जहां गँभीर तहां थिर होई । जहां थिर तहां लहरी न सोई ॥
लहरि नाहिं तहां आपै होई । आपा मेटि होई रहै समोई ॥
ममता मोह लहरि तजि जोई । भाव भक्तिके मानुष गोई ॥
मनसा गहै होय निर्वाना । पावै सत्य सही अस्थाना ॥
नातरु फिरि आवे संसारा ।
संसार आइके भक्ति कमाई । भक्ति कमाइके भक्ति कहाई ॥
भक्ति कहाइके रहै उदासा । सतगुरु मिले सत्य विश्वासा ॥
सतगुरुते दूसरे गुरु नाहीं । आवा गौन रहित घर जाहीं ॥
सतगुरु मिलै तो संशय भागै । संशय बहुरि अङ्ग नहिं लागै ॥
सतगुरु सुख संतोषके नायक । परमारथ सो सदा सहायक ॥

समय-साधु बडे परमारथी, घन ज्यों वरषैं आय ।
तप्त बुझावै आनकी, आपनो आपन लाय ॥
जैसे वृक्ष न फल भखै, नदी न अँचवै नीर ।
त्यौं परमारथ कारने, संतन धरो शरीर ॥
सन्त सराहिये ताहिको, जाके सतगुरु टेक ।
टेक निबाहै देह भरि, रहै शब्द मिलि एक ॥
सत्यशब्द हितमानिकै, सुमिरि सतगुरु धीर ।
धर्मदास तुव वंशके, एके गुरू कबीर ॥

चौपाई

सत्य सुकृत सुमिरै चित माहीं । टूटत वज्र राखि लेउ राही ॥

समय-सत्य सुकृतके बाल कह, जो चितवे कर दीठ ।
ताजन लागै चौहटै, गुनहगारके पीठ ॥

जिह्वा कहौ तो जग तरै, प्रकट कह्यो न जाय ।
गुप्त भवाना लेहु हो धर्मनि, राखो शीश चढाय॥
हंसा तुम मतडरपौ कालसों कर मेरि परतीत ।
सत्य लोक पहुँचाइहौं, चलिहों भवजल जीत ॥
इति ग्रंथ उदय टकसार, श्वास गुंजार सम्पूर्ण ।
जो देखा सो लिखा, मम दोष न दीजिए ॥

भूल चूक अक्षर लेव सुधारी ॥ समय नाम गोसाँई साहेब लक्ष्मणदासजीको कोटि कोटि दण्डवत् सब संतन महंतनको कोटि कोटि दण्डवत् । मोकाम गोरखपुर महल्ला काजीपुर छोटा लीखा भवानी बकस सब संतनके किंकर ॥ असल पुस्तकानुसार नकल किया ।

इति श्वासगुञ्जार संपूर्ण

सत्यसुकृत, आदि अदली, अजर, अचिन्त पुरुष, मुनीन्द्र, करुणामय, कबीर, सुरति योग, संतायन, धनी धर्मदास, चूरामणिनाम, सुदर्शन नाम, कुलपति नाम, प्रबोध गुरुबालापीर, केवल नाम, अमोल नाम, सुरतिसनेही नाम, हक्क नाम, पाकनाम, प्रकट नाम, धीरज नाम, उग्रनाम, दयानामकी दया, वंश व्यालीसकी दया

★

अथ श्रीबोधसागरे

आगमनिगमबोधप्रारंभः

★

त्रयस्त्रिंशस्तरंगः

साखी—वेद शास्त्रको मत अबै, अगम निगम प्रमाण ।
अब वर्णन सोई लिखो, पढो सकल दे ध्यान ॥

अथ ब्रह्म और जगत उतपत्ति चौपाई

आदि ब्रह्म अब वर्णन करेऊ । अहंशब्दमें सो थित धरेऊ ॥
ताहि शब्दकरि चित फुरिआया । चित दृढ़ता करि मन प्रकटाया ॥

मनते तन मात्रा भे पांचों । मन स्वरूप ब्रह्माको वांचों ॥
मन ब्रह्मा ब्रह्मा मन सोई । जस संकल्प करे तस होई ॥
रचे अविद्या शक्ति विधाता । जिहि अनात्ममें आत्मलखाता ॥
ब्रह्मा सोइ अविद्या कारण । विद्या राचे ताहि निवारण ॥
उठे तरंग सिंधुमें जैसे । बहुरि समाय ताहि पुनि तैसे ॥
ब्रह्माते इमि जगत प्रकटाई । फेरि लीन तामें ह्वै जाई ॥
सत्य शुद्धमें मनको फुरना । सो कारण सब दुःखको जुरना ॥
उपै खपै बिधिते जिव कैसे । अग्निते चिनगारी लखि जैसे ॥
दुःख मूल बासना बिकारा । मनही कर्म रूप निज धारा ॥
मन अरु कर्म एकही आहीं । कमलसुगन्धभेद जिमि नाहीं ॥
मनमें जो संकल्प फुराई । सो अँकूर कर्म कहलाई ॥
कर्म कि पूर्व देह मन अहई । मनमय देह कर्मका गहई ॥
जो कछु सत्य असत्य गहोई । मनको कियो सत्य सब होई ॥

इति

अथ चारवर्णकी उत्पत्तिवर्णन—चौपाई

ब्रह्मा मुख ब्राह्मण प्रकटाये । ब्राह्मणको इमि अर्थ बताये ॥
प्रथम अक्षर पवित्रता थापू । द्वितिये अक्षर तेज प्रतापू ॥
द्वितीये बाहुते क्षत्रिय भयेऊ । अक्षर आदि पराक्रम गहेऊ ॥
द्वितीये अक्षर रक्षा कारी । तृतीये वैश्यको अर्थ उचारी ॥
प्रथम शब्द स पति गह सोई । दूजे अर्थ पालना होई ॥
चौथे चरणते शूद्र उपाये । ताको ऐसे अर्थ बताये ॥
प्रथम शब्द तुच्छता बताई । द्वितीय दीनता अरु सेवकाई ॥
वेद पाठ षटकर्म जनेऊ । तीन बरणके हेतु बनेऊ ॥
चहुँके संस्कार क्रम न्यारो । ब्राह्मण वर्णको भेद उचारो ॥
ब्राह्मणमें द्वै भेद है सांचो । पंच गौड अरु द्राविण पांचो ॥

पंच गौडको नाम बखानो । गौडकनौजियासारस्वति मानो॥
उत्कल मैथिल पांचों गौडा । बहुरि बखानो पंच जो द्रविडा॥
द्राविड गुजराती अरु नागर । महाराष्ट्र तैलंग उजागर ॥
इनते बहुरि अनेकन भयऊ । न्यारे न्यारे नाम सो कहेऊ ॥
वैरागी दश ब्राह्मण जेई । वेदके धर्म ध्वजाधर येई ॥
क्षत्रीमें द्वै भाग प्रशंसी । एक सूर्य द्वितिये शशिवंशी ॥
वैश्यनमें बहु भांतिक भनिया । अग्रवाल आदिक बहु बनिया॥
शूद्र भेष भाषे विधि नाना । तिनको इहां न करौं बखाना ॥
ब्रह्मा चारों वरण बनाई । ताके मन पुनि चिंता आई ॥
बिन लेखक जगकाज न सरिहै । लेखक गणक कर्म को करिहै ॥
यहि विधि ब्रह्म जो करे विचारा । चित्रगुप्त प्रगटे तेहि बारा ॥

इति

अथ चित्रगुप्तजीकी उत्पति कथा वर्णन—चौपाई

लीने कर लेखनि मसिदानी । प्रकटे चित्रगुप्त गुणखानी ॥
ब्रह्माकी अस्तुत उच्चारे । सो धुनिसुनि बिधि पलकउघारे॥
ब्रह्माकी तब आज्ञा पाई । तपको चित्रगुप्त बन जाई ॥
बारह वर्ष कीन तप गाढे । पुनि भे ब्रह्मके सन्मुख ठाढे ॥
तब ब्रह्मा निज सभा लगाये । सुरनर मुनि भूपति चलि आये ॥
ऋषी सिसिरसा तहँ पगुधारा । निजकन्या वरहेतु बिचारा ॥
कन्या चित्रगुप्त को व्याहा । महिपमन्वंतर पुनि अस चाहा॥
भूप मन्वंतर सूरजको पोता । ताहि सभा तिहि औसर होता॥
सोऊ अपनी पुत्री देऊ । दोऊ तिय चित्रगुप्त वर गहेऊ॥
पुत्र यउपो दोनों नारी । एकते आठ एकते चारी ॥
माथुर गौड अरु कर्न भनीजे । वालमीक श्रीध्वजहि गनीजे ॥
सकसैना श्रीवास्तव ऐसे । श्रेठाना श्रम सूक हैं तैसे ॥

भटनागर कुल श्रेष्ठ कहाये । निगम नाम बारह बतलाये ॥
द्वादश चित्रगुप्तके जाये । कायथ लेखक गणक कहाये ॥
चित्रगुप्त धर्मरायके द्वारे । पुण्यपापको लेख उचारे ॥
तिमि ताके सुत पृथ्वी माही । राजद्वार पर लेखक राही ॥

इति

अथ चार आश्रमको वर्णन

दोहा-ब्रह्मचर्य गिरहस्थ पुनि, बानप्रस्थ संन्यास ।
भिन्न भिन्न इनके धर्म, मरम वेद परकाश ॥

इति

अथ चार वेदोंकी उत्पति कथा वर्णन चौपाई

चौमुह वाक्य ब्रह्ममुख भैऊ । चारों वेद ताहिते कियऊ ॥
असी सहस्त्र कमकांड प्रमाना । सोलह सहस्त्र उपाछा जाना ॥
चार हजार कहावै ज्ञाना । यह त्रिकांडमत वेद बखाना ॥
चारों मम वाक्यको टीका । लक्ष श्लोक व्यास कृत टीका ॥
जेते शास्त्र पुराण कहाये । चारों वेद कि आस गहाये ॥
चारों वेद मूल सब केरा । महावाक अब करो निबेरा ॥
प्रथमै जो ऋगवेद कहायो । पूरब मुख ब्रह्मा प्रकटायो ॥
ब्रह्मकी बानी भइ येही । प्रज्ञाना ब्रह्म कहि देही ॥
महाज्ञान कहिये प्रज्ञाना । ब्रह्म अर्थ परमेश्वर जाना ॥
यहि महा वाक्य रचे ऋगवेदा । क्रम उपाछा ज्ञान त्रिभेदा ॥
पूरब दिश ऋगकी अधिकाई । द्वितिये यजुर्वेद कहि भाई ॥
दक्षिण मुख ब्रह्मा निज खोले । अहं ब्रह्मा अस्मी सों बोले ॥
अहं अर्थ में ब्रह्म है ईश्वर । हौं अस्मी कह मैं हों ईश्वर ॥
यहि महँ बाकते यजुर बनाये । दक्षिण देश अधिक फैलाये ॥
सामवेद तृतिये बिख्याता । मुख पश्चिम ब्रह्माकी बाता ॥

महावाक्य ब्रह्माकी येही । तत्त्वमसी ताते कहि देही ॥
तत्त्व ईश्वर त्वं जीव कहाये । हौं पुनि स्मीको अर्थ बताये ॥
पश्चिम दिशतेहिअधिकपसारा । तीनों विधि ताको व्यवहारा ॥
चौथे वेद अथर्वण भाषी । उत्तर मुख ब्रह्माकी साषी ॥
तीनों वेदसे ताहि निकारा । तामें महावाक्य यह धारा ॥
अहं आत्मा ब्रह्म पुकारो । ताका ऐसो अर्थ बिचारो ॥
अहं है मैं आतम है आपा । ब्रह्म नाम परमेश्वर थापा ॥
मैंही हौं परमेश्वर आतम । उतरमें यहि वेद महातम ॥
चार युक्ति चहुँ वेदन माहीं । प्रथमें विधि जिहिकर्मकराही ॥
द्वितीये अर्थ बाद बतलाये । अस्तुति और कर्मफल गाये ॥
तृतिये मंत्र जो देव अराधू । चौथे नाम कथा शुचि साधू ॥
षट प्रकारकी विधि चहुँ वेदा । प्रथमें जग उत्पति निवेदा ॥
द्वितिये प्रलयको ब्यौरा ठाना । तृतिये सुरमुनि चरितबखाना ॥
चौथे मन्वन्तर कथ दशचारो । पंचम सुरसुरपति ब्यौहारो ॥
छठये धर्मशास्त्र विधिभाषा । तामें कथा भांति बहु राखा ॥
विद्या सकल जगत ब्यौहारा । ज्ञान विधान अनेक प्रकारा ॥
ब्रह्मवाद भाषे विधि नाना । जाके पढे लाभ हो ज्ञाना ॥
चार वेद बुधि विद्या मूला । रचे शास्त्र षट तिहिअनुकूला ॥

इति

अथ षट् शास्त्रनको वर्णन चौपाई

अब षटशास्त्रको वर्णन सुनिये । प्रथम न्याय ऋगवेदतेगुनिये ॥
गौतम न्याय कर्ताको करता । अस विचार ताके उर बरता ॥
सर्वं मई परमेश्वर जाना । एकते बहुरि अनेक बखाना ॥
उत्पति प्रलय कथा बखाने । नित्यानित्य बाद बहु ठाने ॥
द्वितियमीमांसाशास्त्रजोकहिया । यजुर्वेदते ताको गहिया ॥

जैमिनि मीमांसक रचताही । शिष्य प्रसिद्ध भये बहु बाही ॥
परमेश्वरहि अकर्ता जाना । जक्त अनादि अनंत बखाना ॥
ज्ञान मुक्ति सब कर्मके द्वारा । कर्मके बशी भूत संसारा ॥
मुक्ति होय जिव ज्ञानके मर्मी । ब्रह्मा होय करन भल कर्मी ॥
तृतिय शास्त्र वेदांत बताये । सामवेदते व्यास बनाये ॥
एक ब्रह्म द्वितिया कछु नाहीं । स्वप्न समान जक्त दरशाहीं ॥
ब्रह्ममें जबही माया डोले । ताको तब ईश्वर कहि बोले ॥
ईश्वर तीन भाग पुनि भयऊ । रज सम तमगुननामसोकहेऊ ॥
जेते जक्त माँह व्यौहारा । यही तीन सबके करतारा ॥
कर्म रहितसो ब्रह्म बखाना । कर्म स्वरूप तीन ये जाना ॥
मायायुक्त भये जब तीनों । तिहि कारण ईश्वर कहि दीनों ॥
ब्रह्म अविद्या युक्त जो होई । ताको जीव कहे सब कोई ॥
त्रिगुणब्रह्म अरु जग जिवसारे । सबही एक स्वरूप विचारे ॥
भिन्न अविद्या करिके माना । द्वै शक्ती तिहि मांह बखाना ॥
यक विक्षेप शक्ति कहलाये । द्वितिये अवरनशक्ति बताये ॥
शक्ति विक्षेपते जग उपजाये । अवरन शक्ती ज्ञान दुराये ॥
ज्ञानके उदय मुक्तिपद धरही । वेदांती यह निर्णय करही ॥
चौथे सांख्यशास्त्र मत गाढा । ताहि अथर्वण वेदते काढा ॥
रचे ताहिको कपिल मुनीशा । सोउ अकर्ता कथ जगदीशा ॥
सबही रचना प्रकृति कराये । जक्त अनादि सदा यहिभाये ॥
काहु बस्तूको नाश न होई । करता में करतूत समोई ॥
द्वैविधि भाषे पुरुष महातम । जीव आतमा अरु परमातम ॥
पुरुष प्रकृतको जब हो मेला । होय सकल रचनाको खेला ॥
पुरुष पंगुला परकृत अन्धी । दोहु बिन नहिं जगरचना बंधी ॥
प्रलय कालतिहु गुन समताई । रचनामें सतगुरु अधिकाई ॥

पुरुषते महातत्त्व प्रकटाई । पुनि हंकार इन्द्रीतत्त्व गाई ॥
प्रलयको घौस बहुरि जब आवै । इन्द्री तत्त्व सब तहाँ समावै ॥
जिहि क्रमसे जो दियो देखाई । तिहि क्रम २ सब जाहि लुपाई॥
पंचम शास्त्र पतंजल कहेऊ । वेद अथर्वणसे सो गहेऊ ॥
ऋषि पातंजलि ताहि बनाई । वर्णन सांख्यशास्त्र सम ताई ॥
योग युक्ति तिहि माँह बखाना । ज्ञान द्वारते युक्ति प्रमाना ॥
छठे शास्त्र वैशेषिक भाये । मुनि कणाद कर्ता कहलाये ॥
वेद अथर्वणते गहि लीना । यह षट्शास्त्रको वर्णन कीना ॥

इति श्री षट्शास्त्र

अथ चार उपवेद वर्णन

दोहा—आयुर्वेद धनुर्वेद पुनि, गन्धर्ववेद बखान ।
अथर्वेद ये चार हैं, तिनकी निर्णय ठान ॥

चौपाई

प्रथमे आयुर्वेद करतारा । ब्रह्मा प्रजापति अश्वनीकुमारा॥
धन्वन्तरि आदिक रच ताही । कामशास्त्र वेदादिक जाही ॥
द्वितिये धनुर्वेदके करता । विश्वामित्र नाम सो धरता ॥
ब्रह्मा परजापति से जोई । विश्वामित्र सिखे गुन सोई ॥
सकल युक्ति शिष कीन प्रचारा । परजा पालन कै व्यौहारा ॥
शस्त्र प्रहारकि युक्ति है तामें । युद्धकरनकी बिधि वह वामें ॥
आयुध दोय प्रकारके युक्ता । एक है मुक्त अरु द्वितिय अमुक्ता॥
तृतिये मुक्तामुक्त कहाऊ । यंत्र मुक्त चौथेको नाऊ ॥
हाथसे जो चक्रादि चलाये । ताको नाम मुक्त बतलाये ॥
तरवार आदि अमुक्त बखाना । बरछी मुक्तामुक्त प्रमाना ॥
बहुरि तीर आदिक अरु गोली । यंत्र मुक्त तिनको कहि बोली ॥
मुक्त आयुधको अस्त्र कहीजै । अरु अमुक्तको शास्त्र भनीजै ॥

सने चार प्रकार नाम धर । घोढचढ रथचढ गजचढ पद्चर॥
असगुन सगुन बहुत विधि भाषा । क्षत्री धर्म सकल तह राखा ॥
तृतिये गन्धर्व वेद बताये । ताहि भरथजीने प्रगटाये ॥
नाद नृत्य सुर ताल अनन्ता । विविधि भांतिसे ताहि बदंता॥
युक्ति अनेकन देव अराधू । निरविकल्प पुनि कथे समाधू॥
चौथे अर्थवेद विधि कहिये । नाना युक्ति ताहिमें लहिये ॥
नीति शास्त्र अरु अश्वारूढा । शिल्प सूप आदिक मतिगूढा॥
धन उपाय बहु विधि तहलहिये । अर्थ वेद यहि कारण गहिये ॥
द्रव्य उपार्जन रीति बनाई । अर्थ वेद पुनि अस अर्थाई ॥
कसेहु निपुण होय नर जोऊ । भाग बिना धन लहै न कोऊ ॥
ताते अन्त कथे बैरागा । सब चातुरी वृथा इमिलागा ॥
चहुँ उपवेदको यह सिद्धांता । सब तजि हो विरक्त बुधवन्ता॥
वेद उपवेद कि विधिमें पागा । अन्त मुख्य वैराग अरु त्यागा॥

इति

अथ चार उपवेद षट् अंगवर्णन—चौपाई

शिक्षा कल्प व्याकरण वरनो ।पुनिनिरुक्तिज्योतिषचितधरनौ॥
पिंगल सहित कहैं षट अङ्गा । विविधि भांति भाषे परसंगा॥
प्रथमें शिक्षा शास्त्रमें कहेऊ । नाना भांति कि युक्ती गहेऊ ॥
वेदके शब्द न माह बखाना । अक्षरनके अस्थानको ज्ञाना ॥
पाणिनीय है ताके करता । युक्ति चातुरी बहु तहँ धरता ॥
द्वितीये कल्पके सूत्रन माहीं । वेद कि विधिसो कहै तहाहीं ॥
कर्मके अनुष्ठान विधि गायन । पाणिनि पातंजलि कात्यायन॥
तृतिये कथे व्याकरण जोई । वेदको शब्दबोध तिहि होई ॥
पाणिनीय आदिक बहु तेरे । कर्ता सोई व्याकरण केरे ॥
चौथे निरुक्त शास्त्रके माहीं । ऐसी निर्णय कीनो ताहीं ॥

अपर सिद्धपद वेद जो होई । तासु अर्थ बोधक है सोई ॥
यास्क मुनीश्वर कथे बखानी । नाम निरूपन निर्णय ठानी ॥
आदित्य आदिक अरु बहुतेरे । रचित निरुक्त शास्त्र तिन केरे॥
पंचम पिंगल कीन बखाना । पिंगलमुनिरचि छंद विधाना॥
छटये ज्योतिष कालको ज्ञाना । आदित्यादिक गर्ग बखाना ॥

इति चार उपवेद

अथ अठारह पुराणोंके नाम—चौपाई

ब्रह्म बहुरि वयवर्त बखानो । बावन अरु ब्रह्मांड प्रमानो ॥
मार्कण्डेय भविष्य कहावे । नारद विष्णु पुराण बतावे ॥
गरुड बराह अरु पद्म गनीजे । भागवत मीन वो कूर्म कहीजै॥
लिंगो वायु पुराण बताया । फिर अस्कंधो अग्नि कहाया ॥

इति

अथ शास्त्रके अठारह प्रस्थान वर्णन—चौपाई

शास्त्रके हैं प्रस्थान अठारा । या विधि तिनको नाम उचारा॥
चार वेद उपवेद हैं चारी । वेदनके षट् अंग बिचारी ॥
धर्मशास्त्र मीमांसा न्याई । चौथे पुनि पुराण बतलाई ॥
उप पुराण पौराण अनेका । अठारहेंकी नियम न एका ॥
स्मृती महाभारत रामायण । मंत्रशास्त्र नाना विधि गायन॥
वाम तंत्र देवीके राखा । नारद पंचरात्र पुनि भाषा ॥
देव अराधन विधि बहु भनते । जक्त कार्य ताते भल गनते ॥

इति

अथ चारवेद को बाद वर्णन—चौपाई

प्रथम कहै ऋगवेद बखानी । निराकार परमेश्वर मानी ॥
निरलेपो सो अलख अगोचर । निरालंब सो जान ब्रह्मवर ॥
द्वितीय अथर्वण भाषत होई । निरालम्ब निर्लेप न कोई ॥

नहिं निर्गुण नहिं सर्गुण कहेऊ। जो कोइ मरा मुक्त सो भैऊ ॥
जैसे पत्र वृक्ष ते टूटा। फेर न सो तरुवरमें जूटा ॥
ऐसो जीव मरा यकवारा। बहुरि नहीं ताते तन धारा ॥
तृतीय यजुर अस कहे बहोरी। इन दोनोंकी मतिभई भोरी ॥
सर्गुण ब्रह्म नरायण होई। क्षीर समुद्र शयन कर सोई ॥
दश अवतार सोई धरिलीनो। गोपीनके संग क्रीडा कीनो ॥
चौथेसाम कह पुनि मत अपना। यहै सब जानो झूठ कलपना ॥
नहिं सगुण नहिं निरगुण देवा। नहीं दृष्टि गोचरको भेवा ॥
सम्पूरण है ब्रह्म अखण्डा। तत्वमसी अद्वैतसे मण्डा ॥

इति

अथ षट्शास्त्रकी बादवर्णन—चौपाई

प्रथम मीमांसा शास्त्र आचारी। कर्म थापि निजु ज्ञान उचारी ॥
जो कछु लाभ जक्तसे कीना। सो सब जान कर्म आधीना ॥
कर्महि अधिष्ठान जिवकेरा। कर्मते करे जक्त में फेरा ॥
कर्म प्रवृत कर्म लय पावै। कर्महि दुखसुख जीव भुगावै ॥
भूत भव्य व्रत मानिक जोई। कर्म अधीन जान सब सोई ॥
अज हरि हर सनकादिक जेते। कर्म अधीन जान सब तेते ॥
कर्म अधीन ज्ञान अरु योगा। जो जस करे भोग तसभोगा ॥
कर्म स्वतंत्र सर्व परगावै। जो जस करै सो तस फल पावै॥
द्वितिय बाद वयशेष वदंता। कर्म नहिं जानिये सुतंता ॥
कर्मतो कालकि बसमें होई। काल पाय कर्मकरै न कोई ॥
जब कतहुँ परगात न होई। भोर कर्म तब करै न कोई ॥
जौं मध्यान न सन्ध्या आवै। बिना काल को कर्म गहावै ॥
बाल कर्म ना हो तरुनाई। युवा कर्म नहिं शिशु करि पाई॥
युवा कर्म करि सकै न बूढा। वृद्ध कर्म तरुनाई गूढा ॥

तातै यह निश्चय करि मानो । कर्म कालकी वश में जानो ॥
कालहि ब्रह्म और नहिं कोई । काल पाय अज हरि हर होई ॥
काल पाय पुनि सो बिनसाही । उतपति प्रलयकाल बश आही ॥
कालहि ते सुख दुख लहंता । काल स्वतन्त्र कर्म परतन्ता ॥
जब चाहे क्रम कर नर लोई । काल किये ते कबहु न होई ॥
तातें काल सत्य करि मानी । कर्म असत्य वैशेषिक बानी ॥
तृतीय न्याय निज मत अर्थाई । काल है छीन छीन है जाई ॥
घटि बढि जाय कालकी बातें । काल कर्म नास्ती दोउ तातें ॥
अस्ति एक परमातम आही । तीन काल आवे अरु जाही ॥
निजु बश ईश्वर कालको धरई । जब जस चाहे तब तस करई ॥
ग्रीषम वर्षा काल बनावै । वर्षाको ग्रीषम दिखलावै ॥
चाहे रंक रावकरि द्वारी । भूपतिको पुनि करे भिखारी ॥
सकल सूत्रधर ईश्वर ऐसे । नाचे जग कठपुतली जैसे ॥
तातें परमेश्वर है अस्ती । काल वो कर्म सुभाव है नास्ती॥
चौथे पतञ्जलि कह यह लेखा । कहो कहां तुम ईश्वर देखा ॥
तुम नहिं जौं ईश्वर लखिपाई । तौ पुनि कैसे ताहि बताई ॥
कैसो ईश्वर होइ रे भाई । बिन देखे कह कहो बुझाई ॥
ईश्वर वहां सो कैसे जाना । बिनु अनुभव भाखे अनुमाना ॥
पीतर पाथर प्रथमा पूजो । अनुमानहिते मनमें सूजो ॥
यह सब झूठ भरमको फन्दा । आतम शुद्ध सच्चिदानन्दा ॥
सो हम जोग मार्ग ते जाना । तुमको नहिं कछु अनुभव ज्ञाना॥
तुम प्रतिमा पूजो यहि लेखे । हम ब्रह्मांड पिंडमें देखे ॥
तुम हो झूठो हम हैं सांचे । ईश्वरकी अनभौ तुम काचे ॥
तातें योग सत्तकरि जानो । और सकल झूठा करि मानो॥
पञ्चम सांख्यपती अस बोलो । तुम सब मिथ्या भ्रमयुत डोलो॥

यकदेशी अनुभव अरु ज्ञाना । सो कछु कामको नहीं बखाना ॥
ब्रह्म सर्व देशी कह सोई । साक्षी सर्व अकर्ता होई ॥
सब करतूत प्रकृती ठाना । योग समाध साधना नाना ॥
उतपति अस्थित परलय कर्मा । सो सबही प्रकृतके धर्मा ॥
पांचों तत्त्व पचीस प्रकृती । चारों देह आदि सब नास्ती ॥
ईश्वरको जो जाननहारा । सर्वसाक्षि सो आस्ति पुकारा ॥
ये सब अनित्तमें नित्तको आस्ती । योग आदि सब मिथ्या नास्ती ॥
झूठे वेदान्ती ऐसे कहई । मिथ्यावाद सकल यह अहई ॥
एक अखण्ड ब्रह्म है जोई । तामें अस्ति नास्ति नहिं कोई ॥
आप आप सम्पूरण व्यापा । भ्रमकरी त्रिपुटी तामें थापा ॥
ध्याता ध्यान धेय नहिं कोई । ज्ञाता ज्ञान होय नहिं जोई ॥
ब्रह्म अखण्ड अद्वैत एकरस । ताते द्वैत भाष भाषे कस ॥
नित्य नित्य समाधि है जोई । तामें सो सम्भवै न कोई ॥
देखन अरु देखनमें आये । देखनहार ब्रह्म बतलाये ॥
ब्रह्मते इतर और न कोई । नास्ति और सब मिथ्या होई ॥

सोरठा–वाद करे इमि सोय, चार वेद षट शास्त्र मिलि ।
भेद न पावै कोय, अगम अपार अकथ कथा ॥

सत्य कबीर वचन

साखी–वेद हमारा भेद है, हम वेदनके माहिं ।
जौन भेदमें मैं बसो, वेदौ जानत नाहिं ॥

अथ विष्णुके चौबीस अवतारको–वर्णन

दोहा–मीन कूर्म बाराह कह, नरहरि बामन बंक ।
परशुराम रघुराम कह, कृष्ण बुद्ध निष्कलंक ॥
व्यासकपिल हयग्रीव पृथु, यज्ञऋषभ सनकादि ।
दत्त मन्वतर बद्रिपति, धानन्तर हंसादि ॥

चौपाई

हरि औतार बहुत जग मांही । तिनकी कथा कही नहिं जाही ॥
हरि औतार जेते जग भैऊ । राम कृष्ण सर्वोपरि कहेऊ ॥
सुजस जासु जगमाहिं बखाना । गुण गण गावै वेद पुराना ॥
हरिमहँ चक्र वर्त तिहु पुरके । कोई शत्रु नहिं सम्मुख फरके ॥
ताते तिनकी कथा न लेखो । वेद पुराण न अधनी देखो ॥
जहाँ तहाँ हरिमंदिर सेवा । पूजे विष्णु विश्वंभर देवा ॥
तीन देवमें होइ है सोई । घट घट माह बिराजै ओही ॥
चारों विधिकी मुक्ति लहीजे । विष्णु देवकी सेवा कीजे ॥

इति विष्णुके चौबीस अवतार

अथ ब्रह्माके षट् अवतारके नाम

दोहा–गौतम कलि कणाद मुनि, व्यासो जैमिनि जान ।
मंडनमिश्र मीमांसकहि, ब्रह्म जग प्रकटान ॥

इति

अथ शिवजीके ग्यारह रुद्रके नाम

दोहा–सर्पकपाली त्र्यंबको, कपि कर्पर्दि मृग व्याधि ।
बहुरूपो वृष शम्भु हरि, रैवत वीरभद्रादि ॥

इति ग्यारहरुद्र

अथ ब्रह्माके दैहिक और मानसिक पुत्रनके नाम–चौपाई

ब्रह्मा द्वै सुत प्रथम उपाये । एक दक्ष एक अत्रि कहाये ॥
दक्षते सूरयको औतारा । अत्रिते बहुरि चन्द तनु धारा ॥
सूर चन्द कुल क्षत्री भैऊ । पुनि सातो ऋषि देही गहेऊ ॥
भृगु अत्री अरु पुलह बतावो । फिर अंगिरा पुलस्त कहावो ॥
नारद और वशिष्ठ उचारा । पुनि कह सनकादिक औतारा ॥
ब्रह्मा मानसी पुत्र बतावो । अत्री और अंगिरा गावो ॥

पुलह पुलस्ती क्रुत गनीजे । भृगु प्रचेत वाशिष्ठ कहीजे ॥
पुनि ब्रह्म तनु सुतकह नामा । दक्ष प्रजापति धर्मो कामा ॥
क्रोध लोभ मद मोह उपाये । हर्ष मृत्यु दशनाम बताये ॥

इति

अथ चौदह विष्णुके नाम

दोहा-यज्ञ विभू शतसेन हरि, पुनि वैकुंठो होय ।
पुनि अजितो बामन कहो, सर्वभूमिऋषिभोय ॥
पुनि अमूर्ति अममें तहै, बहुरि सुधामा जान ।
योगेश्वर बृहद्भान ये, चौदह विष्णु बखान ॥

अथ चौदह इंद्रके नाम

दोहा-यज्ञो रोचनसतजितो, बहुरित्रिशिखविभु जान ।
तथा मंत्र द्रुम जानिये, फेर पुरंदर मान ॥
बलि अद्भुत शंभू कहो, पुनि वैधृत उच्चार ।
रितुधामा पुनि द्यौसपति, शुची इंद्रदशचार ॥

अथ चौदह मनुके नाम

दोहा-मनु स्वयंभू सारोचको, उत्तम तामस रैवत्त ।
चाक्षु शतवृत सावर्नी, दक्ष सवर्नी सत्त ॥
ब्रह्म सवर्नी धर्म सवर्नी, रुद्रसावर्नी होय ।
देवसावर्नी इन्द्रसावर्नी, ये चौदह मनु रोय ॥

इति

अथ सप्तस्वर्गके नाम

दोहा-भुवरलोक अरु स्वर्ग कहँ, महरलोक जनलोक ।
तपलोको सतलोक है, सात नामको थोक ॥

इति सप्तस्वर्ग

अथ सप्त पातालके नाम

दोहा–अतल वितल सुतलोक ही, फेरि तलातल होय ।
महातला पाताल पुनि, अंत रसातल जोय ॥

इति सप्त पाताल

अथ नौघरोंके नाम चौपाई

प्रथम भूमि भूलोक बखानी । दूजे भुवरलोक है पानी ॥
स्वर्गलोक पुनि अग्निको घेरा । पितर लोक पुनि वायू टेरा ॥
पंचम शून्य लोक आकाशा । अन्तर लोक हँकार प्रकाशा ॥
सप्तम सत्यलोक मह तत्तू । अष्टम लोका लोक कहत्तू ॥
ॐ शब्द तहवां ते होई । मायाको घेरा है सोई ॥
ताके परे नामै अस्थाना । शुद्ध स्वरूप निरंजन जाना ॥
शब्द निरञ्जन ते उत पानी । ताते तब माया प्रकटानी ॥
मायाते महतत्त्व पसारा । महा तत्त्व से भा हँकारा ॥
अहँकार आकाश उपायो । पुनि आकाश वायू प्रकटायो ॥
वायुते अग्नि अग्निते पानी । ताते यह भूलोक बखानी ॥

इति

अथ सप्तद्वीप और ब्रह्मांडको वर्णन

दोहा–प्रथमै जम्बूद्वीप कह, शाकद्वीप कर फेर ।
क्रौंच कुशा शलमल्प पुनि, प्लक्षो पुष्कर टेर ॥

चौपाई

ताते परे योजन दश कोरी । कंचनकी पृथ्वी लै जोरी ॥
परम प्रकाश मान महि सोई । तासु परे परवत यक होई ॥
लोकालोक नाम सो भाषा । महाशून्य बन तापर राखा ॥
उग्र उदधि यक ताते आगे । बहुरि अग्नि ताते पर लागे ॥

पौन दसगुना पुनि पर ताही । तासु परे दशगुन नभ आही ॥
तासु परे योजन यक लाखा । सघन कंध ब्रह्मण्डको राखा ॥

इति सप्तद्वीप

अथ अष्टवसुओंके नाम

दोहा–प्रथम द्रौन पुनि प्रानकह, ध्रू अर्क अग्नि प्रमान ।
दोषा वसू विभावसू, अष्ट वसू ये जान ॥

इति अष्ट वसु

अथ चार युगोंकी आयुस्थितिवर्णन चौपाई

चारों युगकर लेखा प्रमाना । कृत त्रेता द्वापर कलि जाना ॥
सतयुगकी आयू इमि कहसे । सत्रह लक्ष अठाइस सहसे ॥
त्रेताकी आयू पुनि भाषा । छानवे सहस्र अरु बारह लाखा ॥
आठ लक्ष चौसठ हज्जारा । द्वापर आयू करो विचारा ॥
बत्तिस सहस्र चार लक्ष कहिये । कलियुगको यह लेखा लहिये ॥
चारों युग यक ठौर गहीजै । एक महायुग तासु कहीजै ॥
एक सहस्र महा युग होई । कल्प एक पुनि कहिये सोई ॥
चौद मन्वंतर कल्पमें होई । कल्प एक ब्रह्मादिक सोई ॥
ऐसे दिनको लेखा लीये । एकसौ वर्ष लौं ब्रह्मा जीये ॥
एक सहस्र ब्रह्मा है बीते । तब एक घडी विष्णुकी रीते ॥
ताके दिनते करि पुनि लेखो । निजुसौ वर्ष विष्णु थित देखो ॥
जबदशलक्ष विष्णु बित जाही । घडी एक तब रुद्र सिराही ॥
ताहि वर्ष पुनि लेखा कीये । निजु सौ वर्ष रुद्र पुनि जीये ॥
ग्यारह रुद्र जो उगि खपिजाना । रमा शिवा यक घडी प्रमाना ॥
निजु सौ वर्ष कि आयू पाई । सहस शिवा जब उगि खपजाई ॥
तब मायाको पलभर होई । ब्यौरा वेद बखाने सोई ॥
यह लेखा यक भयो प्रमाना । प्रभु माया गति काहु न जाना ॥

चहुँ युगमें आयू नर केरी । लखदश सहस्र सहस्र सत केरी॥
याहूको नहिं कीन प्रमाना । आयू थित हैं विविधि विधाना॥

इति

अथ चौदह रत्नके नाम

दोहा-श्रीमणि रंभा वारुणी, अमी शंख गजराज ।
कल्पद्रुम शशि धेनु धन, धन्वन्तर विष बाज॥

इति चौदह रत्न

अथ पंचप्रकारके यज्ञ वर्णन

दोहा-अभ्यागत आदर कहै, बहुरि वेदको पाठ ।
आहुत भूतन यज्ञ कह, पितर यज्ञकी ठाट ॥

इति पंचप्रकार यज्ञ

अथ कर्म उपासना और ज्ञानको वर्णन-चौपाई

मारग तीन वेद जो भाषा । प्रथमहि कर्म कांडको शाषा ॥
पुनि उपासना ज्ञान कहाही । तिहुके तीन देवतन माही ॥
क्रम इन्द्री क्रम कांड गहाये । अन्तःकरण उपासक गाये ॥
ज्ञान इन्द्री सो ज्ञान गहंता । यह तिहु देवको भेव भनंता ॥
मूरख कहां उपासक होई । कर्म ज्ञान यामें नहिं कोई ॥
कर्म उपासना ज्ञान जो तीनी । चौदह इन्द्रीते कहि दीनी ॥
जबलो नहिं तिहुकोसम ताई । कोई कर्म शुद्ध नहिं पाई ॥
एक हाथ जो चोरी करई । देह समस्त बन्दिमें परई ॥
कर्म उपासना ज्ञान गहाई । भली भांति तिहुमेल मिलाई ॥
दृढ हो गहै मुक्ति जिव पावैं । अब कर्मनको भेद बतावैं ॥
जो कोई पित्रकिमुक्तिकि हेता । तन मन धन अपनो सब देता ॥
पितृ लोकमें सो चलिजाई । पुनि जो जैसो कर्म कराई ॥
कोई गंधर्वके लोक समाही । देवक्रमी परजा पति पाही ॥

हिरण्य गर्भ गुरु पंडित जासी । यज्ञ करंत चन्द्रपुर बासी ॥
जीव आतमाको गुण येही । जेहि औसर जैसी गह देही ॥
भ्रम भयते संयुक्त जो होई । भ्रमही रूप बनावै सोई ॥
ज्ञान बुद्धि जब होय संघट्टा । ज्ञान रूप हो भ्रम भय कट्टा ॥
पुण्य पाप कर्मनते जूटा । बँधा जीव ग्रह ताही खूटा ॥
तिहि अनुसार कर्म सब करई । जैसो कर्म धाम तस धरई ॥
जैसी देह कर्म कर तैसा । सदा आत्माको गुण ऐसा ॥
जीव बासनाते नित पूरन । जस वासना ताहिते जूरन ॥
मनमें यथा मनोरथ होई । अंतकाल फल पावै सोई ॥
रही लगी जह जीवकी आशा । सूक्ष्म तन धरि तहकरबासा ॥
पुत्र कामना जाको होई । पुत्र देह धरि प्रकटै सोई ॥
पुत्रको ऐसो उचित बतावै । पिताकि मन कामना पुरावै ॥
पिता मनोर्थ जो सुतन पुरावै । तौ पितु बहुरि देह धरि आवै ॥
पितु अपने मनोर्थ को हेरे । धरे देह निज इच्छा प्रेरे ॥
ज्ञान अरु परमारथ के कारण । जीव कीन मानुष वपु धारण ॥
अबलों कथा प्रसंग जो रहेऊ । बंधकामना ब्यौरा कहेऊ ॥
वर्णन अब कीजे कछु तिनको । रहित कामना मन है जिनको ॥
सकल कामनाको जो त्यागे । कारण द्वै तिहि माह विभागे ॥
होय कामना जो कछु हीये । फेर न चाह भोगिभल लीये ॥
द्वितिये ज्ञानदृष्टि मनकामा । तुच्छ दृष्टि देवै सब तामा ॥
मिथ्या सकल जो कछु दरशाई । जानि अनित्य न नेह लगाई ॥
आतम ज्ञान सर्व पर जानी । ताते सर्व लाभको मानी ॥
आतमते सब कुछ प्रकटाना । ताहि लाभ सब लाभ लहाना ॥
सकल कामना जो कोइ त्यागे । आतम ज्ञान तासु उरजागे ॥
जो कछु चितमें चाह चपेरे । तौ बीन तन यह जिव हेरे ॥

जाके हृदय कामना नाहीं । ब्रह्म स्वरूप कहीजै ताहीं ॥
रहित मनोरथ अमर है सोई । मयनहार कातिक जिव होई ॥

छन्द-सब चाह उतरते दाह भै तब मुक्ति याकी सन्ध है ।
जब लोन करिये बामना तिहि कामना जिव अन्ध है॥
यहि लोककी वहि लोककी तिहि शोकमें यह बन्ध है ।
चाहे चमारी चूहरी तिहि फूहरी दुरगन्ध है ॥
जिमि सर्प त्यागे केंचुली इमि चाह उतरे त्यागिये ।
तजि ताहि फणि फिरि चाह नहिं यौ पुनि ना तामें पागिये॥
मद मार विषय बिकार डारके रूपते अनुरागिये ।
दलमलितखलदललल्लितज्ञानते ब्रह्महो जिय जागिये ॥

जो निष्काम कर्मको करही । तिनको कबहुँ न घाटा परही ॥
चाह न कर्म पलनते जाही । निश्चय अधिक फल कर्मते ताही॥
नफाहेतु जो कर्मको गहते । घाटा हू पुनि सोई सहते ॥
जिनको फलनकी इच्छा नाहीं । जो प्रभुकृपासे तिहि मिल जाहीं॥
सो फल नफामें लेख लगाये । ऐसी समुझ मुक्तिपद पाये ॥
जप तप तीर्थादिक व्रत दाना । सहित मनोरथ जाने ठाना ॥
इनको फल जो कोई चाही । सो जिव असुर लोकमें जाही॥
कर्मके बन्धनमें सो बांधा । बृथा सो निज इन्द्रीको साधा॥
बादिसो आपनो ग्रह सुख खोई । अन्धकारमें अधिक बिगोई ॥
जो कोई है आतम ज्ञानी । सर्वमई सो आपुहि जानी ॥
पुण्य पाप सुख दुःख सब जोई । नर्क स्वर्ग आदिक जो होई ॥
ब्रह्मा विष्णु रूद्र अभिमानी । सो सब अपनी देह बखानी ॥
भ्रम रज बन्धा जीव अज्ञानी । सो टूटै आतम जब जानी ॥
जिनमें नहिं साधूकी करनी । बचन बनाय ज्ञान बहुबरनी ॥

साधू नहिं भाँड है सोई । ताते अधिक न शठ है कोई ॥
तिनते भलो जानिये सोऊ । आगम फल आसा कर जोऊ॥
कर्म उपासना ज्ञान जो होई । भिन्न भिन्न तिहि फल कर जोई॥
ज्ञानते इतमें भेद बिचारा । तिनको फलहु बतावज्योन्यारा॥
सो अक्षर अभ्यासी अहई । ताहि न अर्थी पण्डित कहई॥
कर्म उपासना ज्ञान जो तीनी । एकै फल तीनते कहि दीनी ॥
सनबन्धी यक दूजा हेरो । ज्ञानको अर्थ जाननो टेरो ॥
कर्मको मर्म न हृदय गहाया । नहिं उपास्य गुणको लखिपाया॥
कर्म उपासना झूठे तिनके । कछु ब्योरा हियमें नहिं जिनके॥
कर्मको अर्थ याहि बिधि कहना । चाल चलन सुकर्म सब गहना॥
जाके हृदय हो उत्तम ज्ञाना । करनी तासु विरुद्ध लखाना ॥
ताहि ज्ञानते गुन कछु नाहीं । कर्म उपासना वृथा कराहीं ॥
साची प्रीत उपासना सोई । होय एकता रहै न दोई ॥
जबलो नहिं यह गुन दरशाई । कर्म उपासना ज्ञान वृथाई ॥
जो कोई विषयनको त्यागे । ताके हृदय ज्ञान यह जागे ॥
ज्ञान दृष्टि करि तब सो जाना । कर्मोपासन योगो ज्ञाना ॥
चारों चार तत्वसे कहिये । रचना सकल सृष्टि तिहि लहिये॥
चारों मिश्रित सम सुख दाई । घटि बढि भये न सुख कोइ पाई॥
बिना ज्ञान करा कर्म जो लोगू । कर्मोपासन अथवा योगू ॥
सो निशि दिन जो निजुतन कसही । आशा तृष्णा युति बुधि नशही॥
कर्मोपासन योग समाधा । ज्ञान सहित जो कोई साधा ॥
सो सब विषम अविद्या जानी । जीयत जीवन मुक्त सो मानी ॥
मुये विदेह मुक्ति लह सोई । जिनके हृदय ज्ञान अस होई ॥
मरण काल जिहि औसर आवै । देहकि नेह जीवको छावै ॥
तनकी प्रीतिसे दुःख बड माने । काहूको नहिं तब पहिचाने ॥

जीव आत्मा यह तिहि बेले। इंद्रिनको निजु संग सकेले ॥
सब इंद्री तजि निज खूटे। जाय जीव आतम ते जूटे ॥
उरमह दिसे बुद्धिके रूपा। मूर्ति एक तामें सब गूपा ॥
तनधारि तन आपुहि जाना। इंद्रि सकल रहित भे ज्ञाना ॥
दृष्टि तब खनते हिलही। सूक्षम तन गति सूर्जते मिलही ॥
सूँघन पृथ्वी माह समाई। रसना स्वाद वरुणा में जाई ॥
वाक अग्निमें पौन समीरा। दिशा स्रौन मन शशिके तीरा ॥
भूताकाश बुद्धिकर थाना। जिव सब संगले करे पयाना ॥
जो जिव भले कर्मको करता। दृगमार बाहर पग धरता ॥
सूर्य माह सब जाय समाई। इमि सब इंद्री राह गहाई ॥
भले कर्म जिनके अधिकाई। ब्रह्मरंध्र कढि बाहर आई ॥
जैसो कर्म करे जो कोई। तैसी राह गहै पुनि सोई ॥
जिवको बासा तनते छूटे। आवा गौन श्वासको टूटे ॥
जड समान देही रहि जाई। जीव नवीन कलेवर पाई ॥
अहं बोलिके जीव सिधारै। हौं मैं प्रथमहि शब्द उचारै ॥
सहित कर्म जिव करे पयाना। तजि तनथूलसौ लिंग लहाना ॥
निज कर्मनके प्रेरित येही। सदा नवीन धरे जिव देही ॥
जिमियक भूषण भंजि सोनारा। निज इच्छाते और संवारा ॥
तैसे देह जीव यह गहई। पुनि पुनि गहै तजै श्रुतिगहई ॥
पूरन काल जीवको बाजा। उर्ध गमनको करै समाजा ॥
अधर लोक दोउ लोकके बीचे। कर्म तहां जब जिवको खींचे ॥
ज्यौं जाग्रत स्वपने भरमाई। अपने कर्मको फल इमि पाई ॥
सरगुन गहिकर सुरनमें बासा। असुरको गुनगहिदुःखथहुँपासा ॥
प्राण स्वप्नमें देखत सोई। जाग्रित माह बिचारे जोई ॥
ताहि समान गहैं सो देहा। दुख सुखको है कारण येहा ॥

स्वप्न समान नर्क अरु स्वर्गा । इच्छारहित अहित अपवर्गा ॥
ऐसे निज अनुमान गहाये । नर्क स्वर्ग अरुमध्य गहाये ॥
मारग मुक्ति कहावे सोई । सूरय मंडल बेधे जोई ॥
ब्रह्म लोक की मारग पाई । ताहि संग निज बास गहाई ॥
जिमि दीपक घटज्योति अपारा । जीव आतमा रूप सोधारा ॥
नसाजाल आतमकी ज्योती । सो बहुरंग ढंग की होती ॥
श्वेत हरित दुति प्रीती देखाये । भूरा रंग तासु प्रगटाये ॥
नसन प्रकाश तासु उर होई । मुक्त होत पहुँचे जो कोई ॥
सुषुम्णामें मिलि एकसौ नारी । उत्तम मध्यम लोक सिधारी ॥
केती नशा अधोमुख आहीं । अधोगती को सो ले जाहीं ॥
गहै गैल तिहि मारग जबहीं । अधोगती जिव पहुँचे तबहीं ॥
यहि विधि नर्क स्वर्ग जिव जाही । थित प्रमाण दुखसुखलह ताही॥
पूरण जब करार हो आवै । तब मृत मंडल वासा पावै ॥
कर्मके बंधन जिव तन धरहीं । चार खानिमें दुख सुख भरहीं ॥
स्वेदज जरायुग अंडज पिंडज । नाना बरन रूप निजु २ सज ॥
अंतमें जीव सुरति रह जाही । प्रगट होय सो धरितन ताही ॥

इति

अथ जीवको योनिप्रवेशवर्णन-चौपाई

योनि प्रवेश जीव जब करता । कोई धूम्र मारग पग धरता ॥
देह वानमें जाय समाई । वीर्य रूप ह्वै सो प्रगटाई ॥
मेघ बून्द मारग ते कोई । हो रसरूप औषधि सोई ॥
तेहि भोगीके वीर्य मँझारा । केते प्राण वायुके द्वारा ॥
पौन पंथ गहि केते समाई । केते धान खेत प्रवेशाई ॥
चावल आदिक अन्नमें रहई । नाना वर्ण रूप सो गहई ॥
केते गगनमें स्थित गहाई । चंद्र किर्णमें रहे समाई ॥

किर्णमार्ग औषधहि समाही । किते पुष्प फलमें भरजाही ॥
तनधारी तिहि भोजन करही । जड आतमके बीर्यमें भरही ॥
सो सुखोसि में वेष्ठित सारे । पिंजर गर्भमें सोई सिधारे ॥
दूध यथा है घृतमें पुरा । तिमि बीरजमें सब जिव जुरा ॥
बीरज दूरबीन ते देखो । चलतहिलतजिवअनितनिरेखो ॥

इति

अथ शरीरवृक्षवर्णन–चौपाई

एक प्रणवते सब संसारा । सबको आदि सर्व करतारा ॥
ब्रह्म सोई ओंकार कहीजे । मन ओंकार न भेद गहीजे ॥
ओंकार मन कर्म निरंजन । कर्म स्वरूप जवतको रंजन ॥
कर्मते फुटी तीन पुनि शाखा । रज सत तम जगकारन राखा ॥
कर्मते करत होय निहकर्मा । आगम ज्ञान गहि टूटे भर्मा ॥
तृष्णा ग्रन्थि कर्ममें परई । सोई जीवको बंधन करई ॥
आतम परमातम यह रूपा । विषयमें भूलि परा भ्रम कूपा ॥
विषय वा सना त्यागे जोई । ब्रह्म स्वरूप जानिये सोई ॥
आतम परमातमा विहंगा । दोनों एक स्वरूप यक ढंगा ॥
एक है पंछी एक है छाया । छाया नहिं आया लखि पाया ॥
मूल थूल जहँ तहँ प्रभु आपू । भ्रमकरि न्यारा न्यारा थापू ॥
पड़ा जीव यह त्रिगुनके फंदा । भूला रूप चिदानन्द कन्दा ॥
काया वृक्ष ऊर्ध्व है मूला । हेठ शाख पत्री फल फूला ॥
मूल परम पूरूषको भेवा । पेड निरंजत शाख त्रिदेवा ॥
पाती जान सकल संसारा । सत्य कबीर वचन उचारा ॥

सत्य कबीर वचन–शब्द

सार शब्दसे बाचिहो मानो इतबारा हो ।
अक्षय पुरूष यक वृक्ष है नीरंजन डारा हो ॥

---

१. शरीर वृक्ष का चित्र देखो "कबीर भानु प्रकाश" में ।

शाखा तिरदेवा बने पाती संसारा हो ।
ब्रह्मा वेद सही किया शिव योग पसारा हो ॥
विष्णु माया उतपति किया उरला व्यौहारा हो ।
तीन लोक दशहु दिशा रोके यमद्वारा हो ॥
ज्योतिस्वरूपी हाकिमा जिन अमल पसारो हो ।
अमल मिटावो ताहिको पठावो भवपारा हो ॥
कहै कबीर तिहि अमर करो निज होय हमारा हो ।

चौपाई

यजुरवेद भाषै भल ढंगा । जिमि आतम परमात्मा बिहंगा ॥
बहुरि यकादश गीता कहई । जैसे फांस जीव गल गहई ॥
कामिक जीव बँधा बहु बन्धन । फँसा आश तृष्णाके धंदन ॥

साखी–माया मुई न मन मुवा, मरि मरि गई शरीर ।
आशा तृष्णा ना मुई, यौं कथित कहै कबीर ॥

इति शरीर वृक्ष वर्णन

अथ संप्रदाय धर्मवर्णन–चौपाई

वेदमें दोय संप्रदा जानी । यक श्री यक शंकरी बखानी ॥
श्री सम्प्रदा विष्णुकी होई । शिव सम्प्रदा शंकरी सोई ॥
दोहुमें चार चार विधि भाखो । न्यारो न्यारो नाम सो राखो ॥
प्रथमें विष्णु सम्प्रदा कहिये । चार भाग पुनि तामें लहिये ॥
प्रथमें श्री संप्रदा बखानो । रामानुज आचारय मानो ॥
द्वितिये शिव संप्रदा प्रचारी । विष्णु श्याम ताके आचारी ॥
तृतिये ब्रह्म संप्रदा साका । माधवानंद आचारय जाका ॥
सनकादि संप्रदा चतुर्थं । निंबादित्य अचारय पुष्टे ॥
प्रथम कहो श्रीसत अर्थाई । रामानुजकी कथा सुनाई ॥

इति

अथ रामानुजजीकी कथा—चौपाई

होन लगी जब धर्मकी हानी। शेषते तब कह शारंग पानी ॥
धरणी जाय धरो औतारा। करो तहां श्रुति धर्म प्रचारा ॥
भगवतकी जब आज्ञा पाये। तब धरणी धर धरणी आये ॥
केशव यज्ज्वा विप्र कहाऊ। कान्तिमती माताको नाऊ ॥
ताके गृहमें सो तनधारी। धर्म धुरंधर परम अचारी ॥
आठ सौ वर्षके ऊपर होने। कांचिपुरीके उत्तर कोने ॥
देश उडीसे के दिश लच्छिन। भूत नगरी औतार धरे तिन ॥
जक्त माँह आचार चलाये। पुनि पुरुषोत्तम पुरमें आये ॥
तहां जाय निज मनहि विचारा। जगन्नाथमें चलै अचारा ॥
जगन्नाथ नहिं मान्यौ सोई। मेरे पुर आचार न होई ॥
तब हरि ऐसी कीन्ह उपाई। रामानुज कह लियौ उठाई ॥
निज पुरते रात्रिके माही। धर दियो रंग पुरीमें ताही ॥
रामानुज को निजु अस्थाना। तोतादरी दक्षिणमें जाना ॥
एकसौ बीस वर्षलों जीये। गुरु पीढी इमि वर्णन कीये ॥

इति

अथ रामानुजजीकी गुरुपीढ़ी वर्णन

दोहा—प्रथमें नारायण कहो, द्वितिये लक्ष्मी जान।
विश्वसेन तृतीय कहो, पुनिसठकोप बखान ॥
पञ्चम श्रीनाथो कहो, पुंडरीकाक्ष है षष्ट।
राममिश्र सतयें कहे, यमुना चारय अष्ट ॥
नौमें पूर्णाचार्ज है, रामानुज है तासु।
ग्यारहें देवाचार्ज है, हरियानन्द है जासु ॥
तासु राघवानन्दजी, ताके रामानन्द।
पन्द्रहें रामानन्दके, शिष्य अनन्तानन्द ॥

बहुरि अनन्तानंदके, कृष्णदासजी शिष्य ।
बहुरि कीलजी तासुके, लगता गद्दी दिख्य ॥
कीलते पुनि पंद्रह गनो, लगता जयपुर माहि ।
हरिप्रसादलों लेखिये, चौदह पीढी ताहि ॥
उन्नीस सौ तेरह सँवत लों, लेखा कीजे तास ।
ईश्वर जक्तसे भिन्न है, द्वैत धर्म परकाश ॥

इति

अथ त्रिदण्डीको वर्णन–चौपाई

श्री सम्प्रदाके जो संन्यासी । गृह तजिके जब होहि उदासी ॥
दण्ड हाथमें धारै सोई । सो यक ढाककी लकरी होई ॥
तीन शाख तिहि लकुटी माहीं । नाम त्रिदण्डी तासु कहाहीं ॥
जो कोई सो दण्ड गहाये । नाम त्रिदण्डी तासु कहाये ॥
वस्त्र श्वेतके सिंगरफ रंगा । भगवाँ आदिक धारे अङ्गा ॥

इति त्रिदण्ड

अथ रामानन्दजीकी कथा–चौपाई

रामानन्द विप्र औतारा । मथुरा नग्रमें सो तन धारा ॥
धन विद्याते पूरन रहेऊ । सब लुटाय संन्यासी भयऊ ॥
यक औसर गुरु रामानन्दा । बिचरत मिले राघवानन्दा ॥
ताहि राघवानन्द बताई । काल तुम्हारा पहुँचा आई ॥
मृत्यु सुनत रामानन्द डरेऊ । राघवानन्दसे बिनती करेऊ ॥
मैं विद्यामें जन्म गँमायौ । भजन विहीन मृत्यु नियरायौ ॥
मोपर दया करो गोसाँई । काल फन्दते लेहु छोडाई ॥
राघवानन्द कृपा तब कीने । ताहि आपनी दीक्षा दीने ॥
ऐसी युक्ति बहुरि सो करेऊ । तासु प्राण ब्रह्मांडमें धरेऊ ॥
मृत्यु काल बीता जब सारा । तब ब्रह्मांडसे प्राण उतारा ॥

अधिक कृपा गुरु तापर कीनो। रामानन्दको यह वर दीनो ॥
आयू साढे सात सौ वर्षा। बकसिदीन गुरुको हिय हर्षा ॥
गुरु सेवा चिरकाल बिताये। पुनि रामानन्द काशी आये ॥
रामानुज की सम्प्रदा माही। अधिक अचार देखिये ताही ॥
कछुक खेदको कारण पाई। रामानन्द अचार भुलाई ॥
आचारिनमें जब पग दीने। पगसे तब तिहि बाहर कीने ॥

दोहा-बहुरि राघवानन्दजी; रामानन्दसे भाष।
अब न्यारी निज सम्प्रदा, कीजे मन अभिलाष ॥

चौपाई

रामानन्द सम्प्रदा न्यारी। तादिनसे मैं अलग अचारी ॥
रामानन्दको घना पसारा। धर्म आपनो जग विस्तारा ॥
रामानंदके शिष्य घनेरे। सिद्ध प्रसिद्ध भे जक्त बडेरे ॥
अनंता अरु सत्य कबीरा। सुरसरा सुखानन्द मतिधीरा ॥
भावानन्द पीपा रविदासा। धनाआदि गुनगन परकाशा ॥
केते सिद्ध साधु गुनधारी। रामानंद पसारा भारी ॥
बावन द्वारा जाको भाषा। रामानन्दको बहु शिष साषा ॥

इति

अथ श्रीसम्प्रदायको धामक्षेत्र वर्णन-वार्ता

अयोध्या धर्मशाला चित्रकूट सुखविलास गोदावरी प्रदक्षिणाक्षेत्र धनुषतीर्थ रामनाथ धाम अच्युतगोत्र शुक्लवर्ण सीता इष्ट जानकी मन्त्र राम उपासना मंत्र राघवानंदमहाप्रसाद अनन्त शाखा सामीप्य मुक्ति श्रीनद्वार लक्ष्मी आचार्य विश्वामित्र ऋषि योगवाशिष्ठ मुनि हनूमान देवता हनूमान मन्त्र राम गायत्री ऋग्वेद हरिनाम अहार विष्वसेन पार्षद रामानुज वैष्णव।

इति

अथ शिवसंप्रदाय वर्णन–चौपाई

विष्णुकांचि दक्षिणके माहीं । विर्दराजको मन्दिर ताहीं ॥
तहँवा परमानन्द मुनीशा । भजन ध्यान धारे जगदीशा ॥
तापर शिवजी कीनी दाया । हरि उपासना भेद बताया ॥
शिवजी मुख्य अचारज पाका । ताते चली सम्प्रदा शाका ॥
विष्णु श्याम सम्प्रदामें येही । अधिक प्रसिद्ध भयो मतिजेही॥
भई प्रसिद्ध ताहिके नामा । विष्णु श्याम आचारय यामा॥
धर्म तासु अद्वैतक होई । ईश्वर जक्त भेद नहिं कोई ॥
जबहि बल्लभा चारय भयऊ । कछु उपासना भिन्न सो कियऊ॥
गोकुल ग्रामहि सो पग दीने । वृन्दाबनमें बासा कीने ॥
यह सम्प्रदा चाल यह धरही । बालकृष्ण की सेवा करही ॥
भिन्न भिन्न गद्दी तहां अहई । नारि पुरुष हरिसेवा गहई ॥
नन्द यशोदा आपको जानी । पुत्र सो प्रियहरि सेवा ठानी ॥

इति

अथ विष्णु श्यामजीकी कथा और गुरुपीढीवर्णन–चौपाई

विष्णु श्याम द्विजकुल औतारा । दक्षिण देशमाह पगु धारा ॥
गुरु पीढी ताकी इमि कहिये । शिवके परमानन्दको लहिये ॥
ताके पुनि आनन्द मुनीशा । पुनिप्रकाशमुनि श्रीकृष्णदीशा॥
नारायणमुनि जैमुनि श्रीमुनि । इमि उनचास पीढी बीती गुनि ॥
उनचासवीं पीढी जब आई । विष्णु श्याम तबहीं प्रकटाई ॥
ताके शिष्य लक्ष्मण भट भैऊ । तासु बल्लभाचारय कहेऊ ॥
ताके विठ्ठलनाथ प्रसंशा । ऐसे प्रकटे पन्द्रह वंशा ॥
पन्द्रहवीं पीढी जब आई । मनसा राम तबै प्रकटाई ॥
विष्णुश्यामसे ये पन्द्रह भो । सम्वत उन्नीससौ तेरहलो ॥

इति

अथ शिवसम्प्रदायको धामक्षेत्र वर्णन–वार्ता

विष्णुकांची धर्मशालामार्कंडेयक्षेत्र इन्द्रधनु सुख विलास पुरुषो-त्तम धाम लक्ष्मी इष्ट जगन्नाथ उपासी तुलसी मंत्र त्रिपुरारि शाखा वामदेव आचार्य सायुज्य मुक्ती नेत्रद्वारा हरिनाम अहार यजुर्वेद अच्युत गोत्र शुक्ल वर्ण बट कृष्ण परिक्रमा जलबिंदु ऋषि नारद देवता विष्णुश्याम वैष्णव ।

इति

अथ ब्रह्मसंप्रदायवर्णन चौपाई

कह अब तृतीय सम्प्रदा सोई । ब्रह्मा आदि अचारय होई ॥
आदि काल नारायण देवा । ब्रह्मासे भाषे यह सेवा ॥
यहि सम्प्रदा आचार्य सयाना । भये माधवानंद प्रधाना ॥
भै सम्प्रदा विदित तिहि नाऊ । माधवाचार्य गहे भल भाऊ ॥
कांचि पुरीके पश्चिम दक्षिण । द्विज कुलमें औतार गहे तिन ॥
द्वैताद्वैत धर्म निज केरे । ईश्वर निज मायाको प्रेरे ॥
तब यहि जगकी रचना होई । ईश्वर भिन्न मिला पुनि सोई ॥
गुरु पीढी अब कहो बखानी । आदि अचारय सारंगपानी ॥
द्वितियेब्रह्मा तृतिये नारद । चौथे व्यास जो बुद्धि विशारद ॥
सुबुधा चार्य नरहरा चारय । सप्तम कहे माधवा चारय ॥
माधवाचारजते लेख उचारा । पूर्नानन्द लो वंश अठारा ॥

इति

अथ ब्रह्मसंप्रदायके धामक्षेत्र वर्णन–वार्ता

अवंतिका पुरी धर्मशाला बद्रिकाश्रम धामा नैमिषारण्य सुख-विलास अङ्कपात्रक्षेत्र सावित्री इष्ट ब्रह्मोपासी विष्णु हंस मंत्र हंस देवता सालोक मुक्ति मोक्ष द्वारा श्री कालाचार्य अद्वैत शाखा

अच्युत गोत्र शुक्ल वर्ण हरिनाम अक्षार परमहंस ऋषि नारायण पार्षद अथर्वण वेद माधवाचार्य वैष्णव।

इति

अथ सनकादिक संप्रदायवर्णन—चौपाई

चौथी संप्रदाय सनकादिक। निंबादित आचार्यमरयादिक ॥
अरुण ऋषीधर द्विजकुल टेरा। निकट गोदावरि नग्र मुंगेरा ॥
धर्म वशिष्ठि द्वैत सो धारा। अहि कुंडलनहिं अहितेन्यारा ॥
जग ईश्वर नहिं भिन्न रहाई। सदाकाल दोहुकी यकताई ॥
गुरु पीढी यहि भांति बतायन। प्रथम हंस औतार नरायन ॥
पुनि सनकादिक नारद कहिये। चौथे निम्बादित को लहिये ॥
निम्बादितसे लेखा ठनिये। पैंतिसपिढिहरिव्यासलोगनिये ॥
भये प्रतापवान हरिव्यासा। ताते भल यह धर्म प्रकाशा ॥
जो हरि व्यासके शाखा भेऊ। नाम तासु हरिव्यासी कहेऊ ॥
सो भूराम हरि व्यासके अंशा। ताहूको गुन अधिक प्रसंशा ॥
पुनि हरिव्यास ते लेख लगाई। संवत उन्नीस सो तेरह ताई ॥
बारह पीढी गई सिराई। माखनदास देह तब पाई ॥

इति

अथ सनकादिक संप्रदायके धाम क्षेत्र वार्ता

मथुरा धर्मशाला क्षेत्र गोमती वृन्दावन सुखविलास गोर्वधन परिक्रमा द्वारावती धाम रुक्मिणी इष्टगोपालउपासी वंशगोपाल मंत्र गोपाल गायत्री हंस शाखा सारूप्य मुक्ति नासिका द्वारा सनकादिक आचार्य नारद मुनि दुर्वासा ऋषि गरुडदेवता साम वेद श्रीभद्र महाप्रसाद अच्युत गोत्र शुक्लवर्ण हरिनाम अक्षार निंबादित वैष्णव ॥

अथ चारों भाईका धामक्षेत्र वर्णन-वार्ता

माता वरुणावती पिता अगस्त्य गुरु धर्मऋषि स्वर्ग नगरी अच्युत शुक्ल वर्ण अनंत शाखा सामवेद ॥ निष्काम भिक्षा धाम रंगनाथ सुखविलास कोटपाट हरिनाम आहार परम बद्रिकाश्रम क्षेत्र मठ वैकुण्ठलक्ष्मीदेवी नारायण ॥ देवता पूजा अक्षय बटकी श्रीरंग सम्प्रदाय ऊख खाडा शून्य स्थान सुमेर परिक्रमा बीजमंत्र ॥

इति

अथ चारों संप्रदायके तिलक स्वरूप-चौपाई

श्री संप्रदायके जो आचारी । चरणचिह्न प्रभु तिलक सँवारी ॥
दोय लकीर ऊर्ध्व गत हेरे । श्री अरु नारिबीच तिहि केरे ॥
हेठ तिलक हरिको सिंहासन । जोरी बनावे निजुलीलारन ॥
मध्यमें लाल वरन श्री करही । दीपशिखाजिहिविधिलखिपरही
एता पीता वरन श्री होई । रामानन्द संप्रदा सोई ॥
द्वितिये विष्णुश्यामविधि जोहे । दोय लकीर लीलारमें सोहे ॥
हेठ सो सिंहासन शून्य है बीचे । जाति बरनते चित नहिं खींचे ॥
साधू होहि विरक्त न होहि । कह मरयाद पालना होहि ॥
तृतिये माधो संप्रदा कहिये । दोय लकीर ऊर्ध्वगत लहिये ॥
हेठ सिंहासन ताहि बनाई । चरणचिह्न प्रभु माथ सोहाई ॥
चौथे निम्बादित्य जो साजे । दोय लकीर लीलार विराजे ॥
हेठ सिंहासन बन्दु विचाला । ऊर्ध्व पुंड्र अरु वैष्णव चाला ॥

इति

अथ वैष्णवके द्वादश तिलक वर्णन

दोहा-ऊर्ध्वपुंड्र मस्तक प्रथम, ब्रह्मरंध्रपुनि जोय ।

---

१ तिलकोंका चित्र देखो 'कबीर भानु प्रकाश' में ।

तृतिय नेत्र दोउ कंठपुनि, उर नाभी फिर होय ॥
उर दोहु दिश भुज दोय पुनि, तथा पृष्ट परमान।
बरन बइष्णवके यही, द्वादश तिलक बखान ॥

इति द्वादश तिलक

अथ वैष्णवके दशचिन्ह वर्णन

दोहा–भद्र भेषतशोचकर पुनि, तुलसी गल माथ।
रामकृष्णको मंत्र गह, गोपी मृतिका साथ ॥
शिखा सूत्र करमण्डलो, धौत वस्त्र गुरुवाक।
चिह्न वैष्णवके दशो, चार संप्रदा साक ॥

इति

अथ बावनद्वारेके नाम

दोहा–प्रथम अनंता जी कहे, साहिब सत्य कबीर।
पुनि सुरेश्वरानंदजी, सुखानन्द मति धीर ॥
अनभय नन्द मुरारजी, अग्रदासजी काल।
दीपाजी रवि दासजी, नामदेव दृढशील ॥
खोजी जंग दिवाकर, वीरम त्यागी जान।
परशराम नाभा टिला, भोला नैन बखान ॥
पूरन बैराटी कहे, बहुरि घमण्डी देव।
ज्ञानिकुबा हरि बंशजी, राघावा वल्लभ येव ॥
गोकुल विट्ठल करम चँद, जोगानंदी जोय।
धरनीदास मलूकजी, असख देवनी होय ॥
माधो कानी रामरावल, आत्माराम प्रकाश।
लाल तरंगी देव भडंग, भगवान तुलसीदास ॥
हठी नरायण राम रँगी, चतुरा नागा होय।
नित्यानन्दी राम कबीर, श्यामानन्दी सोय ॥

हनूमान दास कमालजी, चेतन स्वामी नाम ।
दास चतुर्भुज राम जपु, मन पुनि कह दुंदूराम ॥

इति बावनद्वार

अथ सात अखाडनके नाम

दोहा–टाटंबी निरालंबी कह, संतोषी विख्यात ।
निर्वानी दीगम्बरी, षोकी निरमोहि सात ॥

इति सात अखाडन

अथ तेरह परमभागवतके नाम–चौपाई

नारद पुंडरीक प्रहलादा । व्यास वशिष्ठ पराशर वादा ॥
भीषम रुकमांगद विभीषनौ । अर्जुन अम्बरीष शुक सेनौ ॥

इति

अथ रामानन्दजी और सत्यकबीरकी कथा–चौपाई

सत्यकबीर मनुष तन लीने । जोलहाके घर बासा कीने ॥
अगम ज्ञान कथ साधुन पाही । सुनि आश्चर्य करे मनमाही ॥
निजु निजु मनमें करे बिचारा । बालक नहीं सिद्ध औतारा ॥

सत्यकबीर वचन शब्द

साखी–तब हम साध सिद्धते, कथे गुष्टि घन ज्ञान ।
सिद्ध साध मिलिमोकह, पूछे गुरुको नाम ॥

चौपाई

गुरु नहिं नाम कहौ क्यों ओही । तब वे दोष देहि सब मोही ॥
साकठ होई कथ्यो बहु ज्ञाना । गुरुविन मुक्ति न होय निदाना ॥
तब अपने मन कीन बिचारा । तब गुरु उठो द्वंद संसारा ॥
हम गुरुमुक्ति दृढावन आये । गुरुमारग जिवलोक पठाये ॥
गुरु धारनको मनहिं बिचारा । रामानंदसे वचन उचारा ॥
रामानन्द गुरु दिक्षा दीजै । गुरुपूजा कछु हमसे लीजे ॥

तब रामानन्द बचन सुनाई । शूद्रके कान न लागौ भाई ॥
रामानन्द न दिक्षा दीने । तब कबीर अस उद्यम कीने ॥
वीच पंथमें पौढे जाई । जिहि मारग रामानन्द आई ॥
पिछला पहर राति जब आवै । रामानन्द असनानको जावै ॥
चले जात मारगमें जबहीं । लगा खराऊँ ठोकर तबहीं ॥
तब पुकारिके रोवन लागे । रामानंद खडे भे आगे ॥
बालक देखि दया उर आई । रामानंद कहे समुझाई ॥
मतिरोवो मति करो पुकारा । राम नाम किन कहु मेरे बारा ॥
तब कबीर सो शिक्षा पाई । गुरु शिष्यको भाव बनाई ॥
रामराम धुनि रटनि लगाया । रामानंदसे बचन सुनाया ॥

सत्यकबीर वचन

गुरुजी समुझि गहो मोरे बाहीं । औरनसो चेला हम नाहीं ॥
जो बालक घुनघुनवा खेले सो बालक हम नाही ।
चौदह सो चौरासी चेले तिनमध्ये हम नाहीं ॥
हम तो लेते सत्तको सौदा पाखंड पूजवै हम नाहीं ।
बांह गहो तो गहिके पकरो फेर छूटि ना जाहीं ॥
हाड चाम मेरे नहिं कोई जुलहा जाति हमनाहीं ।
तुमरी नावमें केवट नाहीं लहरि उठै विकरारा ॥
गुरु समेत शिष्य जब बूडे कौन उतारो पारा ।
जौं तुमरे कछु उद्यम नाही भीख मांगि किन खाहू ॥
मूरि सजीवन जानत नाहीं भूलि न बांधो काहू ।
सूखे काठमें ज्यों घुन लागे लोहे लागी काई ॥
बिन परतीत गुरू जो कीजै तो काल घसीटे जाई ॥
कहे कबीर सुनो रामानंद यह सिखलेव हमारी ।
निरखि परखिके चेला कीजै तागुरुकी बलिहारी ॥

चौपाई

रामानन्द गये असनाना । तब कबीर गृह कियौ पयाना ॥
भोरहि कण्ठी तिलक लगाये । नग्रलोग सब देखन आये ॥
पूछे किमि यह भेष बनाये । तब कबीर यह उत्तर सुनाये ॥
रामानन्दको गुरु हम धारा । ताते ऐसे भेष सँवारा ॥
रामानन्द खबर जब पाई । तब कबीरको टेरि बोलाई ॥
रामानन्द गुरु परदा धारा । सत्य कबीर से बचन उचारा ॥
रे जोलहा ते कहसि न मोही । कब मैं दीक्षा दीनों तोहीं ॥
गुरुजी राम कृष्ण तुम मेरे । रैन पन्थ प्रकटे क्यों तोरे ॥
तुम तब रामनाम मोहि दीना । मैं निज जन्मसुफलकरिलीना ॥
कहै गुरु यह बालक रहेऊ । ठोकर लगा राम तिहि कहेऊ ॥
गुरुजी हमही रहै सो बाला । राम राम सुनि भयेनिहाला ॥
कह गुरू तू वैश्य कि शूद्रा । वह तो हता बाल बुधि भोरा ॥
तिहि छिनबालरूप दिखलाओ । तब गुरु रामानंद पतियायो ॥
पै जोलहा ब्रह्मवादि कराही । अन्तर ओट सोदियौ बहाई ॥
कहै साधु गुरुसे समुझाई । कबीरहिजुलहानकहिये गुसांई ॥
अनंतानंद कहै परचाये । कबीर सो ब्रह्मरूपधरि आये ॥
दीजे दरशन इनको स्वामी । ये आहि ब्रह्मसोअन्तरयामी ॥
तबहु न दर्शन दीन गुसांई । तब हम सन्मुख ठाढभे जाई ॥

साखी-गुफामाह गोपहुँचहौं, पूछे को तुम आहु ।
मैं कबीर सेवक अहौ, अजहूँ नहिं पतियाहु ॥

चौपाई

रामानंद कहाव गुरु मेरा । सत्त कबीर मैं सेवक तोरा ॥
गुरु सोई जो शिष्य चितावै । शिष्य सोई गुरुसेवा लावै ॥
कहौ गुरु गुरुज्ञान विचारी । को है पुरुष कौन है नारी ॥

कौन पुरुषको सुमिरो नामा । कहौ कहाँ अविचल निजुधामा ॥
कहौ ध्यान कीजै किहि केरा । तन छूटे कह होय बसेरा ॥
रामानंद कहै सुनु पूता । गुरुमुख ज्ञान रहो संयुक्ता ॥
आपै पुरुष आप है नारी । कहो ज्ञान चितराख संभारी ॥
सुमिरहु दशरथ सुत श्रीरामा । अवधपुरी अविचलनिजधामा ॥
श्याम स्वरूप ध्यानमन धारो । तन छूटे बैकुण्ठ सिधारो ॥
कहै कबीर सुनो गुरुदेवा । यह समुझाय कहो मोहिभेवा ॥
रामचन्द्र त्रेतामें भयऊ । काहुदुखाय काहु सुख दयऊ ॥
लोभमोह जुत वन वन डोला । तत्त्वप्रकृत संगतितिहि बोला ॥
जौन बाटते रघुपति आये । सूत कौशल्याको कहलाये ॥
जब त्रेता तब राम भुवारा । कौन पुरुषको सकलपसारा ॥

साखी-अहो गुरू समुझाइये, कोहै सिरजन हार ।
रामचन्द्र गुरु बंदेउ, कौन नाम आधार ॥

चौपाई

कहत निगम अस करे विचारा । पूर्व अवर्न जन्मसो न्यारा ॥
तात मात बंधु सो नहिं ताही । ना वह आवै ना वह जाही ॥
श्याम श्वेत नहिं कहिये ताही । इन्द्रासन बैकुण्ठ न जाही ॥
तीन लोक सब परलय होई । निजु धाम कहो कहां है सोई ॥
स्वर्ग लोक तुम राखी आशा । फिरि फिरि होय गर्भमें वासा ॥

साखी-स्वर्गनरक न्यारा, सो मोहि देहु चिह्नाय ।
कहवाते जीव आयेऊ, कहोगुरू समुझाय ॥

चौपाई

सुनहु कबीर कहो सो गहहू । करिये योग अमर ह्वै रहहू ॥
आसन साधहु बांधहु मूला । अष्टकमलदल निरखहु फूला ॥

चन्द सूर गहि कीजे मेला । मन पौना शुभ निधर खेला ॥
चढि अकाश अमृत रसपीवो । तब कबीर तुम युग युग जीवो ॥

साखी–स्वर्ग नरकते न्यारा, ज्योतिपुरुष निर्वान ।
तहवाँसे जीव आइया, कहो गुरू सहिदान ॥

चौपाई

कहै कबीर सुनो हो स्वामी । तुम हो सतगुरू अन्तरजामी ॥
योगके किये अमर जो होई । तौ पुनि योगी मरे न कोई ॥
का भो साधे आसन मूला । जौं नहिं मेटे संशय शूला ॥
का भो अष्टकमलके पेखे । जो नहिं आप रूप निजु देखे ॥
का भो चन्द सुरके मेला । जौं नहिं शब्दसुरति गहि खेला ॥
का भो सुष्मुनि जाय समाये । जौं नाहीं अक्षर लखि पाये ॥
क्याअकाश चढि अमृत पीये । जौंनहिं नाम अमी चित दीये ॥
ज्योति स्वरूपी पुरुष बतायहु । ज्योति काल तीनों पुरुषायहु ॥
यहिजिव नाहिं ज्योतिसे आवा । परम ज्योतिसे अंश उपावा ॥
जो जिव ज्योति पुरुषते होई । तो काहे जिव जाय बिगोई ॥
ज्योति निरंजन काल अन्याई । सिद्धि तपी सब धीरधरि खाई ॥

साखी–ब्रह्मा विष्णु महेश्वर, सुर नर मुनि सब झार ।
ज्योति निरंजन सब कहे, खायो बारंबार ॥

चौपाई

जाहि कहत हो पुरुष निर्वाना । वही आहि तो काल देवाना ॥

साखी–योग यज्ञ जपतीरथ, यह सब यमके जाल ।
कहै कबीर सतनामबिन, कबहु न छोडै काल ॥
पांच तीन जहवां नहिं, नहीं प्रकृत प्रवेश ।
रविशशिपानीपौननहिं, तहँको कहो सँदेश ॥

चौपाई

कहै गुरु तुम शिष भये मोरे । यह सब बुद्धिको दीनेहु तेरे ॥
कहै कबीर सब तुम परतापा । हमरे तुमहि माया अरु बापा ॥
तब गुरु हमपर भये दयाला । निजकरदियौ सुमिरिनी माला ॥
कहै गुरु सुन साधु कबीरा । तुम तो सेवक हो मतिधीरा ॥
सर्वानंद विप्र यक आये । तिन पुनि गुरुते गोष्टि कराये ॥
ताहि जीत गुरु शिष्य करावा । तब गुरु हम कह तिलककरावा ॥
सब पर श्रेष्ठ हमें गुरु कीना । हम पुनि सबते रहै अधीना ॥

साखी-गुरुके सब शिष्य मोहिको, बोलैं गुरूसमान ।
हम गुरु साधु अधीन हैं, भाषै निर्भय ज्ञान ॥

शब्द

लख कोई बिरलापद निर्बान । बिन रसना सुर धरै ध्यान ॥
तामें दरसे पुरुष पुरान । कर्म छोडि सब भर्म नसान ॥
दुरमति छोडि कमल धरु ध्यान । तीन लोकमें काल समान ॥
चौथे लोकमें नाम निसान । रामानन्द गुरु करै बखान ॥
दास कबीरको निरमल ज्ञान ।

इति

मेरो नाम कबीरा हो जगत गुरु जाहिरा ।
तीन लोकमें मागा मेरा त्रिकुटी है अस्थान ॥
पानीपौन समेरसमाना इस विधि रच्यौ जहाना ।
गगन मन्दिरमें बासा मेरा मंजनि है अस्थाना ॥
ब्रह्मबीज हमहीसे आया हमरै सकल जहाना ।
अनहद लहर गगन गढ उपजै बाजै सोहं तारा ॥
गुप्त भेद वाहीसे कहिये जो निज होय हमारा ।
भवबंधनसे लेहु छोडाई निरमल करो शरीरा ॥

सुर नर मुनि कोई भेद न पावै पावै संतगंभीरा ॥
वेद कदापि पार नहिं पावै ऐसे मतिके धीरा ।
कहै कबीर सुनो रामानन्द दोनों दीनके पीरा ॥

चौपाई

रामानन्द कबीर कहानी । जक्तमाह बहु विधि बिहरानी ॥
कछु मैं सूक्षम लिख्यौ बनाई । कीरति जासु जक्तमें छाई ॥
सत्त कबीरको चरित अनेका । सो कछु इहां लिखौ नहिं एका ॥
केते परचा गुरुहि देखाई । तब ताके हिय निश्चय आई ॥
मैं घनघोर गुष्टि गुरु पाही । अगम ज्ञान सुनि बोले ताही ॥

रामानंद वचन

दोहा—मैं जाना तुम जोलहा, मोहि पडा बड धोष ।
मूल दिक्षा मोहि देव कबीर, जीवत आवै संतोष ॥
करता तुम हो साधू हो, सत्य कबीर है देव ।
तनमन तुमको अर्पिहों, कल्ह दीक्षा मोहि देव ॥

सत्यकबीर वचन-शब्द

साखी—काल करन्ते आज कर, आज करंते अब ।
औसर बीता जात है; व्यौहार करोगे कब ॥
काल करंते काल है, मोहि भरोसा नाहिं ।
यह तन काचा कुम्भ है, विनशि जाय छनमाहिं ॥
घडी पलकको सुधि नहीं, करो कालको साज ।
काल अचानक मारि है, ज्यों तीतरको बाज ॥

चौपाई

योगी गोरख नाथ प्रतापी । तासुतेज पृथ्वी पर व्यापी ॥
काशी नग्रमें सो पग परही । रामानन्दसे चर्चा करही ॥
चरचामें गोरख जय पावै । कंठी तोरे तिलक छुडावै ॥

सत्य कबीर शिष्य जब भयऊ । यह वृत्तांत तबसो सुनि लयऊ ॥
गोरखनाथके डरके मारे । बैरागी नहिं वेष सँवारे ॥
तब कबीर आज्ञा अनुसारा । वैष्णव सकल स्वरूप सँवारा ॥
सो सुधि गोरखनाथ जो पायो । काशीनग्र शीघ्र चलि आयो ॥
रामानन्दको खबरि पठाई । चर्चा करो मेरे सँग आई ॥
रामानन्दकी पहिली पौरी । सत्य कबीर बैठे तिहि ठौरी ॥
कह कबीर सुन गोरखनाथा । चर्चा करो हमारे साथा ॥
प्रथम करो चर्चा सँग मेरे । पीछे मेरे गुरुको टेरे ॥
बालक रूप कबीर निहारी । तब गोरख ताहि बचन उचारी ॥

सत्यकबीर वचन--शब्द

कबके भये वैरागी कबीरजी कबके भये वैरागी ।
नाथजी हम जबसे भये वैरागी मेरी आदि अन्त सुधिलागी ॥
धुधूकार आदिको मेला नहीं गुरू नहीं चेला ।
जबका तो हम योग उपासा तबका फिरों अकेला ॥
धरती नहीं जदकी टोपी दीना ब्रह्मा नहीं जदका टीका ।
शिवशंकरसो योगी नाहीं जदका झोली शिक्का ॥
द्वापरकी हम करी फावडी त्रेताको हम दंडा ।
सतयुग मेरी फिरी दुहाई कलियुग फिरौ नौखण्डा ॥
गुरुके वचन साधुकी संगत अजर अमर घर पाया ।
कहैं कबीर सुनोहो गोरख जब हम तत्त्व लखाया ॥
जो बूझे सो बावरा क्या उमर हमारी ।
असंख युग परलय गई तबके ब्रह्मचारी ॥
कोटि निरंजन हो गये परलोक सिधारी ।
हम तो सदा महबूब हैं सोहं ब्रह्मचारी ॥
दश कोटि ब्रह्मा भये नौ कोटि कन्हैया ।

सात कोटि शंभू भये मोरी एक पलैया ॥
कोटिन नारद होगये महम्मदसे चारी ।
देवतनकी गिनती नहीं है क्या सृष्टि बिचारी ॥
नहिं बूढा नहिं बालक नहीं भाट भिखारी ।
कहै कबीर सुन गोरख यह उमर हमारी ॥
अविधू अविगतसे चलि आये कोई भेद मरम नहिं पाया ।
ना मेरो जन्म न गर्भबसेरा बालक है देखलाया ॥
काशीनग्र जङ्गल बिचडेरा तहां जोलाहे पाया ।
माता पिता मोरे कछु नाहीं न मेरो गृहदासी ॥
जुलाहाको सुत आनिकहाया जगत करत है हांसी ।
धड नहिं मेरे गगन कछु नाहीं सूझै अगम अपारा ॥
सत्य स्वरूपी नाम साहेबको सोहै नाम हमारा ।
अधरद्वीप नहिं गगन गुफामें तहँ निजु वस्तु हमारा ॥
ज्योतिषरूपी अलख निरञ्जन सो जपै नाम हमारा ।
हाड चाम लोहू नहिं मोरे हौं सतनाम उपासी ॥
तारन तरन अभै पददाता कहै कबीर अविनाशी ।

गोरखवचन

कौन छुरा कौन पानी गुरु मूँडै कौन बानी ॥

सत्यकबीर वचन

शब्द छुरा निरञ्जन पानी गुरु मूँडै निरबानबानी ।

गोरखवचन

कौन दर कौन दरवेश कौन गुरूने मूँडै केश ॥
कौन पुरुको सुमिरौ नांव मांगो भिक्षा भांडो गांव ॥

सत्यकबीर वचन

मन दर पौन दरवेश गुरू गोविंदने मूँडै केश ॥
अलख पुरुषको सुमिरो नांव मांगो भिक्षा तारो गांव ॥

गोरख वचन—चौपाई

कौन तुमारी उतपति कीनी । किसने तुमको माला दीनी ॥
कौन गुरू दीनो उपदेश । उतारो माला करो आदेश ॥

कबीर वचन

आदि पुरुषने उतपति कीनी । सिरजन हारने माला दीनी ॥
गुरु गोविंद दीनो उपदेश । न उतारों माला नाकरों आदेश॥

गोरख वचन

क्या लै उठो क्या लै बैठो रहो कौनकी छाया ।
कौन माह निरञ्जन पेखे कैसे त्यागी माया ॥

कबीर वचन

एकले उठ एकले बैठे रहे एकको छाया ॥
एकै माह निरञ्जन पेखा सहजे त्यागी माया ॥

गोरख वचन

कौन तुमारी डिब्बी बोलिये कौन तुमारा चावल ॥
कौनसो तुममें सिद्ध बोलिये कौनसो तुमरो रावल॥

कबीर वचन

काया हमारी डिब्बी बोलिये कर्म हमारे चावल ॥
एक हमसे सिद्ध बोलिये और सकल है रावल ॥

गोरख वचन

कौन तुमारी गुदरी बोलिये कौन तुमारा धागा ॥
कौन तुमारी टोपी बोलिये काहेते मन लागा ॥

कबीर वचन

काया हमारी गुदरी बोलिये पौन हमारा धागा ॥
गगन हमारी टोपी बोलिये अलख पुरु मन लागा॥

गोरखवचन

कौन तुमारी तिलक बोलिये कौन तुमारा छापा ॥
कौन तुमारी जाति बोलिये कहा तुमारी आसा ॥

कबीरवचन

तत्त्व हमारी तिलक बोलिये राम नाम है छापा ॥
वैष्णव हमारी जाति बोलिये शब्द मंडलमें आसा ॥

गोरखवचन

शब्द कहांसे आया कहो शब्दको बिचार ॥
नहीं तो तिलक माला धरो उतार ॥

कबीरवचन

शब्दे धरती शब्दे अकाश । शब्दे पांच तत्त्वके बास ॥
कहैं कबीर हम शब्द सनेही । शब्द न बिनसै बिनसै देही ॥

गोरखवचन

अंडान मंडान चार खुरो द्वै कान ॥
जान तो जान नातो झोली माला उरे आन ॥

कबीरवचन

अण्डान धरती मंडान आकाश चारों खूट चारोंखूरी चंद्रसूर्यद्वै
कान ना जानो मात्रा तो गुरु रामानंदकी आन ॥
शेली सिंगी और खटपटी । फिर बोलो तोरों कनपटी ॥

गोरखवचन

आसन बांधो बासन बांधो अरु बांधो नौद्वारा ॥
तोहि बांधों तेरे गुरुको बांधों निकसे कौने द्वारा ॥

कबीरवचन

आसन मुक्ता वासन मुक्ता मुक्ता है नौ द्वारा ॥
मैं मुक्ता मेरो गुरुभी मुक्ता निकसै दशमें द्वारा ॥

चौपाई

गोरखनाथ कबीर समाजा । विविध ज्ञान विज्ञान विराजा ॥
चर्चा पर्चा बहुविधि ठानो । विदित जक्तमें लोगन जानो ॥
इहांसो कथा लिखो नहिं कोई । अन्त बाद जिहि औसर होई ॥
गोरख नर्म भये तिहि बारा । विनय सहित निज बचन उचारा ॥

गोरखवचन

नवो नाथ चौरासी सिद्ध, इनको अनहद ज्ञान ।
अविचल घर कबीरको, यह गति विरलाजान ॥
झोरी झण्डा कूबरी, शेली टोपी साथ ।
दाया भई कबीर की, चढ़ाई गोरखनाथ ॥

धर्मदास वचन

दोहा—बाजा बाजा रहितका, परा नगरमें शोर ।
सतगुरु खसम कबीर है, नजर न आवै और ॥

नानकशाह वचन

शब्द—वाह वाह कबीर गुरु पूरा है ।
पूरे गुरुनकी मैं बलि जैहौं जाको सकल जहूरा है ॥
अधर दुलैच परे हैं गुरुनके शिव ब्रह्मा जह शूला है ॥
श्वेत ध्वजा फहरात गुरुनके बाजत अनहद तूरा है ॥
पूर्ण कबीर सकल घट दरशै हरदम हाल हजूरा है ॥
नाम कबीर जपै बडभागी नानक चरणको धूरा है ॥

सत्य कबीरवचन नानकशाहप्रति

शब्द—वाह वाह लडके जीतारहु ।
मंडुयेकी रोटी बथुयेकी भाजी ठंडा पानी पीतारहु ॥
प्रेमकि सुई सुरतिको धागा ज्ञानमूदरी सीतारहु ॥

यहि लडकेकी बड बड अँखियां नितप्रति दरशन करतारहु ॥
कहैं कबीर सुनो भाई लडके रामरसिक रस पीतारहु ॥

मलूकदास वचन

शब्द-जपो रे भाई साहिब नाम कबीर ॥
एक समय गुरुवंशी बजाई कालिंदीके तीर ।
सुरनरमुनि सब चकित भये हैं अरु यमुनाजीको नीर ॥
काशी तजि गुरु मगहर आये दोऊ दीनके पीर ।
कोइ गाडै कोइ अग्निजलावै नेक न धरते धीर ॥
चार दागते सतगुरु न्यारा अजर अमरो शरीर ।
जगन्नाथको मंदिर थापे हटि गये सायर नीर ॥
आसा रोपि समुद्र हटाये ऐसे गुरू गँभीर ।
दास मलूक श्लोक कहत हैं खोजहु खसम कबीर ॥

दादूराम वचन

साखी-अधर चाल कबीरकी, मोसे कही न जाय ।
दादू कूदै मिरग ज्यौं, पर धरनि पर आय ॥
हिन्दूको सतगुरु सही, मुसलमानको पीर ।
दादू दोनों दीनमें, अदली नाम कबीर ॥
हिन्दू अपनी हद चले, मुसलमान हद माह ।
दादू चाल कबीरकी, दोउ दीनमें नाह ॥
दादू बैठे जहाजपर, जो दरियाके तीर ।
जलकी जेती माछरी, रटै कबीर कबीर ॥

नाभाजू वचन

दोहा-वानी अरबो खरबो, ग्रन्था कोटि हजार ।
करता पुरुष कबीर, रहै नाभे विचार ॥

गरीबदास वचन

साखी-गरीबपंजा दस्त, कबीरकासिरपर धारो हंस ।
जम किंकर चपै नहीं, अधर जात है वंश ॥

श्रीमहादेव उवाच

श्लोक-यः सुखसागरो दाता बीजज्ञानं तथैव च ।
आद्यन्तरहितो लोके यः कबीर इहोच्यते ॥
कलांशेन गतो भूम्यां विलासा सत्य संज्ञकः ।
दीनोद्धारेतिदक्षः कबीरसंज्ञः इहोच्यते ॥
कर्ताकोन्यायकारी च व्यक्ताव्यक्तःसनातनः ।
रमते सत्यलोके यः स कबीर इहोच्यते ॥

पारवतीजीने पूछा कि कबीर किसको कहते हैं ? उनके उत्तरमें शिवजीने कबीर साहिबकी स्तुतिमें सौ एक श्लोक कहे हैं उस ग्रन्थको कबीर एकोत्तर कहते हैं जो सामवेद और पाताल खण्डमें हैं उसमेंसे यह तीन श्लोक लिखे हैं ।

इति

अंथ वैष्णव आचार वर्णन-चौपाई

सहित बिचार आचार घनेरे । उज्वल क्रिया तासुकी हेरे ॥
नित दातन मज्जन तन करही । शौच क्रिया भलीभांतिसे धरही ॥
मांस मद्य आदिक हैं जेते । जानि अभक्ष न संग्रह तेते ॥
जप तप ध्यान धुन्धते धारे । ठाकुरकी पूजा विस्तारे ॥
मूरति होय कि मानस ध्याना । उभय भांति हरि सेवा ठाना ॥

अथ मूर्तिपूजा आठ प्रकार वर्णन

दोहा-मनोमयी परतक्ष कही, चित्र बखानो काठ ।
माटी धात ध्यानमय, प्रतिमा पूजा आठ ॥

चौपाई

प्रथमहि पानी विद्या जानो । बिन विद्या किमिहरि पहिचानो॥
द्वितिये पुष्पको अर्थ कहीजै । एक देवकी टेक कहीजै ॥
तृतिये चावल अर्थ सुनाओ । भोग अशुचिपरधान्य न खाओ॥
चौथे चन्दनते इमि जानी । काम क्रोधकी कीजे हानी ॥
कीना डाह द्वेष सब जोई । उरते दूर बहाओ सोई ॥
पंचम धूप अर्थ इमि कहिये । प्रीति देव गरमीते गहिये ॥
छठये दीपको अर्थ बताओ । बुद्धिदीप निज हृदय जगाओ ॥

अथ मुक्तिस्वरूप वर्णन–चौपाई

जीवते ब्रह्म होय जो कोई । मुक्तनाम भाषे श्रुति सोई ॥
चार भांतिकी मुक्ति प्रमाना । सालोको सामीप बखाना ॥
सारूपो सायुज्य कहीजे । ऐसो तिनको अर्थ गहीजै ॥
सालोकहिं प्रभु लोक निवासा । सामीपा हरिके ढिग वासा ॥
सारूपा प्रभु रूप ह्वो भाषा । सायुज्यौ हरिमें मिल दासा ॥
जस वासना दास उर होई । तैसी मुक्ती पावै सोई ॥
जब उपासना पूरण भैऊ । जीवनमुक्त ताहि तब कहेऊ ॥
परम धामको जब सो जावै । हरिपारषद तासु ढिग आवे ॥
जब हरिधामको चालन लागे । थूल देहको तब सो त्यागे ॥
लिंगदेह तब धारण करई । पांचो तत्त्व देह परिहरई ॥
जब भूलोकते आगे चाला । पृथ्वी तत्त्व देह तब डाला ॥
बहुरि देह पानी की धारा । तब जसतत्त्व लंघिहो पारा ॥
बहुरि अग्निदेही गह सोई । पार अग्नि घेरा तब होई ॥
फेर वायुकी देहको धारी । पौन घेर बाहर पग धारी ॥
इमि तन त्यागत गहतनवीना । सकल घेर बाहर पग दीना ॥
चलि ब्रह्मांड पार जब कीता । मायापार भो त्रिगुणातीता ॥

पुनि परमात्म प्रकाश बखाना । तामें जाय करे असनाना ॥
करि असनान लिंगतन छोडा । दिव्य देह अविकारी जोडा ॥
ज्ञानानंद ब्रह्म तन पाई । निज स्वामी के द्वारे जाई ॥
आदरयुत प्रभुके ढिग आवै । हरिगुण विविधि भांतिसे गावै ॥
प्रभु दाया माया ते छूटा । कठिन दुःखते प्रभुपद जूटा ॥
ब्रह्मानंद मगन मन होई । यद्यपि ऐसो समरथ सोई ॥
रचे अमित ब्रह्मांड जो चाहे । पालपोषिके पुनि तिहि ढाहे ॥
तदपि ब्रह्म सुख ऐसो लहई । और दिशा नहिं तो चितबहई ॥
याहूमें व्यौरा बहु तेरा । कथा कछुक लिखिये तिनकेरा ॥
व्यौरा वेद कहे यहि भाये । जो कोई मुक्त स्वरूप समाये ॥
सागरमें जस बुंद समाना । पै वह बुंद आपको जाना ॥
बहुरि कहै श्रुति ऐसो लेखो । ऐसी मुक्ति जीवको देखो ॥
पुष्पमाल जैसे हरि केरो । अथवा जैसे भूषन हेरो ॥
यहिविधि जिव हरि अंगमें जूटा । जिहि औसर मायाते छूटा ॥

इतिमुक्त

अथ परलोकमें पुण्यात्मा और परमात्माको वर्णन

दोहा-कथा कहौ परलोकको, जब जिव त्यागे प्रान ।
मुरछा मृतके गत भये, पुनि तिहि जक्त फुरान ॥

चौपाई

जीवकी जब मूरछा गत होई । इंद्रिन सहित आप तन जोई ॥
पिछली स्मृतिहि दियो बिसराई । जन्म धरंत आपको पाई ॥
बाल युवा वृद्धादिक माना । जाति पांति कुलमें लपटाना ॥
भ्रम करिके जित जगको देखा । जैसे कछु स्वपनेको लेखा ॥
जाग्रत स्वप्न भेद नहिं कोई । स्वप्नहुमें स्वपनांतर होई ॥
भ्रमही करि पितु माता जाना । मिथ्या भास गहे अज्ञाना ॥

मृतक होय जीव जिहि बारा । देह अन्त बाइक तब धारा ॥
बहुरि बासना प्रेरि लै आवै । अधि भौतिक देही दिखलावै ॥
अधि भौतिक देहि जब पाया । दुखसुखको कारन यह आया ॥
हृदय कमल अंगुष्ठ प्रमाना । जीव अकाश जो नाम बखाना ॥
ताहि कमलमें भर्मत रहई । लोक अनन्त दृष्टिमें गहई ॥
तहँ कोटिन ब्रह्मांड निहारी । हृदय कमल निज माह विचारी ॥
तीन प्रकार पुण्य जन राशी । मूरख पुनि धार्ना अभ्याशी ॥
तृतिये सर्व शिरो मुनि ज्ञानी । भिन्न २ गति निर्णय ठानी ॥
धार्ना भ्यासीकी यह बाता । तन तजि इष्ट देव ढिग जाता ॥
अपने इष्ट देव पुर जाई । नाना विधि सुख भोग कराई ॥
नहिं मूरख नहिं ज्ञानी जोई । सुखसे निज तन त्यागे सोई ॥
बहुरि जन्म जगमें सो पाई । पुनि सो आतम लाभ लहाई ॥
अब ज्ञानीकी कथा बखानी । तजत देह सब सुखकी खानी ॥
मुक्ति विदेह तासुको ठीका । जिनके हृदय ज्ञानको ठीका ॥
पापीको अब मरण बतावो । महा दुःख ताके उर छावो ॥
जिनको अज्ञानिनको सङ्गा । उत्तम बुद्धि होय जिहि भंगा ॥
पापी चार कर्म जो करही । श्रुति बिरुद्ध मग माह बिचरही ॥
तजै देह जब ऐसे लोगा । तिनको घेर शूल सौ सोगा ॥
विषय बुद्धि जासु लपटानी । दुसह दुःख पावै सो प्रानी ॥
हो पदार्थसे तिनहि वियोगा । रूंधित कंठ स्मृत सुख भोगा ॥
नैन तासु दोउ तब फटि जाही । कांति विरूप अंग हो ताही ॥
अंग उपांग टूटै तिहि बारी । प्रान निकसिगहि मारग नारी ॥
होय पदार्थ वियोग दुखारी । अस अनुमान करे दुख भारी ॥
अग्नि कुंडमें डारे जैसे । दुःसह पावै दुखजिव जैसे ॥
सर्व द्रव्य तिहि भ्रमयुत भासा । नभ पृथ्वी पृथ्वी आकाशा ॥

परम कष्ट पावै तिहि काला । नभते जनु कोइ महिमें डाला ॥
पाथर में धरि मनहु पिसाना । जिमि तृन भोडरमें भरमाना ॥
अंध कूपमें जैसे गेरा । मानहु कोल्हूमें धरि पेरा ॥
रथते गिरे जीव जिमि नीचे । रस्सी ज्यौं गलडारिके खींचे ॥
दुःख अनँत परकार बखानो । कह लो ताकी निर्णय ठानो ॥
मूर्छित होय गहै जडताई । ताके कर्म जुरहि सब आई ॥
जिमि किशान बीजनको बोवे । समय पाय ताको फल होवे ॥
प्रान अपान कला दोउ टूटे । विषय वियोग महा दुख जूटे ॥
मृत्यु समय जब जिव मुरछाना । गगन लीन हो पौन अरु प्राना ॥
ताहि प्रानमें चेतन ताई । चेतनता बासना गहाई ॥
सहित बासना चेतन प्राना । गगन रूप है गगन समाना ॥
यथा गंधको पौन गहाई । ताहि सहित नभ स्थित कराई ॥
तिमि चेतन बासन सहिते । जाय अकाश माह सो थीते ॥
तिहि अनुसार बहुरि जगफुरता । तब कालते सो तिहि जुरता ॥
दोय प्रकारके जीव दुखानी । पापी अरु पुण्यातम प्रानी ॥
पुनि तिनमें कर तीन विधाना । एक महा पापी करि जाना ॥
द्वितिय मध्य तृतिये लघु होई । तीन प्रकार पुण्य जन सोई ॥
एक महा पुण्यातम लोई । पुनि मध्यम लघुको मतिजोई ॥
प्रथम महा पापी दुख हेरे । धन पखान सो ताको टेरे ॥
जड समान मुरछामें रहई । वर्ष सहस्र न चेतन गहई ॥
ताहू मुरछामें दुख भूरी । बहुरि ताहि चेतनता फूरी ॥
जब ताके तनमें सुधि आवै । आको देह सहित लखि पावै ॥
तब सो जायके नरकमें परता । अमित काल तामें दुख भरता ॥
नाना भांति परम दुख पाई । बहुरि नरकते बाहर आई ॥
देह अनंत धरे पशु केरा । बहुरि सो मानुष को तन हेरा ॥

जब धारे सो मानुष देहा । महा नीच दारिद्री गेहा ॥
सोऊ तन धरि दुःखबहु भोगा । कबहु न सुख पावैसो लोगा ॥
अब मध्यपापी गति वरणो । जाहि समय होतोको मरणो ॥
जडीभूत हो वृक्ष समाना । उर अंतर दुख दौंदइ काना ॥
कछुक काल पीछे सुधि आवे । अर्क माह निज वासा पावे ॥
नर्क भोगि पुनि पशुतन धारी । फिर नरदेह केरि अधिकारी ॥
अब सुन लघु पापीकी वाता । मूर्छित हो पुनि चेतन गाता ॥
नर्क भोगि पुनि पशु कलेवर । ताहि भोगिफिरमानुषतनधर ॥
अब पुण्यातमको कह मर्मा । जिनके जक्त मोह भल कर्मा ॥
महा पुण्यजन जब मरिजावै । स्वर्गसे तब विमान चलि आवै॥
तिहि बिमानपर ताहि चढाई । आदर सहित वाहि ले जाई ॥
जाहि देवताको सो ध्यावे । तासु लोक निज भौन बनावै॥
अपने इष्टदेव ढिग जाई । सबहि भांतितिहिसुखसरसाई॥
भोगि स्वर्ग आवै नर देशा । काहू फलमें करै प्रवेशा ॥
तिहि फलको पुरुष जो खाई । वीर्य द्वार तिहि उदर समाई ॥
जननी जठरते बाहर होई । उत्तम कुल धनवंता सोई ॥
जौं बासना रहित हो येही । तो सौं धरे संत गृह देही ॥
सहित बासना सुख सरसाया । रहित वासना भक्ति अमाया ॥
अब मध्यम धर्मी गति सुनिये । प्रेरित पुण्यस्वर्ग अह गुनिये ॥
अब लघु पुन्यातप गति कहई । मृत्यु पीछे अस चेतन गहई ॥
सगे बंधु मम क्रिया कराही । ताते पितर लोक हम जाही ॥
पितरलोक सुख लहि महि आवै । जैसा कर्म देहै तस पावे ॥
पापी मुये दुःख चहुँ पासा । महा कठिनमारगतिहिभासा ॥
जिहि मारग ताको लेजाई । कंटक लगे चरन में ताही ॥
तपै तेज रबि तापै भारी । ताते ताको तन जर छारी ॥

जो कोई पुण्यातम लोई । छायाको अनुभव तिहि होई ॥
सुन्दर सर वापी विधि नाना । चहुँदिश बने सोहावनथाना ॥
सुखद पंथसे तेहि लेजाही । पापीको सब दुःख दरशाही ॥
धर्मरायके ढिग जब जावै । चित्रगुप्त तब लेख लगावै ॥
चित्रगुप्त क्रम कागज खोले । सबके पुण्य पापको बोले ॥
चित्रगुप्त जस न्याव चुकावै । तैसे जीव दुःख सुख पावै ॥
बडे पूण्यते स्वर्ग बसेरा । जगमें सब सुकर्म जिन केरा ॥
जहां तहां शोभित बन बागा । भांति २ के द्रुम तहँ लागा ॥
इन्द्रके नन्दन बनकी शोभा । जाहि देखि मुनिवरमनलोभा ॥
देव अंगना केर छबि भारी । महा मोहनी रूप सँवारी ॥
स्वर्ग गुन सुख कथे बहूता । लहे जीव निज पुण्य प्रसूता ॥

दोहा-जैसे स्वर्गमें सुख घने, तिमि दुःखनर्कअनंत ।
होय जहां यमयातना, बहुविधि वेद वदंत ॥

इति

अथ प्रलयवर्णन-चौपाई

तैंतालिस लाख बीस हजारा । चहुँ युग आयु यकठै धारा ॥
ताको सहस गुना पुनि करिये । एक द्योस ब्रह्माको धरिये ॥
जैसी दिन तैसी है राती । जागे ब्रह्मा रैन सिराती ॥
दिनमें करैं जगतको काजा । रैनमें निद्राको सुख साजा ॥
रैनमें सबही जगत नशाना । चन्द्र सूर्य लय्यादिक नाना ॥
केते ऋषि मुनि सहितविधाता । जीये और सकल विनसाता ॥
बहुरि वेद ऐसो अनुमाना । ब्रह्मा सहित सकल विनशाना ॥
दूजा ब्रह्मा पुनि तन धारी । कारय सकल करे संसारी ॥
जक्तको सूतक बहु नहिं टूटै । एक मेरे दूजा पुनि जूटै ॥
न्यायशास्त्रअरुसांख्य बखाना । सकलकृतमतिहिकालसिराना ॥

पुनि वेदान्त सो मता गहीते । कृतम जाल कबहूँ नहि बीते ॥
एक मरे दूजा पुनि होई । कारय जक्त सनातन सोई ॥
दोय प्रकारकि परलय होई । खण्ड प्रलय महा पर्लय सोई ॥
खण्डप्रलय पुनि द्वैबिधि कीनो । ऐसो ताको लेखा चीन्हो ॥
नाम चतुरमुख कल्प कहीजे । चौदह मन्वंतर तामें कीजे ॥
एक मन्वंतर जब बित जावे । तब जगमें जल प्रलय आवे ॥
पृथ्वी जड चेतन संहारा । सकल नसाहि ताहि जलधारा ॥
एक मन्वन्तरकी थित भाखा । तीस करोर पच्चासी लाखा ॥
मध्यमें दोय मन्वंतर केरे । संधी नाम तासुको टेरे ॥
सत्रह लक्ष सहस्र अठाइस । तासन्धीको लेख लगाइस ॥
इतने काल जक्त नहिं रहई । बरते शून्य वेद अस कहई ॥
बाल भोग लघु परलय जाना । महा प्रलय निश भोजन माना ॥
जब जो महाप्रलय तिहि आवै । मरा जो निश्चय देह सो पावै ॥
होय सकल जब धर्मकी हानी । पाप पयोधि बुडे नर प्रानी ॥
कतहु न दीख अचार बिचारा । मन मत पन्थ जक्त जिव धारा ॥

छन्दतोटक

सुत मानत मातु न तात जही । गुरु सेवन देवन दान कही ॥
कलि कौतुक घोर कठोर महा । सुखदुःखितको हरिनाम कहा ॥
कपटी लपटी नर नारि गना । नहिं मानत सन्त महन्त जना ॥
तपसी लपसी जग खात फिरे । मुंडिका धनिका बनिकार भिरे ॥
द्विज चिन्ह उनेउ न वेद क्रिया । भगवाँ यक भेष अलेख प्रिया ॥
बहु यंत्रन मन्त्रन दर्व हरी । बिन राम रमे किमि काम सरी ॥
बिरती बिन सिद्ध जती फिरते । नहि ज्ञान है चित्त विना थिरते ॥
कलिकाल कराल दुकाल मरी । नर पीडक सो दुख द्वंद भरी ॥
तजि रूपवती युवती भरता । नहिं गारि लहो परनारि रता ॥

तिय सुन्दर पीय विहायगता । अरधंगन सङ्ग अनंग मता ॥
कर पाप अनंत भनंत कहा । परिताप संतापन लोग दहा ॥
श्रुतिपन्थ बिहायकुपन्थ चले । तजि अम्मृतछाकसो खाकडले ॥
गृह सम्पति दंपति हीन भये । दरवेश अलेखको भेष भये ॥
नहिं साध विषय क्रमसाधतये । विन सार लखे यमद्वार गये ॥
मदनातुर युत्य फिरे युवती । किमि भोग नरा नरही कुवती ॥
तिय ठाट भये जब घाट नरा । न अधार कहू विभिचार भरा ॥
उठिगे श्रुति धर्मनके बकता । मनमानता जो जेहि सो छकता ॥
बरणाश्रम धर्मके मर्म नहीं । सब शंकर भे न सुकर्म कहीं ॥
समता बिगता ममता गरको । जिव रोग वो शोकनमें ढरको ॥
अघ औगुन सोगुन जीव लदा । मन वांछित बोध न वेद वदा ॥

चौपाई

यहि विधि जक्त धर्म बिनसावै । तब हयग्रीव प्रगट हो आवै ॥
शिर तुरंग देही नर जाको । धावै सकल घरा परि पाको ॥
पौन प्रसंग अङ्ग तिहि पाई । जीवकि बुद्धि शुद्ध है जाई ॥
लघु प्रलय जब धर्मकि हानी । महाप्रलय अब कहो बखानी ॥
चीन्ह अनेक भयावन होई । औबा मरी भरी दुखजोई ॥
पश्चिम दिशिते रवि उगि आवै । द्वितीया दक्षिणमें प्रकटावै ॥
उतर पूरब सूरय देखे । दशहु दिशा दश रवि यह लेखे ॥
एक सूर्य प्रथमै ते रहऊ । बडवा अग्निते सोई कहेऊ ॥
बडवानल अरु ग्यारह सूरा । द्वादश सूर्य तेजते पूरा ॥
शिव पुनि तीसर नैन उघारा । शेषके मुखते अग्नि प्रचारा ॥
महा तेज पृथ्वीमें भरेऊ । थावर जङ्गम सब कछु जरेऊ ॥
पौन प्रचंड अण्ड भरि पेखे । परवत उडहि तूलके लेखे ॥
गिरि सुमेरु आदिक गिर नाना । सूखे पत्र सो गगन उडाना ॥

सात सिंधु तिहि कालछुभाही। जलकी वृद्धि एक ह्वै जाही ॥
पुष्कर मेघ कीन पुनि कोपा। जलसे सकल भूमिको तोपा ॥
मुसल धार पानी बरसाई। मोटा धार पुनि वृक्ष कि नाई ॥
बहुरि नदीकी धारा जैसे। नभसे पानी वरषै ऐसे ॥
ये तो जल दिशा उर्ध चढंता। पहूँचे ब्रह्मलोक परजंता ॥
इंद्र कुबेर आदिक दिगपाला। भोगिके ब्रह्म लोकको चाला ॥
यहि बिधि सकलजलामयहोई। जीव जंतु कहुँ रहै न कोई ॥
पृथ्वी गलि जलमें मिलि जाई। तिहि औसर भैरों प्रकटाई ॥
पृथ्वीते आकाश लों देही। महा भयानक रूद्र है येही ॥
तिहु दृग मानहु सूर्य है तीनी। ऐसो तेज मयी कहि दीनी ॥
तिही भैरोंकी श्वासा चाले। पानीके ऊपर सो डाले ॥
पौन प्रचंड नासिका बाटा। ताते होय बारिको घाटा ॥
ताकी श्वासा जल जब सोखे। रहे रूद्र पुनि आपै चोखे ॥
दशहु दिशा शून्य ह्वै जाई। रविशशि अग्न्यादिक बिनशाई॥
गुन अरु तत्त्व न कबहुं प्रकाशा। सर्व शून्य वर्तै चहुँ पासा ॥
भैरों तनते निजु तन धारी। प्रकटे महा भैरवी नारी ॥
महा भयावन मूरत जाकी। सप्त सिन्धुकर कंगन ताकी ॥
मानुष छाया देखो जैसे। भैरों तनते प्रकटै जैसे ॥
इंद्र कुबेर वरुण यम काला। तिनके मुंडको पहिरे माला ॥
नृत्त करे सो तहँ तिहि बारा। अट्ट अट्ट करि शब्द उचारा ॥
भैरों और भैरवी दोई। नृत्त करे तब शून्यमें सोई ॥
बहुरि लय भैरवी ह्वै जाई। भैरोंके तन माह समाई ॥
अब कछु शेष रहा नहिं खेला। तब भैरों रहि गयो अकेला ॥

दोहा-धरतीसे आकाशलौं, भैरोंकी जो देह।
सर्व शून्य करि दशदिशा घटन लगी तब येह ॥

प्रथमें पर्वत सम भई, बहुरि वृक्षके भाय ।
पुनि अंगुष्ठ पुनि रैनसम, पुनि सो गई लोपाय ॥
सर्व शून्य दशहू दिशा, पिसा सकल संसार ।
दृश्य कतहुँ कछु ना लहा, रहा अलख करतार ॥
ब्रह्माते ले जीव सब, जहँ लगि कीट पतंग ।
मुक्ति विदेह महा प्रलय, रचना पावै वेद प्रसंग ॥
सब जिव मुक्ति विदेह लह, रचना जब पुनि होय ।
आतम सत्ता ब्रह्मने जक्त, फुरै पुनि सोय ॥

इति श्रीवेदधर्म वर्णन

अथ न्यायधर्म वर्णन

दोहा-कर्त्ता पुरुष है देव जहँ, गुरु संन्यासी जान ।
न्याय शास्त्र सब मम कथा, धर्म ग्रंथ परमान ॥

अथ उत्पत्ति कथा वर्णन

सोरठा-न्याय शास्त्र परमान, नित्यानित्यको बाद बहु ।
जग सबही प्रकटान, सूक्ष्म तत्त्वसे जानिये ॥
प्रलय बहुरि जब होय, सूक्षम परमाणू रहै ।
ताते थूल गहोय, दूनो तिगुनो चौगुण ॥
परमेश्वर करतार, आदि अंत नहिं तासुको ।
गहे आप औतार, देते सोई चहुँ वेदको ॥
नर्क स्वर्ग आनित, जीवको सो शुभ ज्ञान ।
सो प्रभु सबको हित कहे सो तासुगुन आठ बिधि ॥

चौपाई

प्रथमहि ज्ञान प्रयत्न है दूजे । तीजे इच्छा संख्या चौथे ॥
पंचम पुनि परमान गनीजे । परथक्त्वा षष्ठमें भनीजे ॥
पुनि संयोग विभाग कहाये । ये ईश्वर गुन आठ गनाये ॥

जेती वस्तु जगतमें उपजाया । सोलह पदारथते सबकी काया ॥
तिनको भेद जो भलिविधिजाना । सोई पावै पद निर्वाना ॥
तीनों गुण ईश्वरके अंशा । तिनको ताही रूप प्रशंसा ॥

इति

अथ आदि सन्यासी दत्तात्रेयजीकी कथा–चौपाई

अत्री मुनि अनसुया नारी । नारि पुरुष कीनो तप भारी ॥
तीन देव तब हरिषित भेऊ । ब्रह्मा विष्णु शम्भु जिहि कहेऊ ॥
ताके भौन गौन तिहि कीने । आदर मान तिन्हैं ऋषि दीने ॥
अनसुइया पुनि कीन रसोई । तीनों देव जिवावत होई ॥
भे प्रसन्न तब तीनों देवा । मांगो बर पूरण तव सेवा ॥
तब अनसुइया वचन उचारे । तुम समान हो पुत्र हमारे ॥
दीन सोई बर मांग्यो जोई । पुनि मारग निज लीनो ओई ॥
अनुसुइया जैसो वर पाया । तीन पुत्र भे ताके जाया ॥
तिहुते तीन अंश परकाशा । दत्त चन्द्रमा अरु दुर्वासा ॥
दत्त विष्णु औतार कहाये । ब्रह्मा अंशते चन्द्र उपाये ॥
शिव औतार कहे दुर्वासा । धर्म चला जग तिनकी आशा ॥
दत्तसे दीगांबर संन्यासी । अवधूता मारग जो भाषी ॥
ब्रह्मा अंशते चन्द्र उपाये । सो निज भौन अकाश बनाये ॥
दुरवासा ते दंडी भेऊ । दंडी आदि ताहिको कहेऊ ॥
दत्तात्रेय के चौबिस चेले । धर्म कर्म संन्यास गहेले ॥

इति

अथ द्वितीय सन्यासी शंकराचार्यकी कथा–चौपाई

वरने भव्य व्यास बर बानी । जब कलि होय वेद मतहानी ॥
जैन बुद्ध मत अधिक पसारा । वेद धर्म निंदहि निरधारा ॥
जैन बुद्ध विधि गहै नर लोई । वेद धर्म मानै नहिं कोई ॥

तिहि औसर शिव परम सनेही । वेद धर्म थापै करि देही ॥
जैसो आगम व्यास बखाने । जैन बुद्ध मत महि अधिकाने ॥
वेद धर्म तब भयो मलीना । बिरला कोई आदर दीना ॥
बिक्रमादितके समयमें कहेऊ । शंकर शंकराचार्य भैऊ ॥
दक्षिण देश द्विजकुल औतारा । वेद धर्मको पालन हारा ॥
चहुँदिश जाय विजय दिग कीना । कथि निजज्ञान नीति जगलीना ॥
वेद धर्म मरयाद धराया । बादी सन्मुख तासु पराया ॥
स्मृती धर्म कीन परचारा । धर्म स्मार्त नामसो धारा ॥
जैन बोधको जीत्यौ सोई । राजा शंकरकी वश होई ॥
तिहि औसर भूपाल छुभाया । केते जैनी सरित डुबाया ॥
मंडन मिश्र ब्रह्मा औतारा । धर्म मिर्मांसा जग विस्तारा ॥
शंकर जब तापर जय पाई । ताकी नारि ताहि समुहाई ॥
मंडन मिश्र गये जब हारी । कामशास्त्र कथ ताकी नारी ॥
शंकराचार्य बाल ब्रह्मचारी । काम शास्त्र विद्या नहिं धारी ॥
तिहि औसर अस कारण भयऊ । नृप अमरूक देह तजि गैऊ ॥
योगके बलते शंकराचारय । नृपतन प्रवेश कियो निजुकारय ॥
काम कला सीखे षट् मासा । नृपतनमें कर भोग विलासा ॥
काम शास्त्रको ग्रन्थ बनाई । सो अमरूकशतक कहलाई ॥
नृप तन तजि मंडन पहँ आये । तासु नारि पर तब जय पाये ॥
मंडनमिश्र भे शंकर चेला । ताको धर्म गह्यो तिहि बेला ॥

इति

अथ पूर्व आचार्यनके नाम-चौपाई

जहां तो आदि संप्रदा चाली । पीढी पीढी कथौ निराली ॥
प्रथम विष्णु दूजे शिव होई । पुनि तृतीय वसिष्ठ मुनि जोई ॥

पुनि संगत वशिष्ठ सुत भैऊ । ताके बहुरि पराशर कहेऊ ॥
छठयें व्यासदेव गुरस्वानी । सतयें मुनि सुखदेव बखानी ॥
अष्टम गोडाचार्य कहोई । पुनि गोविंद पुनि शंकर होई ॥

इति

अथ शंकराचार्यजीके शिष्यके नाम

दोहा-प्रथमस्वरूपाचार्य कहा, पृथ्वीधरा चारय टेर ।
पद्माचारय तीसरे, तोटकाचारय फेर ॥

इति

अथ दशनाम संन्यासीको वर्णन

दोहा-स्वरूपचार्यके शिष्य है, तीरथ आश्रम जान ।
पद्माचारयके दोय पुनि, वन आरण्य बखान ॥
तोटकाचारयके पर्वतो, सागर गिरि शिष्यतीन ।
पृथुराचार्यके सरस्वती, भारति पुरी प्रवीन ॥

इति

अथ शंकरी अथवास्मार्त्त संप्रदाय वर्णन-चौपाई

अब शंकरी संप्रदा भाषों । चार भेद पुनि तामें राखों ॥
पूरब पश्चिम उत्तर दक्षिण । चारों दिशा चार मठकोगिन ॥

अथ पूर्वदिशा वार्ता

गोबर्धन मठ भोगंबार संप्रदा वन अरण्य पद पुरुषोत्तम क्षेत्र जगन्नाथ देवता पद्माचार्य चैतन्य ब्रह्मचारी तीर्थ महोदधि विमला देवी ऐतरेय ब्राह्मण ऋगवेद कठ केन उपनिषद अकार मात्रा प्रज्ञान ब्रह्म महावाक्य ॥

इति

अथ पश्चिमदिशा वार्त्ता

पश्चिम दिशा शारदा मठ कीटंबार संप्रदातीर्थ द्वारिका क्षेत्र सिद्धेश्वर देवता भद्रकाली देवी स्वरूपार्य नन्दा ब्रह्मचारी तीर्थ

गोमती सामवेद उपनिषद ब्राह्मणकेनतत्त्वमसिमहावाक्यओंकार मात्रा तीर्थ आश्रम द्वै पद ॥

इति

अथ उत्तर दिशा वार्ता

उतर दिशा जोशीमठ आनंदबार संप्रदा पद तीन गिरि पर्वत सागर क्षेत्र बद्रिकाश्रम नारायणदेवतापुण्यागिरीदेवीत्रोटकाचार्ज नंदा ब्रह्मचारी तीर्थ अलकनंदा ब्राह्मण ब्रह्माअथर्वणवेद मांडूक्य उपनिषद आ मात्रा अहं आत्मा ब्रह्मा महावाक्य ॥

इति

अथ दक्षिणदिशा वार्ता

दक्षिण दिशा शृंगेरी मठ भूरीबार संप्रदा सरस्वती भारतीपुरी पदानि क्षेत्र रामेश्वर आदि वाराह देवता कामाक्षीदेवीशृंगीऋषि पृथ्वीधराचार्य तुंगभद्रा तीर्थ यजुर्वेद बृहदारण्यउपनिषदब्राह्मण इच्छावश है अहं ब्रह्मास्मि महावाक्य अर्धमात्रा ॥

इति

अथ संन्यासआचार वर्णन

दोहा—सकल कर्मको छोडिके, जो लेवै संन्यास ।
स्वर्ग आदिक सब सुख घने, रहै न कोई आस ॥

चौपाई

सुत बित नारि ईषणा तीनी । तजि संन्यास धर्मनिजलीनी ॥
यज्ञहु वेदपाठ नहिं भाषा । संग्रह सदा उपनिषद राखा ॥
करहि कमंडल हाथमें दंडा । फिरै स्वछंद पृथ्वी नौ खंडा ॥
कछु सुख साजन यकठे धरहीं । काहूसे विवाद नहिं करहीं ॥

सदा शौच असनान जो कीना । संध्या बदले आत्म लैलीना ॥
जब कबहूँ चित चंचल होई । पढै उपनिषदको तब सोई ॥
औषद सम भोजनको भोगा । चाहै नहिं कछु सुख संयोगा ॥
शत्रु मित्र जगमें नहिं कोई । सदा सैन पृथ्वीपर सोई ॥
धरतीपर धरि भोजन करही । चार मास वर्षा न बिचरही ॥
फिरै अकेले संग न कोई । भिक्षा भोजन गहै न ओई ॥
सोलह ग्रास अहार प्रमाना । लेय हाथपर भिक्षा दाना ॥
जाके घर भिक्षाको जाही । मुखसे तहँ कछु माँगै नाहीं ॥
जेती बारमें गऊ दुहाई । गृही द्वार तबलों ठहराई ॥
जहँ माँगन को कारण पावै । तहाँ प्रणवको शब्द उठावै ॥
तीन बार कर शब्द उठाना । जाते गृही सुनै निज काना ॥
तीन भौन कै पांच कि साता । येते घरलों भीखको जाता ॥
जौ भिक्षा संयोग न लहई । तौ संन्यासी भूखा रहई ॥
भिक्षा ले पुनि बनहि सिधारे । मता श्रेष्ठ संन्यास उचारे ॥
पहिले वेदपाठ करि लीजै । तब पीछे संन्यास कहीजै ॥
वेदकि विधिते बोध न जबलों । धर्म मर्म जानै कह तबलों ॥
ऐसी विधिते भोजन करही । मोट देहि जिहि नजर न परही ॥
सदा काल आतम लौलीना । सकल भर्म भय तजि तिनदीना ॥
प्रथमे सब सुख भोग भरीजै । सब इंद्रिनको तृप्त करीजै ॥
तब पीछै लीजै संन्यासा । रहै न काहु वस्तुकि आसा ॥
शीतकालको गुदरी एका । राखे सो निज सहित विवेका ॥
यह मध्यम संन्यास प्रमाना । अब उत्तमको करों बखाना ॥
नग्न दिगम्बर बाना होई । शीत उष्ण दुखसुखसह सोई ॥
सहदुख सुखदुखसुखनहिंमाना । ऐसे निज मनमें अनुमाना ॥
ज्ञान अग्निमें तन हम दाहा । अब याकी कछु रही न चाहा ॥

यह विचार निज मनमें धारे । मृतक संन्यासीको नहिं जारे ॥
जीतेहि निज तन जिन दाही । मुये दग्ध पुनि उचित न वाही ॥

दोहा-जो मध्यम संन्यासते, उत्तम विधि गहि लेय ।
परमहंस ताको कहै, नग्न दिगंबर तेय ॥
काहूको परनामसो, करै न शीश झुकाय ।
सेवासे नहिं कछु सुखी, निरादरते नहिं दुख पाय ॥
मधूमास भोजन दोउ, तजि दीजै निरधार ।
धातु वस्तु मुद्रादि सब, नहिं कर परसनहार ॥

चौपाई

भोजन पाकते राखै काजू । तजे इतर सुख स्वाद समाजू ॥
पक भोजन तजि और न लेही । गृही जो पाक भोग नहिं देही ॥
ताहि गृहीको पापी जाना । देत नहीं जो भोजन दाना ॥
संन्यासीकी तप बड याही । कछु काहूसे मांग जो नाही ॥
दण्डी संन्यासी जो होई । दंड हाथमें धारे सोई ॥
दँड बाँसकी लकड़ी भाषा । सात गाठि पुनि तामें राखा ॥
सरस्वति आश्रम तीरथ तीनी । दंड ग्रहण अधिकारी कीनी ॥
ब्राह्मण बिना न दंडी होई । द्विज गृहते अहार गह सोई ॥
चारों मठके जो ब्रह्मचारी । सोऊ विप्र कुलते तनुधारी ॥
उत्तम मध्य कनिष्ठ संन्यासा । भिन्न २ करि वेद प्रकाशा ॥
शिव अरु विष्णुभाव नहि दूजे । पंचम देव संन्यासी पूजे ॥
शिव नरसिंहगणगतिरविदेवी । इन पांचोंकी सूरत देवी ॥
सिंहासन धरि पूजा करही । इष्ट आपनो बीचमें धरही ॥
अधिक नेम जिहि देवसे लावै । बीच सिंहासन तिहि बैठावै ॥

चौपाई

शिव शक्तीको धर्म जो धरही । चन्द्राकारतिलकलिलारमेकरही ॥
योगा संन्यासी ब्रह्मचारी । भगवां भेष तिलक सो धारी ॥

अथ मीमांसाधर्म वर्णन

दोहा—देव अलख करतार जहँ, गुरु दरवेष कहाय।
शास्त्र मीमांसा धर्म कह, कर्मफल जिव पाय॥

चौपाई

व्यास शिष्य जैमिनि ऋषिराया। धर्म मिमांसा सो ठहराया॥
ताके शिष्य न करी सहाई। धर्म मिमांसा जग फैलाई॥
शिष्यनको अस नाम उचारी। भट्ट कुमार अरु मिश्र मुरारी॥
बहुरि प्रभाकर कुरकहि टेरे। भे प्रसिद्ध जगमाह बडेरे॥
जैमिनि शिष्य बुद्धिगुणधारा। भली भांति निज धर्म प्रचारा॥
धर्म मिमांसा जो कोई गहई। ताके नाम मिमांसक अहई॥
एसो धर्म सो कीन उचारा। ईश्वर नहिं जग सिरजनहारा॥
जो कुछ दुख सुख जगमें होई। जीव कर्मको कारण सोई॥
जैसो कर्म करे जो कोई। तैसो उदय ताहि को होई॥
ईश्वर नहिं कछु करे करावै। नर स्वछंद जस कर तस पावै॥
सृष्टि अनादिनिध करि जानो। सदा स्वभाविक ऐसेहि मानो॥
परमाणुनते जग उतपाता। ज्ञान कर्म दोउ मुक्तिको दाता॥
वेदान्ती जस करे बखाना। तीन वेद ईश्वर गुण माना॥
मीमांसक नहिं माने सोई। तीन वेद मानुष तन होई॥
कर्म सुकर्म करे जो कोई नर। होय सो ब्रह्मा विष्णु महेश्वर॥
कर्मैते जिव सब पद पावै। कर्महि उँच नीच गति जावै॥
जेतो देखो कर्म पसारा। कर्मको खेल खिला जग सारा॥
ब्रह्मन कर्म करहि बिधि नाना। देव अराधन मुख व्रत दाना॥
होय यज्ञ तिनके बहुतेरे। साधन करि करि देवन टेरे॥

इति मीमांसा धर्म

अथ शिवधर्म वर्णन

दोहा—देव रुद्र योगी गुरु, योग मुक्ति चित धार ।
पातञ्जल यह शास्त्र है, कथै धर्म व्यौहार ॥

इति

अथ शेष अवतार कथा वर्णन—चौपाई

करे एक ऋषि संध्या तरपन । ताके अंजुल प्रकटै धरि तन ॥
अंजुलते कलि बाहर परेऊ । नाम तासु पातांजल धरेऊ ॥
पातांजल है शेष औतारा । सो जग मल शोधन हितकारा ॥
शास्त्र चिकित्सा कीन प्रकाशा । देह रोगमल ताते नाशा ॥
शब्द अशुद्ध उचारा मल हंता । पाणिनिकरनिकाभाष्य करंता ॥
तिमि विक्षिप्त अंतह मल शोधू । योग सूत्र करि जीव प्रबोधू ॥
प्रथमहि चित्तकि वृत्ति निरोधन । कथे समाधि अरु ताको साधन ॥
वैराग आदिक विधि बिधाना । कथे तहां साधन विधि नाना ॥
तैसे चित्त विक्षिप्त जो साधी । नाहित कीनो योग समाधी ॥
यम नियमों आसन प्रतिहारा । प्राणायाम धारण धारा ॥
ध्यान समाधि आठ यह भाषी । द्वितिये पदमें सबसों राषी ॥
तृतियें पदमें योग विभूती । वरनो सकल जो सिद्ध प्रसूती ॥
बहुरि चतुर्थहि चरणके माही । मोक्ष योग फल बनैं ताही ॥

इति

अथ नव नाथोंके नाम

दोहा—गोरखनाथ मछंदरो, सुरतिनाथ मङ्गल नाथ ।
चर पट चम्बा प्राणनाथ, घघ्घू गोपीनाथ ॥

इति

अथ गोरखनाथजीकी कथा चौपाई

नवो नाथ सिद्धौ चौरासी । गोरख श्रेष्ठ सर्व गुण रासी ॥

मुद्रा सकल ताहिने कीनो । ऐसो योग माहि चित दीनो ॥

दोहा-मुद्रा सन्मुख खेचरि भूचरि चाचरि जान ।
शामभवी उन्मीलनी, पुनि अगोचरी मान ॥
आत्म भावनी बहुरि कह; पूर्ण बोधिनगाय ।
सर्व साक्षिनी आदि दै, मुद्राते जित लाय ॥

चौपाई

ऐसो योगी भया समाधी । आठों भांति योग भलसाधी ॥
राज योग हठ योग बखानो । त्राहठ अरू कुण्डली प्रमानो ॥
योग लंबिका तारक साधा । योग मीमांसकसांख्य समाधा ॥
आठों योग भली विधि कीना । ऐसो योगी परम प्रवीना ॥
वज्र कीन पुनि अपनी अङ्गा । करि चौरासी कल्प सुढङ्गा ॥
ऐसी वज्र शरीर बनाई । कबहूँ मरे न जरै न जाई ॥
सारी मांस देह गलि गिरेऊ । हाड गूद जमि एकै भयऊ ॥
हाड गूद जब एकमें पागा । हीरा सम तनु चमकन लागा ॥
योगको रस भल गोरख लीना । सत्य कबीर प्रशंसा कीना ॥
केते गोरखनाथ के चेले । सिद्ध भये गहि ज्ञान दुहेले ॥
गोरख यती जक्त गुन गाये । योग युक्ति जगमें फैलाये ॥
शिवजी आदि अचारय येहा । योग समाधि आदि गुनगेहा ॥
पुनि नौनाथ सिद्ध चौरासी । योग धर्म जग माह प्रकासी ॥
शिव गोरख सम और न योगी । ब्रह्मानन्द योग रस भोगी ॥

अथ चौरासी सिद्धनके नाम

दोहा-भङ्गर सङ्गर संघरो, जङ्गर ऊरम होय ।
दूरम कनी फाहनीफा, लहुरूपा सङ्ग रोय ॥
लङ्गर हनी रतन कह, पूरन बिवालक बर्न ।
जलका खिधड सुरतिसिंध, निरतिसिधकेवलकर्न ॥

समरथ असरन गौन गुल, चतुर बैन राय ऐन ।
केवल करन औघड दरवत, ईश्वरभरथरी भूतबैन ॥
कनका शंसू अक्षर दैन, पलका निधि शिवराम ।
पिपल्का गिरधर सालस, कसक गैलस नाम ॥
मगनधार मुक्तीसरो, चलन नाचत सूर ऐन ।
गिरवर जोति लगन कहो, जोति मनसिध सैंन ॥
विमल जोति शीतल जलो, अघडधान्य पतिप्रान ।
तोल संयोग अकाल निर, बहुरि भोलसर जान ॥
राजकुमार बखानिये, विष्णुपति कृष्णकुमार ।
शंकर योग ब्रह्म योग है, मीरहुसेन बिचार ॥
मीर जअलीक धारिजो, पुनि कालिंदर नैन ।
फिर नालिन्दर नैन है, सरस्वती गुरुधन सैन ॥
गुफाबासी कल नासी, कलके संगी होय ।
यक रंगी केवल क्रमी, पुनि क्रम नासी जोय ॥
कलक विनाशी मूल मंत्री, योग तन्त्री परमान ।
जंग गहिर दीपक रंगी, आपो रूपी जान ॥
फिर अकलेस प्रतापी, बीरम योगी नाम ।
खल समोगल भोगी कहो, इन्द्रयोगी गुण ग्राम ॥
पुनि केदार योगी गनो, कीन धर्मकी वृद्ध ।
मुनि विचित्र रहमी योगी, ये चौरासी सिद्ध ॥

अथ षट् यतियोंके नाम

दोहा--गोरख नाथो दत्तजी, पुनि लक्ष्मण हनुमन्त ।
भैरो भीषम जानिये, ये षट्ट यती वदन्त ॥

इति

अथ बारह पंथ वर्णन

दोहा—आइ कुनकाई प्रथम, तुसलाई कपिलान ।
तृतीये सतनाथ पंथ है, चौथ धर्म नाथ जान ।
वैराग्य नाथके भरथरी, षष्ठम गङ्गा नाथ ।
रामचन्द्र सप्तम कहै, अष्टम लक्ष्मण नाथ ।
फिर नटेश्वरी नवम है, पिंगल दशम कहाय ।
पुनि धजपंथ इग्यारहे, बारहे कानी फाय ।

इति

अथ अष्टांगयोगवर्णन

दोहा—जमनियमोआसनकहो, प्राणायाम अगाध ।
प्रत्याहारो ध्यान कह, पुनि धारण समाध ॥

अथ यमकी दश शाखा वर्णन

दोहा—युक्ति सहित सब कर्मकर, ताकों यमबतलाय ।
जाते साधन सुगमहो, सकल कलुषता जाय ॥

चौपाई

प्रथम अहिंसा जीव बताई । नर पशु आदि एक समताई ॥
मनसा बाचा कर्म या तीनों । काहूको कछु दुःख नहिं दीनों ॥
द्वितिये बोलै साची बानी । मिथ्यावाक्यते धर्मकी हानी ॥
तृतिये पर धनको मति हरना । चौथे परतिय संग न करना ॥
पञ्चम दाया हृदय महाई । दुखी दरिद्री करो सहाई ॥
छठये अर्चा ताहि बखानी । बुधिते धर्म कीजिये प्रानी ॥
अहंकार मद मान न धरिये । औरहि कबहु तुच्छ मति करिये ॥
सप्तम क्षमा ताहि को जाना । लाभालाभ न सुखदुख माना ॥
अष्टम धौत धर्म भल साजी । जो कछु लाभ ताहिमें राजी ॥
नवमें अल्प अहार करीजे । दशमें शोच भली विधि कीजे ॥

इति

अथ नियमकी दशा शाखा वर्णन–चौपाई

प्रथमैं तप द्वितिये सन्तोख्या । तृतिये को कह नाम असंख्या ॥
श्रुति ईश्वर हिय निश्चय जाना । चौथे धनते दीजै दाना ॥
पंचम करता पुरुषको पूजा । ताहि छोड़ि न्यावो मतिदूजा ॥
पुनि सिद्धांत श्रवण है छठये । विद्वत जनकी संगत गठये ॥
श्रुति पुरान विद्या आध्ययना । सब शुभकर्मनमें चित देना ॥
सप्तम औ इंद्री धिक्कारे । जब कछु अनुचित कर्म निहारे ॥
अष्टम सत्य जाहि को कहते । भले कर्मकी इच्छा कहते ॥
नवमें जब हरि चर्चा कहिये । इंद्रिन सहित चित्तको धरिये ॥
दशमें होय अर्थ अस कहिये । तन मन धन इंद्री जो गहिये ॥
प्रभुकी हेतु सकल सुख त्यागे । ज्ञान कृशानु विषय वन दागे ॥

इति

अथ चौदह आसन वर्णन–चौपाई

पद्मो बीरभद्र सूं संगकरी । पुनि दन्दास वृश्चिक सूँबासरी ॥
बकरी मोर सिंह जसको अस । समान अंतरशुद्धपुनिबैठकजस ॥

अथत्रिविधि प्राणायाम वर्णन

दोहा–प्रथम सहज मध्यम बहुरि, कठिन तीसरो आहि ।
प्राणायाम त्रिविधि कहो, साधे योगी जाहि ॥

चौपाई

प्रथम सहज कहिये द्वै शाखा । श्वासा परश्वासा मय भाषा ॥
पूरक कुम्भक रेचक माही । तरसु जान नाकाम है ताही ॥
द्वितिये पूरक इडाहै नारी । बाम नाक नथुन थित धारी ॥
बाहरकी वायू लेजाई । भरे इडा नाडीमें लाई ॥
कुम्भकको अस कारय कथना । बन्द करे दोउ नाकके नथुना ॥
थित प्रयन्त रोके रहे पौना । रेचक कर्म कहो अब तौना ॥

शनैः २ पुनि पौन निकारे। पिङ्गला रग मारगको धारे ॥
बाहर पौन करो सो जबलों। नथुना बाम बन्द रख जबलों ॥
तृतीये तहँ करम आरम्भन। बाहर मात्रालों कर थम्भन ॥
मात्रा ताहि कालको नाऊ। नाम उचार शुद्ध करि पाऊ ॥
नहि विलम्ब नहिं शीघ्रविवेका। शब्द शुद्ध सो मात्रा एका ॥
चौथे जब यह युक्ति संभाला। राखे थित तामें कछु काला ॥
फिर द्विगुना फिर तिगुना करिये। तिगुणते अधिकमें जब चित धरिये
एकबावर ऐसी विधि ठाना। कुंभकमें यह युक्ति प्रमाना ॥
इड़ाको पलटि पिंगला करना। पुनि पिंगल इडाकरि धरना ॥
पंचम ऐसी युक्ति विलोको। वायूको निज चलते रोको ॥
छठे जो पूरक रेचक भासा। आपते हो श्वासा पर श्वासा ॥
इकीस सहस अरु षट्ट सठथापू। चलै श्वास सो अजपा जापू ॥
तापर ध्यान करै जो कोऊ। ताको जाप रैन दिन होऊ ॥
सप्तम वृद्ध होय वय ताही। वय प्रमान श्वासते आही ॥
द्वितिये मध्यम यहि विधि भाला। प्रथम प्राण वायू कर चाला ॥
बाहर अंगुल बाहर आवै। पुनि अदना वायू ले जावै ॥
प्राण कि ठौर अपान ले जाई। पूरकमें यह युक्ति कराई ॥
द्वितिये कुम्भकमे यह डौरा। प्राण अपान करो इक ठौरा ॥
लेकर बन्द करो यहि उक्ती। बरतै अंत रेचक द्वौ युक्ती ॥
पहिले सदाके ढंग न रहई। फेर इडा वायू जो कहई ॥
जोर कियेते बाहर आई। पहुँच न बाहर अंगुल ताई ॥
तृतिये अष्ट कर्म कहि दीनी। पूरक तीन अरु कुम्भक तीनी ॥
दो रेचक भे आठौ कर्मा। अब चौथेको भाखो मर्मा ॥
खैंचत थंभन त्यागन माना। पूरकगह रेचक नहिं ठाना ॥

ताको कुम्भक नाम बखाना । प्राणनको निज वशमें आना ॥
एकीस लाख अरु साठि हजारा । हो नर श्वास पूर्ण जिहि बारा ॥
तिहि अवसर अस युक्ति जो कीये । तौ सौ दो सौ वर्षलौ जीये ॥
तृतिये कठिन कि युक्ति सो अहई । प्रथम खेचरी मुद्रा गहई ॥
ऐसी लांबी जीभ बढावै । तालूमें पुनि ताहि लगावै ॥
पुनि सो ऐसी युक्त गहावै । प्राणवायु धौले नहिं पावै ॥
कान नाक मुख हगलों जोई । तहलों जान न पावै सोई ॥
द्वितीये भूचरि मुद्रा गाई । दक्षिण पगकी एडी ल्याई ॥
गुदा लिंग जड दावै बाँही । बाम पाव एडी रख ताही ॥
बार २ एडी बदले दोऊ । पुनि अपान ऊपर खैंचेऊ ॥

अथ प्रत्यहारवर्णन-चौपाई

प्रत्याहार सो नाम भनंतो । इन्द्री दमन कीजिये संतो ॥
प्राणायाम प्राण दम धारा । तिमि इन्द्री दम प्रत्याहारा ॥
प्रथमें विषम स्वादते भाजा । द्वितिये बहु विरुद्ध जो काजा ॥
कबहूँ ताहि न करत सयाने । दृष्टिहु ताके दिश नहिं ताने ॥
तृतिये विषम सर्वथा त्यागी । मनहु दृष्टि सन्मुखते भागी ॥
चौथे हर्ष न शोक रहाई । पंचम प्राणायाम दृढाई ॥

इति

अथ धारण अथवा परमेश्वरकी प्रीति-चौपाई

प्रीतम प्रीति हिये अति बाढे । सदा ध्यान सुमिरनमें गाढे ॥
प्रथमहि गुरुको ध्यानगहीजे । दृग सन्मुख जो कछुक लहीजे ॥
सो सब गुरुकी दाया जाना । बारह मात्रालों दृढ ठाना ॥
होयरपक्क जो पूरन जाना । मात्रा सहस दोसौ षट पाना ॥

इति

अथ ध्यानको वर्णन–चौपाई

ध्यानते ऐसो ज्ञान गहीजै। तातें वृद्ध धारणा कीजै॥
दो सहस पांच सो बानवे मात्रा। तहँलो तिहि पहुँचाव सुमात्रा॥

इति

अथ समाधि वर्णन–चौपाई

अष्टम योग समाधि कहावै। सो धारणा तहँलो पहुँचावै॥
पांच सहस एकै सो चौरासो। मात्रा धारे शंक विनासी॥
द्वितिये चिंता दूर पराई। तृतिये रूप दृष्टि प्रिय आई॥
चौथे यहू चितवनि त्यागे। पँचयें मोहि तोहि भेद न लागे॥
छठयें नहिं कछु रहा दराई। सतयें आप आपमें छाई॥
तू मोहिमें तोहि माह समाई। जीवहि शिवकी भै एकताई॥
सहस गिरा इत भाषे येही। जीअत साधु त्याग जब देही॥
सहज समाधी ज्ञात बखाना। प्राणवायु तहँ लों परमाना॥
एक सहस सत्तर अरु दोई। मात्रा लों जब निजवश होई॥
ताको संयम नाम उचारा। यह अष्टांग योग निरधारा॥

इति

अथ षट्चक्र भेदनकी युक्ति

दोहा–षट्‌ चक्करको भेदके, योगी जन चढि जाय।
गगन गुफामें बासकर, आवागमन नशाय॥

चौपाई

अब षट्‌ चक्रको करों बखाना। मूलद्वार प्रथमैं कहि गाना॥
मूल द्वार कमल जो अहई। नाम अधार चक्र सो कहई॥
पाखुरि चार सो कमल विराजा। कृपा गनेश करे तिहि काजा॥
गुदासे पानी खैंचन लागे। खैंच खैंच जल पुनि तिहि त्यागे॥
यहि विधि गुदा शुद्ध कर जोई। बस्ती क्रिया नाम सो होई॥

पुनि ऊपरको पौन चढाई । द्वितिये भेदन करे उपाई ॥
जो अधार चक्करके ऊपर । स्वाधिष्ठान चक्र है दूसर ॥
लिंग भूमिका परसों अहई । षट्‌दल कमल तासुको कहई ॥
पौनके बल गुदाचक्र बँधाई । स्वाधिष्ठान चक्रपर जाई ॥
स्वाधिष्ठानके भेदन काजा । द्वादश अंगुलको गज साजा ॥
सो गज लिंगमें देत चलाई । लिंगद्वार तिहि शुद्ध कराई ॥
यह गज करत क्रिया कहँ लावै । बहुरि लिंगते दूध पिलावै ॥
लिंगते सहतको खैंचे जबहीं । गजकी क्रियापूर्ण हो तबहीं ॥
पौन खैंच पुनि लिंगके द्वारा । स्वाधिष्ठान बेधि चल पारा ॥
बहुरि अपान समान मिलाई । धोती क्रियामें तब मन लाई ॥
मणि पूरक चक्कर जो कहई । नाभी द्वारेमें सो अहई ॥
दश दल कमल तासु परमाना । ताके भेदनको मन ठाना ॥
दो अंगुल पट चौडा लीजै । अरु नौ हाथको लामा लीजै ॥
लीलै ताहि वस्त्रको सारा । बहुरि काढि तिहि मैलनिकारा ॥
तीन बार ऐसी विधि सारा । बहुरि काढि तिहि मैलनिकारा ॥
तीन बार ऐसी विधि कीजै । धोती क्रिया सो पूर्ण कहीजै ॥
नाभिते बहुरि पौन उलटाई । मणि पूरक चक्कर भेदाई ॥
फेरि अपान प्रान जो दोई । मेले प्रान माह तब सोई ॥
अनहद चक्र भेद तब जाई । हृदय स्थान माह जो पाई ॥
बारह पखुरी ताकी होई । हृदये मध्य कमल सो जोई ॥
ताकी सिद्ध हेत जो दीशा । कुंजर क्रिया करे योगीशा ॥
तीन बार भल पानी पीजै । पुनि पुनि सो उलटीकर दीजै ॥
सवा हाथकी दातन लेना । भीतर नाड चलायसोदीना ॥
बार बार पानीको पीना । दातन डारि छोड पुनि दीना ॥
ताकी सिद्ध पूर्ण जब लहिये । कुंजर क्रिया नामसो कहिये ॥

बहुरि पौनको लेहु उठाई । अनहद चक्र भेदिके जाई ॥
प्रान अपान समाना तीनों । कण्ठमें तिनहि मेलि तब दीनो ॥
चक्र विशुद्ध कण्ठके माही । षोडश दल है कमल तहाँही ॥
योग लंबिका ताहित करना । दूध अधार ते काया धरना ॥
सूक्ष्म बोलते कारय कीजै । पुनि तब ऐसी जुक्ति गहीजै ॥
जीभके हेटकी नस जो सगरो । मस्का सेंधो लोनसे रगरो ॥
जीभ दुहन पुनि प्रातहि काला । या विधि रसना करो विशाला ॥
ऐसी अपनी जीभ बढावै । ऊर्ध्व द्वारमें ताहि लगावै ॥
जरमें अमृत चूवै जोई । ताको पान करे तब सोई ॥
पीअत अमृत जागी देहा । योग लंबिका सिद्धभो येहा ॥
बहुरि विशुद्ध चक्रकी भाना । आगेको तब करे पयाना ॥
अग्नि चक्र है त्रिकुटी थाना । द्वै दल कमल तासु परमाना ॥
ताहि तनेती क्रिया कराई । बत्ती निज नासिका चलाई ॥
नाक शुद्ध करि बत्ती कीता । मूर्द्धा शुद्ध भो ज्ञान गहीता ॥
पुनि उद्यान महा सुख पावै । बहुरि कण्ठते पौन उठावै ॥
चक्र विशुद्ध भेद जब लावै । अग्नि चक्रमें वायू लावै ॥
तिहि औसर जिह्वा लेजाई । ऊरध द्वारे माह लगाई ॥
बन्द करे तब ऊरध द्वारा । अग्नी चक्र भेदि हो पारा ॥
चलि ब्रह्माण्ड श्वास लय होई । कुंभक करिके तनु शिथलोई ॥
काम अरु क्रोध लोभ मोहानी । तब इन सबकी सेन परानी ॥
कर ब्रह्माण्डमें योगी वासा । जबहि चढायो गगनमें श्वासा ॥
जहँ नहिं द्यौस नहीं जहँ राती । नहिं सूरज शशि उडुगणपाती ॥
तहँ सुषुमना वेधि ब्रह्माण्डा । गडा जाय योगीके झण्डा ॥
जब ब्रह्माण्डमें माहरम जाई । सङ्गी साथी सकल पराई ॥
सङ्गी साथी जब रहि गयऊ । निर्विकल्प योगी तब भयऊ ॥

इति षट्चक्र

अथ दो प्रकारकी समाधि वर्णन--चौपाई

दोय प्रकार समाधि कहीजै । सविकल्पो निर्विल्प गनीजै ॥
जो सविकल्प समाधि कहावै । ज्ञाता ज्ञान ज्ञेययुत ध्यावै ॥
त्रिपुटी भान सहित जब सोई । ब्रह्म बीच वृत्ती लय होई ॥
सा सविकल्प समाधि कहावे । निर्विकल्पको अब कहि गावे ॥
त्रिपुटी भानु रहित वृत्ती जब । ब्रह्मानन्द हो निर्विकल्प तब ॥
जो सब कल्पको साधना जाने । निर्विकल्प फल तासु बखाने ॥
निर्विकल्प सुखो पति दोई । यतनो भेद दोहूमें होई ॥
निर्विकल्पमें ब्रह्मा नन्दा । सुषुपतिमें अज्ञानको फन्दा ॥
निर्विकल्पमें चार हैं बाधक । तिहि सचेत रह चातुर साधक ॥
प्रथमै लय विक्षेप बहोरी । पुनिकर अरशा स्वाद कहोरी ॥
आलस निद्रा जब सरसाना । वृत्ती होय सुषुप्ति समाना ॥
ब्रह्मानन्द भोग नहिं भोगी । सजग होहि तिहि औसर योगी ॥
आलस निद्रा दूर हटाई । फेरि वृत्ति निज लेहि जगाई ॥
द्वितिये पुनि विक्षेप बताई । वृत्ती जबै बहिर है जाई ॥
कछु पदार्थको कारण जाई । अन्तर वृत्ति बहिर्मुख होई ॥
हो सचेत योगी तिहि काला । वृत्ती बहिरंतर मुख बाला ॥
तृतीये राग द्वेश जो होई । नाम कषाय कहां लै सोई ॥
राग द्वेष विधि कहो बखानी । यक बाहर एक अन्तर जानी ॥
बाहर धन दारादिक शोचा । अन्तरकी चिंता मन पोचा ॥
भूत भव्य चिन्ता मन आई । योगीकी समाधि विनशाई ॥
चौथे रसास्वाद अब भाषो । ऐसे अर्थ तासुको राखो ॥
ब्रह्मानन्दते सुख अनुभव कर । दुख निवृत्तसे हृदय सुख भर ॥
यहू योगमें बिघ्न बताई । जबलों नहिं निज प्रीतम पाई ॥
चितकी पंच भूमिका आही । प्रथमै ज्ञेय नाम कह ताही ॥

द्वितिये मूढता नाश कहावै । तृतिये को विक्षेप बतावै ॥
चौथे पुनि एकाग्रता होई । पंचम भूमि निरोधक होई ॥
अर्थ तासु यहि भाँनि जाचना । लोक बासना देव बासना ॥
शास्त्र बासना आदिक जोई । क्षेप नाम ताहीको होई ॥
निद्रा आसना तुम गुन घेरे । नाम मूढता ताको टेरे ॥
बाहर सुखवृती जब होई । नाम विक्षेप कहावे सोई ॥
चित्त एकाग्र होय जेहि बारा । एकाग्रता नाम सो धारा ॥
ब्रह्माकार जबै ह्वै जाई । ताको नाम निरोध बताई ॥
जो योगी निज विघ्न हटावै । ब्रह्मानंद सोई सुख पावै ॥
योगीको सब सुखसुरसावे । ज्ञान बिना पै मुक्ति न पावे ॥
केवस ज्ञान उगे जिहि बारा । तब योगी हो ब्रह्माकारा ॥
अष्ट सिद्धि नौ निद्धि विराजा । योगी संगसकलसुख साजा ॥

इति समाधि

अथ ओंकार जापको वर्णन—चौपाई

ॐकार जप सबको सारा । जिहि योगी परधामपधारा ॥
ऋद्धि सिद्धि गुण ज्ञान कहाये । ॐकार भव पार कराये ॥
जो कोई शुद्ध जाप मन लावे । सकल पदारथ ताते पावै ॥
जाप अशुद्ध करे जो कोई । वृथा परिश्रम ताको होई ॥
पुत्र जनै जिहि औसर बाला । होय टेढ शिशुजोतिहिकाला ॥
जौं बालक सीधे नहिं आवै । तौ निज मात प्रणबिनशावै ॥
ॐकार जप ऐसो जानी । शुद्ध जाप बिन जिवकी हानी ॥
जब इंद्रिनको वशकरि लीजै । ताको कल्प समाधि कहीजै ॥
मन इंद्रिनको भूत कहावे । मनको बहुरि अकाश बतावै ॥
पुनि आकाश तीन विधि भाषा । चिदाकाश प्रथमै कहि राखा ॥
मनको चिदाकाश कहि गाये । नभ समान चहुँ दिश रहछाये ॥

जैसे नभको अन्त न कोई । तैसे मन अनंत है सोई ॥
द्वितिये मनाकाश कहि टेरे । ब्रह्माकाश नाम तिहि केरे ॥
ब्रह्माकाश कहै इमि तेही । ब्रह्म सो व्यापक है मन येही ॥
सर्वमयी जिमि ब्रह्म विराजै । तैसे यह मन सबमें गाजै ॥
तृतिये भूताकाश बखाना । मन अरु ब्रह्मते करे मिलाना ॥
मनाकाश अरु भूताकाशा । ताते ब्रह्म होय परकाशा ॥
ब्रह्म दोउते पार बहूता । थूल देह वासनाके सुता ॥
त्रिविधि बासना कहो बखानी । सत रज तम गुन ताको जानी॥
जब रजगुन तम गुण चल जाई । सूक्ष्म देह जीव तब पाई ॥

दोहा-यहि विधि सूक्ष्मता लहै, तन थूलता नशाय ।
जिहि औसर यहि गुन गहै, जीवन मुक्त कहाय ॥
दोय प्रकार समाधि कह, यक चेतन जड एक ।
योगी भवसागर तरे, निज बल बुद्धि विवेक ॥

इति

अथ अथर्वण वेद योगतत्त्व उपनिषद–चौपाई

सबते श्रेष्ठ विष्णु कहलावै । सोऊ योग समाधि लगावै ॥
सदा योग मारग आचरहीं । परम पुरुष ध्यान सो करहीं ॥
सो प्रकाश सब घट घटमाहीं । तिहि चितवनी करें नर नाहीं ॥
भूलिविषय रति प्रभुहिविसारी । यही अचंभौ मो मन भारी ॥
वस्तु अनित्य जासु मन भावै । महा मूढ सो जीव कहावै ॥
पुत्र हो दूध जाय थन पीये । तरुण सुखीतिहिकरगहिलीये ॥
यद्यपि जान भिन्न तिय देही । तद्यपि जान पयोधर येही ॥
जाहि द्वारते बाहर आवत । ऐसो दुख सदा नर पावत ॥
तामें पुनि पैठत सुख माना । कैसे भूले नर बिन ज्ञाना ॥
जाहि रूपको जननी कहते । सोई निज दारा करि कहते ॥

कबहुँ जिहि निजपिता पुकारी । साई रूप निज भरता भारी ॥
निजु मन माइ बिचारिके देखो । पिता सोइ प्रकटा सुद लेखो ॥
रहटा कूप डोलची जैसे । आवे जाय जक्त यह तैसे ॥
यक भरि आवै दूजा रीते । ऐसी भूल माह जग बीते ॥
मुक्तिके मारगको नहिं ढूँढा । चर्खा गाह परा जग मूँढा ॥
ओंशब्द हरि भजनके काजा । तामें अक्षर तीन विराजा ॥
तिहि अक्षर तिहुँलोक बखानो । तीनों वेद त्रिवेद हि मानो ॥
अर्ध रेफ अनुनासिक होई । सबसे सार जानिये सोई ॥
तनमें प्राण परवानमें सोना । तिलमें तेल घृत दूधसे होना ॥
फूलमें यथा सुगन्ध समाई । तैसे सार ताहि बतलाई ॥
ॐकारके अक्षर चारी । ताको कहिये अर्थ विचारी ॥
प्रथम अकार हि ब्रह्मा जानो । द्वितिये ओंकार विष्णु पहिचानो ॥
रूद्रहि जान मकार स्वरूपा । ना निर्वचनसो ज्योति स्वरूपा ॥
बहुरि अकार ऋग वेद अहई । यजुर्वेद ओंकारहि कहई ॥
सामवेद कह जान मकारो । अनिर्वचन नन्ना चित धारो ॥
तृतिये जाग्रत जान अकारा । स्वप्न अवस्था भाष ओंकारा ॥
फेरि मकार सुषुप्ती गाई । नन्ना रूप जान तुरियाई ॥
चौथे पुनि अकार मृत लोका । मध्य लोक ओंकार बिलोका ॥
स्वर्गको लोक मकार प्रमाना । तिहूँते परे नकार बखाना ॥
पँचये मन कहँ जान अकारा । ओ चितना बुद्ध माहंकारा ॥
पुनि छठयें ब्रह्मचर्य अकारा । ओ गृहस्थको नाम पुकारा ॥
मम्मा वानप्रस्थ प्रकाशा । नन्ना जानि लेहु संन्यासा ॥
सतयें अकारहि रजगुन भनिये । ओ सतमाको तमगुन गनिये ॥
अठयें अकार ज्ञान थीरता । तीनि ओकार मकार वीरता ॥
नन्ना न्याय कियो परमाना । नवम अकार कम करि माना ॥

पुनि कह ओ उपासना सारा । मम्मा ज्ञान नन्ना सब पारा ॥
ॐ कारको अर्थ अनंतो । वर्णन कौन सकै करि संतो ॥
प्रवण आदि सबहीको भाषा । ताते और अनेकन शाखा ॥
मन स्वरूप अस जो उरबासी । अधरकमलसमताहिकप्रकाशी॥
कमल नाल ऊपरको राखा । हेठको ताके मुखको भाषा ॥
ताके बीच माह मन रहई । पावन होय प्रणव जब कहई ॥
प्रथम हि अक्षरके उच्चारे । मनकी उज्ज्वलता जिव धारे ॥
द्वितिये अक्षरते दिल खिलता । अनहद शब्द गगनसुनि सिलता॥
चौथे अर्ध बिंदु बतलाई । ताते ज्योति माह मिलजाई ॥
जब यह मन मलते बिलगाना । होय शुद्ध बिल्लौर समाना ॥
सूरते अधिक नूर जग मगई । परम प्रकाशमान तब लगई ॥

दोहा—क्रोध आलस निद्रा बहुत, बहु भोजन बहु जाग ।
फाका करनो कर्म षट्, योगी दीजे त्याग ॥

चौपाई

यहि विधि तीनि मास जब साधे । अंतर परे न मनको बाधे ॥
तृतिये मास हो सह गति वाकी । देव दृष्टि सब आवे ताकी ॥
मास पांचमें यह गुन पावे । देव स्वरूप आप ह्वै जावै ॥
छठयें मास मिले हरि माही । प्रणव साधना सदा कराही ॥

अथ अथर्वण वेद योगसुखा उपनिषद—चौपाई

प्रथम हि पद्म आसनको मारे । बैठि एकांत ध्यानसो धारे ॥
द्वितिये नासा आगे देखे । टरै न दृष्टि ध्यान करि लेखे ॥
तृतिये दोउ कर पग कह जोरी । चौथे मनको लेहु बटोरी ॥
विषय बिकल्प अरु संशय कोई । मनके निकट न आवे सोई ॥
पंचम पावन प्रणव को ध्याई । छटयें नामी सुरति लगाई ॥
सप्तम निज्जु मन माह बिचारी । अशुचि बस्तु मानुष तनधारी ॥

तौन देह तू भौन बताये। तामें थम्भा चार लगाये॥
एक बड तीन थंभ लघु साजे। पांच देवता नौ दरवाजे॥
पृष्ठ अस्थि बड़ थंभ पुकारी। ताके निकट सुषुम्ना नारी॥
लघु थम्भा जो तीन कहाये। सो सत रज तम गुन बतलाये॥
पंच प्रवण सुर पांच उचारी। तेहि देह जिव गेह सवारी॥
मनके रंध्र माहचित धारो। सूर्य मंडलाकार निहारो॥
तेहि रविमंडल प्रणव सिरेखो। प्रणवमें दीप शिखा पुनि देखो॥
दीप शिखा ऊरध दिश जानी। ज्योति स्वरूप ताहि अनुमानी॥
ताहीमें निज ध्यान दृढाई। इमि योगी तन तजि तहँ जाई॥
रवि मंडल भनि सुक्ष्मनि नारी। गेह पन्थ ब्रह्म रंध्रको फारी॥
तन तजिके योगी इमि जाही। परम पुरुषके रूप समाही॥
ऐसी युक्ति गहे सुख पागी। आलस निद्रा वश दुर्भागी॥
छन छन ऐसी युक्तिको गहिये। यही उनिषद देखत रहिये॥
जो यह युक्ति न हरदम होई। निश्चय तीन काल कर सोई॥
भोर मध्य दिन सायंकाला। नितप्रति गहि लीजे यह चाला॥

इति

अथ अष्टसिद्धियोंके नाम चौपाई

प्रथमै अणिमा नाम कहावे। ताहि लहे लघु देह बनावे॥
द्वितिये महिमा कहो बखानी। निज तनकी दीरघता ठानी॥
तृतिये लघिमा जो लहिपावै। सो अपनो तन हरू बनावै॥
चौथे गरिमा नाम भनीजे। जो लहि निज तन भारी कीजे॥
पंचम प्राप्ती नाम बतावो। सो लहि जहँ चाहो चलजावो॥
पुनि प्रकामिका छठयें अहई। जाते निज मनोर्थ सब लहई॥
सतयें ईशता नामक होई। जापर चहै आप बड होई॥

अठयें वशियौ नाम कहाई । जेहि चाहे तिहि देत भ्रमाई ॥
आठों सिद्धिमें भेद अनेका । जानहिं योगी सहित विवेका ॥

इति

अथ नव निधियोंके नाम

दोहा–महापद्म अरु पद्म कह, कच्छप मकर मुकुंद ।
खर्व शंख अरु नील कह, नवम कहावे कुंद ॥

इति

अथ योगी भेष वर्णन–चौपाई

शैली सिंगी मुद्रा काना । भगवाँ वस्त्र विभुत है बाना ॥
योग युक्ति साधन भल राखा । अजपा जाप जपे गति भाषा ॥

क० भा० प्रकाशसे

इति श्री आगमनिगमबोध समाप्त

सत्यसुकृत, आदि अदली, अजर, अचिन्तपुरुष, मुनीन्द्र, करुणामय, कबीर, सुरति योग, संतायन, धनी धर्मदास, चूरामणिनाम, सुदर्शन नाम, कुलपति नाम, प्रबोध गुरुबालापीर, केवलनाम अमोल नाम, सुरतिसनेही नाम, हक्कनाम, पाकनाम, प्रकट नाम, धीरज नाम, उग्र नाम, दयानामकी दया, वंश-व्यालीसकी दया

★

अथ श्रीबोधसागरे

सुमिरनबोध प्रारंभः

(छोटा)

★

चतुस्त्रिंशस्तरङ्गः

प्रथम बोध

(नित्य कर्म षट्कर्म विधि वर्णन) सुमिरन आदि गायत्री

आदिगायत्री सुमिरण सार। सुमिरन हंस उतारे पार॥
कोटि अठासी घाट हैं, यम बैठे तहँ रोक।
आदि गायत्री सुमिरिके हंसा होय निशोक॥

घाटी नाकहि आगे तब जाई। सकल दूत रहे पछताई॥
आगे मकरतार है डोरी। जहां यम रहे मुख मोरी॥

ओहं सोहं नामके, आगे करे पयान।
अजर लोक बासा करे, जगमग दीप स्थान॥
सुख सागर स्नान करी, होय हंसका रूप।
जाय पुरुष दर्शन करे जिस दिन परम आनन्द॥
आदि गायत्री सुमिरिके, आवागमन नसाय।
सत्य लोक बासा करे, कहैं कबीर समझाय॥

सुमिरन प्रभात गायत्री

आदिगायत्री अम्मर अस्थान। सोहंतत्त्व ले हंसालोक समान॥
सत गायत्री अजपा जाप। कहै कबीर अमर घर बास॥
सत्य है अमर सत्य है शून्य। सत्यहिमें कछु पाप न पुण्य॥
कहै कबीर सुनो धर्मदास। यह गायत्री करो प्रकाश॥

सुमिरण मध्याह्न गायत्री

अचिंत पुरुष हिरम्ब छाया। नाद बिन्द होय कर्ता आया॥
यमसो जीता लोक पढाया। सुरति स्नेही हंस कहाया॥

अचिन्त पुरुकी गायत्री, दीन्ह कबीर बताय।
निशिदिन सुमिरण जो करै, करम भरम मिटि जाय॥

सुमिरण सन्ध्या गायत्री

बारह जोजन कोट, यन्त्र जहँ पलमें छूटे।
यहि विधि सन्ध्या जपे, भर्मको आगम टूटे॥
गायत्री ब्रह्मा जपे, जपे देव महेश।
गायत्री गोविन्द पढे, सतगुरुके उपदेश॥
ताको काल न खाय, जो संज्ञा चीन्हे।
घटमें रही अलोप, काढि हम बाहर कीन्हे॥

इन पर लै सिद्धौ भनी, देव पूजा गो शरीर ।
ब्रह्मा बाचा पुत्र दासा, चपलान उग्र इंसनी शरीर ॥
शब्द पाय हिरदय घरे अस कथिक है कबीर ।

सुमिरन मध्याह्न गायत्री

कहैं कबीर अजपा घटे सूझे । निगम नाम मोहि जो बूझे ॥
तन मन धनहिं निछावर करे । सार नाम गहिभौ जल तरै ॥
अष्ट सिद्धिनौनिद्धिमांगेसोदेऊँ । खुरासानखुरवेदमुखगंगाप्रवाहु ॥
रिप सिप मार गर तराई ।नौगुनघरजासुरतिप्रकटहोवसूझे॥
खोजो सुरति कमलके तीर । सतगुरु मिल गये सत्य कबीर॥

सुमिरन सोनेका

संयम नाम सदा चितलाई । जासों काल दगा मिटिजाई ॥
काल दगा धरि आवे भेखा । जीव चुके धरतीकी रेखा ॥
सोवत समय जो मारे तारी । सत सुकृत करे रखवारी ॥
कहै कबीर बंकेज बुझाई । सोवत जीव नष्ट नहिं जाई ॥
अमर पिछौरी ओढिके, सुख मण्डलमें सोय ।
कबीर ऐसे गुरु पाइके, कहा मुक्तिको रोय ॥
उत्तर करो सिराना, पश्चिम कीजे पीठ ।
कहैं कबीर धर्म्मदाशसों, यमकी लगै न दीठ ॥

सुमिरन प्रातः उठनेका

जो स्वर चले प्रात संचारी । सोय पग धरि उठो संभारी ॥
दिवस समस्त हर्ष सो बीते । जहां जाय सो कारय जीते ॥
पुहुमीमें पग दीजिये, सुनो सन्त मति धीर ।
कर जोरे बिन्ती करो, दर्शन देहु कबीर ॥

सुमिरन दिशा जानेका

अन्न सकल तन पोख, शब्द सुरति सो पेख ।
सूक्ष्म लगन उतारो, काया निर्मल होय हमार ॥

कहैं कबीर यही तत्सार। चौरासी सो जीव उबार ॥

सुमिरन मलद्वार धोनेका

सुरतिसंतोषसूमसजबभयाउतार। बांयेकर परसै जलद्वार ॥
सतगुरु शब्द गहोमति धीर। कहै कबीर होय पाक शरीर ॥

सुमिरनजलपात्रका

धर्मराज मैं तुम्हैं बुझाऊँ। जल पत्रका भेद बताऊँ ॥
जलपात्रको गहिके, उत्तम करो बनाय।
कहैं कबीर निर्मल भये, संशय भ्रम मिटिजाय ॥

सुमिरन तूँबा प्रक्षालनेका

तत्ततत्तका तूँबा, शब्दे लियो समोय।
कहैं कबीर धर्मदाससों, तूँबा निरमल होय ॥

सुमिरन हाथ मटिआवनेका

माटी खाक माटी पाक। माटी मैं माटी गर्पाक ॥
कहैं कबीर हम शब्द सनेही। सत्त शब्दसों पाक होय देही ॥
मृत्तिका लेव हाथ लगाई। अजर नाम सुमिरो चितलाई ॥
मृत्तिका लीन्हों हाथमें, निर्मल भया शरीर।
कर्म भ्रम सब मेटिके, सुमिरो सत्य कबीर ॥

सुमिरन दातौन तोरनको

धन्य वृक्ष जिन दातौन दीन्हा। साधु संतपर दाया कीन्हा ॥
दाया कीन्ह भया प्रकाश। रक्षा करें कबीर धर्म्मदास ॥

सुमिरन दातौन करनेका

सत्तकी दातौन संतोषकी झारी। सत्त नामले घसो विचारी ॥
किया दतौन भया प्रकाश। अजर नाम गहो विश्वास ॥
अमी नामते पहुँचे आय। कहैं कबीर सतलोक सिधाय ॥

सुमिरन दातौन फारनेका

फटी दतौन भया प्रकाश। अजर अमर कबीर धर्मदास॥

सुमिरन मुख धोनेका

मुख परसे मुक्तायनि वासा। जिनके परसत लोक निवासा॥
लैं जल मुख माहि चढावे। अम्बुन नाम ह्रिदे लौलावे॥
कहैं कबीर सुनो धर्मदास। सो हंसा सतलोक निवास॥

सुमिरन अमरि उतारनेका

अमरी अमर लोक सो आई। तीन लोकमें निर्भय भई॥
तन शोधो मन राखो धीर। अमरी उतारो खारी नीर॥
कहैं कबीर अमर भई काया। निज शब्द अमीका आया॥

सुमिरन जलमें पैठनेका

जो साहब दाया कर पाऊँ। कर वन्दी जल मांझ समाऊँ॥
पान निहपान सतगुरु शब्द प्रमान

सुमिरन स्नान करनेका

अमी सरोवर ज्ञान जल, हंसा पैठ नहाय।
काया कंचन मन मगन, कर्म भर्म मिटिजाय॥

पिंडे सो ब्रह्मंडे जान। मान सरोवर कर स्नान॥
सोहं हंसा ताको जाप। कहै कबीर पुन्य नहिं पाप॥
ऐसी विधि करे स्नान। सोहंसा सतलोक समान॥

सुमिरन स्नान करके बन्दगीको

नहाय खोरके शीश नवाई। अलख पुरुषके दर्शन पाई॥
अमी शब्दको कीजे जाप। कहैं कबीर अमरघर बास॥

सुमिरन कोपीन पहिरनेका

पारा राखे गुरु हमारा।
बारह बरष की कन्या आई। उलटा पारा रह्यो समाई॥

ऊपर बन्दी छोर विराजे । पारा खसे तो सतगुरु लाजे ॥
सत्तकी कोपीन ब्रजका धागा । गुरु प्रतापसो बन्धन लागा ॥
कहैं कबीर तजो अभिमान । पारा खसेतो सतगुरुकी आन॥

सुमिरन जल भरनेका

जीव जन्तु सब दूर पराऊ, भरिहौ निर्मल नीर ।
हत्या पाप लागे नहीं, रक्षा करैं कबीर ॥

सुमिरन जल छाननेका

अमृत जल निर्मल कर छाना । सतगुरु साहबके मन माना ॥
कहैं कबीर भरम सब भागा । टूट्यो जबै पुरानो धागा ॥

सुमिरन तिलक करनेका

तत्त्व तिलक तिहुँ लोकमें, सत्त नाम निज सार ।
जन कबीर मस्तक दिये, शोभा अगम अपार ॥

पार कोई विरले पावे । पार पावे सो संत कहावे ॥
योगी संकट बहुरि न आवे । कहैं कबीर सतलोक सिधावे ॥

सुमिरन दर्पण देखनेका

दर्पणमें मुख देखिये, कबहीं न होय चितभंग ।
गुरुको बचन संतकी सेवा, चढे सवाया रंग ॥

सुमिरन चरणामृत महाप्रसाद पानेका

चरणामृत महाप्रसाद जो लीन्हाँ । सत्य शब्दका सुमिरन कीन्हाँ॥
अर्ध उर्ध मध्य धर ध्याना । कहैं कबीर सो संत सुजाना ॥

सुमिरन चरणामृत देनेका

हो साहब मैं बिन्ती लाऊँ । कौन नामते पग पखराऊँ ॥
दहिने पग प्रथम ही जलनावे । बल हमार सो पग पखरावे ॥
शब्द सार निर्मोलिक सारा । पग पखराओ हंस हमारा ॥
यहि विधि पग पखराओं भाई । दगा धोख सब दूर पराई ॥

साखी–अजर नामको सुमिरन, चीन्हे हंस हमार ।
कहैं कबीर धर्मदास सो, शीश न आवे भार ॥

सुमिरनमहाप्रसाद देनेका

पके अन्नको ग्रासन कीजे । पांच तत्त्वको भोजन दीजै ॥
जबे जीव मांगे प्रसाद । अजर नामको कीजै याद ॥
एक रवा हाथमें लेवे । महाप्रसाद दासको देवे ॥
महाप्रसाद एक धनीको, जाको सब विस्तार ।
मूरख लेख न पावै, कहैं कबीर विचार ॥

सुमिरन महाप्रसाद पानेका

एक रवा हाथमें लीन्हा । उग्रनामका सुमिरन कीन्हा ॥
महाप्रसाद ऐसी विधि पावे । यमकी दसी निकट नहिं आवे॥
उग्र नाम हृदय लौलाई । ऐसी विधि प्रसाद जो पाई ॥
साखी–कहैं कबीर धर्मदाससो, महाप्रसाद जो लेय ।
काल दसी सब टूटे, यमहि चुनौटी देय ॥

सुमिरन चरणामृत पानेका

चरणामृत शिष्य जो लेई । अम्बुज नाम हृदय चित देई॥
लागे नहीं कालकी छाहीं । चरणोदक जो होय सहाई ॥
ऐसी विधि चरणोदक लेई । यमहिं चुनौटी निसिदिन देई॥
ले चरणोदक माथ नवावै । तीन दण्डवत तब पहुँचावै ॥
साखी–कहैं कबीर धर्मदाससो, यह शिष्यको व्यवहार ।
दगा धोख सब मेटो, हंस उतारो पार ॥

सुमिरन जलपीनेका

उत्तम शीतल निर्मल नीर । अमृत पिय तिरषा गई दूर ॥
सत्यगुरु मिल गये सत्यकबीर । भागो काल विषमके तीर ॥

सुमिरन घर बुहारनेका

सुमति बुहारी कर गहि लीना । कचरा कुमति दूर कर दीना ॥
बावन लाख दगा मिटि जाई । साहबकबीरकी फिरी दुहाई ॥

सुमिरन घर पोतनेका

हरियर गोबर निर्मल पानी । चौका पोते सुकृत ज्ञानी ॥
सवा लाख चूक बकसाये । चौका पोत जेवनार चढाये ॥
कहैं कबीर सुनो धर्मदास । हंसा पहुँचे पुरुषके पास ॥

सुमिरन चूल्हामें अग्नि बारनेका

चूल्हा हमारे चौहटे, सब घर तपे रसोइ ।
सत सुकृत भोजन करे, हमको छूत न होइ ॥

सुमिरन रसोई बनानेका

सुत सुकृत कीन्हा जेवनारा । ताते करत न लागे बारा ॥
सतघरी दो पहरि या सांझा । लक्ष्मी बैठी रसोई मांझा ॥
सत्त पकवान लक्ष्मी करे । तीनलोकका उदर भरे ॥
कहैं कबीर लक्ष्मी समुझाय । संत सुहेला बैठे आय ॥

सुमिरन थारी परोसनेका

चन्दन चौका कंचन थारी । हीरालाल पदुमकी झारी ॥
बहुत भांति जेवनार बनाये । प्रेमप्रीति सो पारस कराये ॥
संत सुहैला भोजन पाई । सत्तसुकृत सतनाम गुसाई ॥

सुमिरन प्रसाद अर्पणेका

संत समाज धरती स्थूला । प्रसाद चढावें धर्म निर्मूला ॥
ओढे साल क्षमाके दीन्हा । सोई शब्द जो पावे चीन्हा ॥
नीर निरंतर अन्तर नेह । शब्द अगाध जो लागे देह ॥
कहैं कबीर चितजित जनि डरो । नाम सुमिरि जल अर्पण करो ॥

सुमिरन अचवन करनेका

करि प्रसादजल अचवन कीन्हा। अचवन करिके खर्चा लीन्हा ॥
दूत भूत सब गये पराय। जब टेके सतगुरुके पाय ॥

सुमिरन पाकर बन्दगी करनेका

बारी तेरी बलगई, पलमें सौ सौ बार।
सद्गुरु मोपर दाया करो, साहबकबीर सिरजनहार ॥

सुमिरन सुपारी मोरनेका

सेत सुपारी मोरके, अमीअंक लौलाय।
कहैं कबीर धर्म्मदाससे, हंस लोकको जाय ॥

सुमिरन पान खानेका

गुरुकबीरने बीरा दीन्हाँ। हँस बचाय कालसो कीन्हाँ ॥
सत्य लोकमें बैठे जाई। सत्त सुकृत जहँ पाप रहाई ॥
कहैं कबीर जे हंस उबारे। जरा मरण भव कष्ट निवारे ॥

सुमिरन टोपी लगानेका

तरे धरती ऊपर आकाश। चांद सूर्य दोउ पाट ॥
तेतिस कोट आगे पार। सोई जानो सतगुरुकी हाट ॥
नौनाथ चौरासी सिद्धजीत औघट बाँध।
धर्मदासके मस्तक दीन्हा, कबीर विराजे साथ ॥
बादशाह एक खूँटका, अखंड द्वीपके भूत।
दुवेश भूत ब्रह्माण्डके, सोई साधु गुरुरूप ॥

सुमिरन दीपक बारनेका

आदि अंत एक ज्योति है, स्थिरस्थीर है नीर ॥
आवे सत्यकबीरके शब्दकी छुरी। यम जालिमकी काटे गुरी ॥
धर्मदास कबीरके लागे पाई। बावन लाख दगा मिटि जाई ॥

सुमिरन आसन करनेका

सत्त पुरुषको सुमिरिके आसन करे बनाय ।
तापर हंसा पोढई, कबीर धर्म्मदास सहाय ॥

सुमिरन कमर कसनेका

धर्मदास कसना कसे, नाम पान लियहाथ ।
सत्यकबीर पहुँचावहीं, सकल सन्त लिय साथ ॥

सुमिरन रस्ता चलनेका

शिरपर साहब राखिके चलिये आज्ञा माँहि ।
आगे साहेब कबीर हांकदेत हैं, तीनलोक डरनाहिं ॥
कागकागरे विकार कूकरामंजार । नाग नाहर दूत भूत बट पार॥
सबको बांधि कबीर आन घाट ले डार ।
घाट बाट बन औघट मोहि खसमकी आस ।
मते चले कबीरके कबहु न होय निवास ॥

सुमिरन सात शिकारीका

अमीनाम, ऊर्द्ध नाम परिमल नाम, दयावन्त, बालदीप
सहज मूल अग्रमुनि सतनाम, साहबके अमीनाम, पुष्प
सुगंधकंठकीसिलानिगम्यसुगंधयोगजीतनिहंगमित ।

इति श्री षट्कर्म विधि नित्यकर्म सुमिरन